काव्य-संहिता

(भारतीय छंद विधा)

संकलन एवं आलेख

सुरेश चौधरी

शुक्तिका प्रकाशन

ISBN: 978-81-998530-0-3

शुक्तिका प्रकाशन

स्वामित्व: माइन्डस्टार वेलनेस्स प्राइवेट लिमिटेड

24 हेरिंगटन मेंसन , 8 हो-चि-मिन्ह सारणी

कोलकाता 700071

@सर्वाधिकार लेखकाधीन

मूल्य: 400/-

मुद्रक: मिश्का इन्फोटेक प्राइवेट लिमिटेड

कोलकाता ७०००४६,

प्रथम संस्करण : मार्च 2016

द्वितीय संस्करण : फरवरी 2026

BOOK: KAAVY-SANHITA (BHARTIY CHHAND VIDHA) BY SURESH CHOUDHARY

लेखकीय...................

काव्य लिखने के प्रयास के समय जब मैंने स्वयं अनुभव किया कि छंद शास्त्र की विधाओं का कोई सरल भाषा में ग्रन्थ उपलब्ध नहीं है, तब विचार किया कि क्यूँ न किसी ऐसी पुस्तक को लिखा जाय या संकलित किया जाय जिसमे सामान्य भाषा में मुख्य मुख्य छंदों के गठन का विधान बताया गया हो, गूगल से खंगाल-खंगाल कर बहुत से लेख, छंद विधा के विशेषज्ञों के, फेसबुक के कई साहित्यिक मंचों में हुई चर्चाओं का निष्कर्ष लिया, जो मुझे इतने दिनों के काव्य लेखन से प्राप्त हुआ, उस अनुभव को मैंने यहाँ संग्रहीत किया है, अतः पिंगल शास्त्र, छंद शास्त्र की प्रमाणिकता उन लेखकों पर निर्भर है। आशा है नवोदित लेखकों साहित्य प्रेमियों छात्रों को यह पुस्तक खास रुचिकर होंगी। पुस्तक लिखने के पश्चात् मैंने परम स्नेही कुमार गौरव अजितेंदु से विभिन्न विधाओं के परिमार्जन हेतु दी जिसने श्रम पूर्वक इस कार्य को पूर्ण किया मैं उसका आभारी हूँ। कोलकाता विश्व-विद्यालय की हिंदी विभाग की अध्यक्षा एवं कुल सचिव प्रो: सोमा बंदोपाध्याय जी ने पुस्तक की समीक्षा लिख पुस्तक को मान दिया। परम आदरणीय ओम नीरव जी ने पुस्तक में अपने आलेख सम्मलित करने की अनुमति दे एवं अपना व्यक्तव्य लिख पुस्तक को आशीर्वाद दिया। हिन्दी की प्रख्यात लेखिका एवं हिंदी की प्राचार्य दीपिका द्विवेदी दीप जी ने समीक्षा लिख पुस्तक का अनुमोदन किया।

प्रस्तुत पुस्तक में मैंने प्रायः सभी प्रंमुख छंदों को समाहित करने का प्रयास किया है, साथ ही आज कल हिंदी में चल रही अन्य विधाओं का भी समावेश किया है.

आशा है यह पुस्तक पाठकों के अनुकूल होगी।

===सुरेश चौधरी

विषय सूचि :

1. छन्द्कौमुदी:छन्दस काव्य साधना की अनुपम मार्ग दर्शिका ---ओम नीरव ५
2. एक गुलजार सृजन-दीपिका द्विवेदी दीप ७
3. प्रस्तावना ८
4. छंद: डॉ. योगेश रस्तोगी १६
5. कविता क्या है –आचार्य रामचंद्र शुक्ल २६
6. कविता-महेंद्र भटनागर २७
7. मुक्तक-भाष्कर रोशन ३०
8. मुक्तक परिचय- सुरेश चौधरी ३२
9. गद्य काव्य-सुरेश चौधरी ३४
10. भाषा एवं शब्दों का गठन-आचार्य संजीव कृष्ण सलिल ३७
11. मात्र की गणना-सुरेश चौधरी ४४
12. तुकांतता के नियम-सौरभ पांडे ४८
13. छंदों केप्रकर – सुरेश चौधरी ५०
14. मानस में विभिन्न छंदों का प्रयोग-सुरेश चौधरी ५३
15. हिंदी के मात्रिक छंद-आचार्य संजीव कृष्ण सलिल ६४
16. दोहा-सुरेश चौधरी ७०
17. चौपाई –सुरेश चौधरी ७८
18. मापनी युक्त मात्रिक छंद-ओम नीरव ८२
19. मापनी मुक्त मात्रिक छंद-ओम नीरव ९२
20. सवैया – सौरभ पाण्डेय १०८
21. घनाक्षरी-सौरभ पाण्डेय १३१
22. मनहरण-कवित्त-संजीव सलिल १३५
23. घनाक्षरी के प्रकार –सुरेश चौधरी १३८
24. कह मुकरियां – सौरभ पाण्डेय १४३
25. हिंदी विधा में कुछ अन्य प्रमुख छंद-सुरेश चौधरी १४८
26. गीतिका विधा –ओम नीरव १८०
27. और अब १८६
28. ग़ज़ल का गठन –सुरेश चौधरी १८७
29. ग़ज़ल को जानें- सतपाल ख्याल २०१
30. हायकू एक परिचय २०८
31. हायकू २०९
32. ५-७-५ विधा के विभिन्न रूप-सुरेश चौधरी २१७
33. अंत में –सुरेश चौधरी २१९

सन्दर्भ सूचि-------------------------------संलग्न

छंद कौमुदी : छांदस काव्य साधना की अनुपम मार्गदर्शिका

छंद साधना के लिए समर्पित समर्थ रचनाकार सुरेश चौधरी ‘इन्दु’ जी की कृति ‘छंद कौमुदी’ भारतीय छंद एवं छांदस काव्य विधान की अनुपम मार्गदर्शिका के रूप में सर्वथा स्वागत योग्य है। इस कृति में भारतीय छंद विधान के साथ अन्य छांदस

काव्य विधाओं का सम्यक निरूपण किया गया है। कृतिकार की यह सदाशयता है कि उन्होंने अपने आलेखों के साथ अनेक अन्य छंद-साधकों के आलेखों का इस कृति में समावेश कर उन्हें भी भरपूर सम्मान दिया है। ‘प्रस्तावना’ में आपने छंदों की उत्पत्ति के संबंध में पौराणिक धारणा, काव्य की परिभाषा, काव्य के भेद आदि का सरल सुबोध शैली में प्रतिपादन किया है, जो उपयोगी होने के साथ बहुत रोचक भी है। डॉ योगेश रस्तोगी जी के ‘छंद’ शीर्षक आलेख में छंद के स्वरूप को स्पष्ट करने के साथ छंदों के पारंपरिक वर्गीकरण तथा मात्रिक और वर्णिक छंदों की प्रकृति को बहुत सुंदरता से सोदाहरण समझाया गया है। हिन्दी साहित्य के प्रख्यात समालोचक आचार्य राम चन्द्र शुक्ल जी की अनमोल टिप्पणी ‘कविता क्या है’ के साथ कवि महेंद्र भटनागर जी के आलेख ‘कविता’ में कविता के विभिन्न घटकों का सम्यक निरूपण रचनाधर्मियों के लिए दिशाबोधक है। भास्कर रौशन जी का आलेख ‘मुक्तक’ जहाँ एक ओर मुक्तक के पारंपरिक स्वरूप का उल्लेख करता है वहीं कृतिकार एवं संपादक सुरेश चौधरी ‘इन्दु’ जी का आलेख ‘मुक्तक परिचय’ इस विधा के समकालीन एवं व्यावहारिक स्वरूप का प्रतिपादन करता है। ‘गद्य काव्य’ पर सुरेश चौधरी का आलेख इस विधा के कल और आज को सजीवता से चित्रित करता है।

आचार्य संजीव कृष्ण सलिल जी प्रणीत आलेख ‘भाषा एवं शब्दों का गठन’ में काव्य के अवयवी तत्वों का विदग्धता के साथ विश्लेषण किया गया है और यह आलेख छांदस काव्य साधकों के लिए विशेष उपयोगी है। ‘मानस' में विभिन्न छंदों का प्रयोग’ शीर्षक ‘इन्दु’ जी का आलेख खोजपूर्ण है और महाकवि तुलसीदास की विलक्षण छंद सामर्थ्य का परिचायक है।

समग्रतः देखा जाये तो विभिन्न आलेखों के माध्यम से सभी प्रकार के छंदों की जानकारी को कृतिकार 'इन्दु'जी ने जिज्ञासु पाठकों के लिए अतीव सुरुचिपूर्ण ढंग से परोसा है, जिसमें आचार्य संजीव कृष्ण सलिल जी और सौरभ पाण्डेय जी के आलेख विशेष भूमिका के साथ अवतरित हुए हैं। मेरे लिए यह सौभाग्य की बात है इन श्रेष्ठ आलेखों के बीच मापनीयुक्त और मापनीमुक्त छंदों के साथ-साथ नव निर्धारित 'गीतिका विधा' पर मेरे आलेखों को भी स कृति में स्थान दिया गया है।

यह कृति रचनाकारों के लिए इस दृष्टि से विशेष उपयोगी हो जाती है कि इसमें पारंपरिक हिन्दी छंदों के अतिरिक्त अन्य काव्य विधाओं का भी विधिवत समावेश किया गया है और उनका विस्तृत परिचय अधिकारी लेखकों के माध्यम से दिया गया है। ऐसी काव्य विधाओं में ग़ज़ल, गीतिका, हाइकू, कहमुकरी, गद्यकाव्य आदि का नाम विशेषतः उल्लेखनीय है।

इस कृति के सम्पादन में इन्दु जी ने विभिन्न लेखकों के विचारों पर अपनी कोई टिप्पणी न करते हुए उनका यथावत समावेश किया है और इस प्रकार आपने चयन और समन्वय का दायित्व सुधी पाठकों के विवेक पर छोड़ दिया है। इन्दु जी की यह शैली चिंतन-मनन को उद्दीपित करती है और नवीन संभावनाओं के लिए उन्मुक्त वातावरण का सृजन करती है।

मेरा विश्वास है कि यह कृति रचनाकारों, समीक्षकों और सुधी पाठकों के लिए ज्ञानवर्धक, सृजनोपयोगी और दिशाबोधक सिद्ध होगी। कृति और कृतिकार के उज्ज्वल भविष्य के लिए मेरी हार्दिक शुभकामनाएँ।

ओम नीरव, लखनऊ
संस्थापक-संरक्षक 'कवितालोक'
१५ मार्च २०१६

एक गुलजार सृजन.........

मेरे परम स्नेही आदरणीय सुरेश दा की पुस्तक “छंद कौमुदी" का जब मैंने रसास्वादन किया तो स्वभावत: पुलकित मन अनुभव करने लगा कि वर्षों से साहित्य-यज्ञ में आहूति दे रहे कलम के इस सिपाही की तपस्या से प्रसन्न माँ शारदा स्वयं आशीष देने उपस्थित हुई हो। पुस्तक का नामकरण ही प्रथम दृष्टि में ही मुग्ध करने में समर्थ है. इस संग्रह को प्रकाशित करवाने में जल्द बाजी न कर मनोयोग पूर्वक परिश्रम पश्चात का ही निर्णय स्वागत योग्य सिद्ध हुआ है एवं निश्चित रूप से ये रचनाकार के चिंतन शील व्यक्तित्व का परिचायक है लेखक का ये प्रयास परमार्थ की श्रेणी में माना जा सकता है, क्योंकि इसे सृजक की पीड़ा का अनुभव कर उसके लिये नवीन पथ प्रदर्शक के रूप में प्रस्तुत किया गया है। इसमें प्राचीन से प्राचीन छंद को भी न केवल स्थान दिया है, अपितु उसके सरल सूत्र दे कर अत्यधिक सरल, सरस ही नहीं वरन रुचिकर बना दिया है, जिसे प्रयास पूर्वक सीखा जा सकता है। मैं इस कृति को यदि अपने शब्द देना चाहूँ तो सिर्फ यही कहना चाहूंगी कि “छंद कौमुदी" छंद साहित्य-संसार का एक ऐसा गुलजार सृजन है, जहाँ से नवोदित साहित्यकार मन व साहित्य पिपासु जन वांछित पुष्प चयन कर अपना यथेच्छ काव्य पथ सुरभित कर सकता है। मेरा आत्म-विश्वास सत्य साबित होगा कि ये कृति न केवल सृजन धर्मियों, जिज्ञासु पाठकों व ज्ञान साधकों के काव्य रथ को आगे बढ़ाएगा, अपितु छंद शास्त्र की दुरूहता से घबरा कर इससे विमुख नव सृजनकर्ताओं को पुन: हमारे प्राचीन छंदबद्ध काव्य-सृजन की ओर आकर्षित कर साहित्य समाज में अपना स्थान सुरक्षित रखने में समर्थ रहेगी। अपनी अथक साहित्य साधना से हिंदी के धूमायित क्षितिज पर प्राचीन छंद शास्त्र की रेखाएँ रजत सी चमकेगी। आप निरंतर इसी प्रकार साहित्य यात्रा में रत रह माँ भारती की साधना में लीन हो सृजन करे, आपके द्वारा प्रकाशन की ये धारा अविरल प्रवाहित हो हम शीघ्र ही आपके अन्य संग्रह का रसास्वादन कर सके यही मंगल कामना है।

श्रीमती दीपिका द्विवेदी "दीप "

प्रधानाचार्य

राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालय , वरदा डूंगरपुर (राजस्थान)

प्रस्तावना

सर्वप्रथम जब वेदों की रचना हुई तो यह मानकर हुई की भावना के सम्प्रेषण के तीन साधन हैं एक गद्य, दूसरा पद्य और तीसरा गान। इन तीन साधनों से अनुभवजनित तीन वेदों को रचा गया, जिनमें सामवेद गान के माध्यम से कहा गया, ऋग्वेद पद्यात्मक ढंग से पढ़ा जाता है एवं अथर्ववेद गद्यात्मक ढंग से पढ़ने का नियम है। पुनः ऋषियों ने विचार किया कि गान जब तक पद्यात्मक ढंग से न हो तो भाव एवं ज्ञान प्रेषित नहीं हो सकते। अतः पद्य को महत्त्व दिया गया क्योंकि जो भाव गद्य में अनेक शब्दों द्वारा कहा जाता है वह ही भाव पद्य में कुछ शब्दों में ही दे दिया जाता है। वेदों का लेखन इसी प्रकार किया गया, जिसमे मुख्यतः ८ प्रकार के छंदों का प्रयोग हुआ, यहीं से छंद का आरंभ हुआ जो बाद में पिंगल ऋषि ने पाणिनि की अष्टाध्यायी व्याकरण को आधार मानकर वृहत छंद शास्त्र का निर्माण किया।

पुराणों में वर्णित है कि प्रथम शब्द ॐ शंकर जी के डमरू से निकला फिर सप्त सुरों का निर्माण हुआ एवं इन सप्तसुरों से गायन विधा बनी एवं छंद विधा इस गायन विधा की ही विस्तारण है।

एक मान्यता के अनुसार छंद का प्रथम निर्माण वाल्मीकि ऋषि ने किया

"माँ निषाद प्रतिष्ठां त्वं गम: शाश्वती समां:।

यत्क्रौंचमिथुनादेकमवधि: काममोहितम्।।" यह **अनुष्टप छंद** वाल्मीकि के मुख से निकला हुआ **प्रथम छंद** है, जो शोक के कारण सहसा श्लोक के रूप में प्रकट हुआ। यदि इस किंवदंती को मान लिया जाए, तो छंद की रचना पहले हुई और छंदशास्त्र उसके पश्चात् आया। वाल्मीकीय रामायण में अनुष्टुप छंद का प्रयोग आद्योपांत हुआ ही है, अन्य उपजाति आदि का भी प्रयोग प्रचुर मात्रा में प्राप्त होता है।

एक अन्य किंवदंती यह है कि छंदशास्त्र के आदि आविष्कर्ता भगवान् शेष हैं। एक बार गरुड़ ने उन्हें पकड़ लिया। शेष ने कहा कि हमारे पास एक अप्रतिम विद्या है जो आप सीख लें, तदुपरांत हमें खाएँ। गरुड़ ने कहा कि आप बहाने बनाते हैं और स्वरक्षार्थ हमें विभ्रमित कर रहे हैं। शेष ने उत्तर दिया कि हम असत्य भाषण नहीं करते। इसपर गरुड़ ने स्वीकार कर लिया और शेष उन्हें छंदशास्त्र का उपदेश करने लगे। विविध छंदों के रचनानियम बताते हुए अंत में शेष ने "**भुजंगप्रयाति**" छंद का नियम बताया और शीघ्र ही समुद्र में प्रवेश कर गए। गरुड़ ने इस पर कहा कि तुमने

हमें धोखा दिया, शेष ने उत्तर दिया कि हमने जाने के पूर्व आपको सूचना दे दी। **चतुर्भिमकारे भुजंगप्रयाति** अर्थात चार गणों से भुजंग प्रयात छंद बनता है और प्रयुक्त होता है। इस प्रकार छंदशास्त्र का आविर्भाव हुआ। इससे प्रतीत होता है कि छंदशास्त्र एक दैवी विद्या के रूप में प्रकट हुआ। इस प्रकार भी कहा जा सकता है कि इसके आविष्ककर्ता शेष नामक कोई आचार्य थे, जिनके विषय में इस समय कुछ विशेष ज्ञान और सूचना नहीं है। इसके पश्चात् कहा जाता है कि शेष ने अवतार लेकर पिंगलाचार्य के रूप में छंदसूत्र की रचना की, जो पिंगलशास्त्र कहा जाता है। यह ग्रंथ सूत्रशैली में लिखा गया है और इस समय तक उपलब्ध है। इस पर टीकाएँ तथा व्याख्याएँ हो चुकी हैं। यही छंदशास्त्र का सर्वप्रथम ग्रंथ माना जाता है। इसके पश्चात् इस शास्त्र पर संस्कृत साहित्य में अनेक ग्रंथों की रचना हुई।

छंदशास्त्र के रचियताओं को दो श्रेणियों में विभक्त किया जा सकता है: एक आचार्य श्रेणी, जो छंदशास्त्र का शास्त्रीय निरूपण करती है और दूसरी कवि श्रेणी, जो छंदशास्त्र पर पृथक् रचनाएँ प्रस्तुत करती है। थोड़े समय के पश्चात् एक लेखक श्रेणी और प्रकट हुई जिनमें ऐसे लेखक आते हैं जो छंदों के नियमादिकों की विवेचना अपनी ओर से करते हैं किंतु उदाहरण दूसरे के रचे हुए तथा प्रचलित अंशों से उद्धृत करते हैं। हिंदी में भी छंदशास्त्र पर अनेक ग्रंथ लिखे गए हैं।

लगभग ३००० वर्ष पहले लिखे प्राचीन भारतीय काव्यशास्त्र के अनुसार काव्य ऐसी रचना है जिसके शब्दों-अर्थों में दोष कदापि न हो, गुण अवश्य हों चाहें अलंकार कहीं कहीं पर भी न हो। दिग्गज काव्याचार्यों ने काव्य को रमणीय अर्थमय चित्त को लोकोत्तर आनंद देने में समर्थ, रसमय वाक्य, काव्य को शोभा तथा धर्म को अलंकार, रीति (गुणानुकूल शब्द विन्यास/ छंद) को काव्य की आत्मा, वक्रोक्ति को काव्य का जीवन, ध्वनि को काव्य की आत्मा, औचित्यपूर्ण रस-ध्वनिमय, कहा है। काव्य (ग्रन्थ} या कविता (पद्य रचना) श्रोता या पाठक को अलौकिक भावलोक में ले जाकर जिस काव्यानंद की प्रतीति कराती है वह वस्तुतः शब्द, अर्थ, रस, अलंकार, रीति, ध्वनि, वक्रोक्ति, वाग्वैधग्ध तथा औचित्य की समन्वित–समन्वित अभिव्यक्ति है |

वेद, जो कि सनातन माने गये हैं और जिनका भारतीय जनमानस पर गहरा प्रभाव है उनका ही एक अंग है।

छंद शास्त्र- ***"छंदः पादौ तु वेदस्य"।*** वैसे वेदों को समस्त विद्याओं का आदिस्त्रोत माना जाता है। यहाँ ये स्पष्ट कर देना उचित प्रतीत होता है कि कविता बिना छंदों के भी लिखी जा सकती है, लोग लिखते भी हैं, पर छंद रचना को आयु प्रदान करता है और "कवि" को "सुकवि" बनाने में सहायक होता है।

छंद की प्रेरणा कहाँ से मिली?

मनुष्य की प्रेरणा का आदि स्रोत सदैव प्रकृति रही है। प्रकृति के साम्राज्य में चीजें एक निश्चित विधान के अनुसार घटित होती हैं- रात, फिर दिन, फिर रात, वसंत फिर ग्रीष्म फिर वर्षा आदि। प्रकृति के सान्निध्य में मनुष्य ने ब्रह्मांड में व्याप्त इस नियम को, इस क्रमिक व्यवस्था को पहचाना। और इसमें कोई आश्चर्य नहीं कि जब तमसा नदी के तट पर संसार का सबसे पहला काव्य सृजित हुआ तो उसका रचयिता जनमानस से दूर प्रकृति के ही सान्निध्य में रहनेवाला एक ऋषि था जिससे उसके हृदय की संवेदना ने श्लोक कहलवा दिया-

मा निषाद प्रतिष्ठां त्वमगमः शाश्वतीसमाः
यत्क्रौंच मिथुनात्मेकमवधीः काममोहितम ------ दुहराव है पृष्ठ ८

इस तरह से प्रारंभ हुआ संसार का सर्वप्रथम काव्य रामायण और वाल्मीकि आदिकवि हुये।

छंद शास्त्र के आचार्य

इस संबंध में संस्कृत में काफ़ी काम हुआ है और इस सिलसिले में सबसे पहला नाम **आचार्य पिंगल** का आता है। इनकी पुस्तक **"छंदःसूत्रम"** को आज भी विषय की सर्वाधिक प्रामाणिक रचना होने का गौरव प्राप्त है। अन्य परवर्ती आचार्यों में नाट्यशास्त्र के रचयिता भरत, ज्योतिषाचार्य वाराहमिहिर, अग्निपुराण, श्रुतबोध के रचयिता कालिदास, सुवृत्ततिलक के रचयिता आचार्य क्षेमेंद्र, छंदोऽनुशासन के

रचयिता हेमचंद्र, वृत्तरत्नाकर के रचयिता केदारभट्ट, छंदोमंजरी के रचयिता गंगादास तथा वाणीभूषण के रचयिता दामोदर आदि का नाम मुख्य रूप से उल्लेखनीय है, जिन्होंने अपनी इन पुस्तकों में इस विधा पर प्रकाश डाला है। हिंदी की प्रमुख पुस्तकों में भूषण चंद्रिका, छंदोऽर्णव एवं छंद प्रभाकर आदि का नाम लिया जा सकता है।

काव्य लिखने के पहले यह समझना आवश्यक है कि काव्य क्या है, कितने प्रकार के होते हैं, यदि हम यह प्रारंभिक जानकारी नहीं रखेंगे तो काव्य नहीं लिख पाएंगे, आईये सबसे पहले काव्य के प्रकारों को देखते हैं, फिर देखते हैं वरिष्ठ साहित्यकार विशेषज्ञों के क्या विचार है।

कविता या काव्य मुख्य रूप से तीन प्रकार के होते हैं :

कविता छंद बद्ध

मुक्तक

गद्य कविता

पुनः छंद कविता को अनेक विभागों में विभाजित किया गया है जिसका विवरण आने वाले अध्यायों में करेंगे।

संस्कृत से काव्य शास्त्र का निरूपण

सामान्यत: संस्कृत के काव्य-साहित्य के दो भेद किये जाते हैं-**दृश्य और श्रव्य।** दृश्य काव्य शब्दों के अतिरिक्त पात्रों की वेशभूषा, भावभंगिमा, आकृति, क्रिया और अभिनय द्वारा दर्शकों के हृदय में रसोन्मेष कराता है। दृश्यकाव्य को 'रूपक' भी कहते हैं क्योंकि उसका रसास्वादन नेत्रों से होता है। श्रव्य काव्य शब्दों द्वारा पाठकों और श्रोताओं के हृदय में रस का संचार करता है। श्रव्यकाव्य में पद्य, गद्य और **चम्पू** काव्यों का समावेश किया जाता है। गत्यर्थक में पद् धातु से निष्पन 'पद्य' शब्द गति की प्रधानता सूचित करता है। अत: पद्यकाव्य में ताल, लय और छन्द की व्यवस्था होती है। पुन: पद्यकाव्य के दो उपभेद किये जाते हैं—**महाकाव्य** और

खण्डकाव्य। खण्डकाव्य को 'मुक्तकाव्य' भी कहते हैं। खण्डकाव्य में महाकाव्य के समान जीवन का सम्पूर्ण इतिवृत्त न होकर किसी एक अंश का वर्णन किया जाता है—

***खण्डकाव्यं भवेत्काव्यस्यैकदेशानुसारि च।* – साहित्यदर्पण, ६/३२१**

कवित्व के साथ-साथ संगीत से जुड़े होने के कारण इनको हिन्दी में **'गीतिकाव्य'** भी कहते हैं। 'गीति' का अर्थ हृदय की रागात्मक भावना को छन्दोबद्ध रूप में प्रकट करना है। गीति की आत्मा भावातिरेक है। अपनी रागात्मक अनुभूति और कल्पना के कवि वर्ण्यवस्तु को भावात्मक बना देता है। गीतिकाव्य में काव्यशास्त्रीय रूढ़ियों और परम्पराओं से मुक्त होकर वैयक्तिक अनुभव को सरलता से अभिव्यक्त किया जाता है। स्वरूपत: गीतिकाव्य का आकार-प्रकार महाकाव्य से छोटा होता है। इन सब तत्त्वों के सहयोग से संस्कृत मुक्तककाव्य को एक उत्कृष्ट काव्यरूप माना जाता है। मुक्तकाव्य महाकाव्यों की अपेक्षा अधिक लोकप्रिय हुए हैं।

संस्कृत में गीतिकाव्य मुक्तक और प्रबन्ध दोनों रूपों में प्राप्त होता है। प्रबन्धात्मक गीतिकाव्य का सर्वोत्कृष्ट उदाहरण मेघदूत है। अधिकांश प्रबन्ध गीतिकाव्य इसी के अनुकरण पर लिखे गये हैं। मुक्तक वह है जिसमें प्रत्येक पद्य अपने आप में स्वतंत्र होता है। इसके सुन्दर उदाहरण अमरूकशतक और भतृहरिशतकत्रय हैं। संगीतमय छन्द मधुर पदावली गीतिकाव्यों की विशेषता है। श्रृंगार, नीति, वैराग्य और प्रकृति इसके प्रमुख प्रतिपाद्य विषय है। नारी के सौन्दर्य और स्वभाव का स्वाभाविक चित्रण इन काव्यों में मिलता है। उपदेश, नीति और लोकव्यवहार के सूत्र इनमें बड़े ही रमणीय ढंग से प्राप्त हो जाते हैं। यही कारण है कि मुक्तकाव्यों में सूक्तियों और सुभाषितों की प्राप्ति प्रचुरता से होती है।

मुक्तककाव्य की परम्परा स्फुट सन्देश रचनाओं के रूप में वैदिक युग से ही प्राप्त होती है। ऋग्वेद में सरमा नामक कुत्ते को सन्देशवाहक के रूप में भेजने का प्रसंग है। वैदिक मुक्तककाव्य के उदाहरणों में वशिष्ठ और वामदेव के सूक्त, उल्लेखनीय हैं। रामायण, महाभारत और उनके परवर्ती ग्रन्थों में भी इस प्रकार के स्फुट प्रसंग विपुल मात्रा में उपलब्ध होते हैं। कदाचित् महाकवि वाल्मीकि के शाकोद्गारों में यह भावना छुपी हुई रही है। पति के वियोग में प्रवासिनी सीता के प्रति प्रेषित श्री राम के संदेशवाहक हनुमान, दुर्योधन के प्रति धर्मराज युधिष्ठिर द्वारा प्रेषित श्रीकृष्ण और सुन्दरी दयमन्ती के निकट राजा नल द्वारा प्रेषित सन्देशवाहक हंस इसी परम्परा के

अन्तर्गत गिने जाने वाले प्रसंग हैं। इस सन्दर्भ में भागवत पुराण का वेणुगीत विशेष रूप से उद्धरणीय है जिसकी रसविभोर करने वाली भावना छवि संस्कृत मुक्तककाव्यों पर अंकित है।

कविता या काव्य क्या है

इस विषय में भारतीय साहित्य में आलोचकों की बड़ी समृद्ध परंपरा है— आचार्य विश्वनाथ, पंडितराज जगन्नाथ, पंडित अंबिकादत्त व्यास, आचार्य श्रीपति, भामह आदि संस्कृत के विद्वानों से लेकर आधुनिक आचार्य रामचंद्र शुक्ल तथा जयशंकर प्रसाद जैसे प्रबुद्ध कवियों और आधुनिक युग की मीरा महादेवी वर्मा ने कविता का स्वरूप स्पष्ट करते हुए अपने अपने मत व्यक्त किए हैं। *विद्वानों का विचार है कि मानव हृदय अनन्त रूपात्मक जगत के नाना रूपों, व्यापारों में भटकता रहता है, लेकिन जब मानव अहं की भावना का परित्याग करके विशुद्ध अनुभूति मात्र रह जाता है, तब वह मुक्त हृदय हो जाता है। हृदय की इस मुक्ति की साधना के लिए मनुष्य की वाणी जो शब्द विधान करती आई है उसे कविता कहते हैं।* कविता मनुष्य को स्वार्थ सम्बन्धों के संकुचित घेरे से ऊपर उठाती है और शेष सृष्टि से रागात्मक सम्बंध जोड़ने में सहायक होती है। काव्य की अनेक परिभाषाएँ दी गई हैं। ये परिभाषाएं आधुनिक हिंदी काव्य के लिए भी सही सिद्ध होती हैं। काव्य सिद्ध चित्त को अलौकिक आनंदानुभूति कराता है तो हृदय के तार झंकृत हो उठते हैं। काव्य में सत्यं शिवं सुंदरम् की भावना भी निहित होती है। जिस काव्य में यह सब कुछ पाया जाता है वह उत्तम काव्य माना जाता है।

काव्य के भेद

काव्य के दो प्रकार के भेद हैं:

स्वरूप के अनुसार काव्य के भेद और शैली के अनुसार काव्य के भेद

स्वरूप के अनुसार काव्य के भेद

स्वरूप के आधार पर काव्य के दो भेद हैं - श्रव्यकाव्य एवं दृश्य काव्य।

श्रव्य काव्य

जिस काव्य का रसास्वादन दूसरे से सुनकर या स्वयं पढ़ कर किया जाता है उसे श्रव्य काव्य कहते हैं। जैसे रामायण और महाभारत।
श्रव्य काव्य के भी दो भेद होते हैं - प्रबन्ध काव्य तथा मुक्तक काव्य।

प्रबंध काव्य

इसमें कोई प्रमुख कथा काव्य के आदि से अंत तक क्रमबद्ध रूप में चलती है। कथा का क्रम बीच में कहीं नहीं टूटता और गौण कथाएँ बीच-बीच में सहायक बन कर आती हैं। जैसे रामचरित मानस।
प्रबंध काव्य के दो भेद होते हैं - महाकाव्य एवं खण्डकाव्य।

1- *महाकाव्य* इसमें किसी ऐतिहासिक या पौराणिक महापुरुष के संपूर्ण जीवन कथा का आद्योपांत वर्णन होता है। महाकाव्य में ये बातें होनी आवश्यक हैं-
महाकाव्य का नायक कोई पौराणिक या ऐतिहासिक हो और उसका यशस्वी, वीर होना आवश्यक है।
जीवन की संपूर्ण कथा का सविस्तार वर्णन होना चाहिए।
श्रृंगार, वीर और शांत रस में से किसी एक की प्रधानता होनी चाहिए। यथास्थान अन्य रसों का भी प्रयोग होना चाहिए।
उसमें सुबह-शाम, दिन-रात, नदी-नाले, वन, पर्वत, समुद्र आदि प्राकृतिक दृश्यों का स्वाभाविक चित्रण होना चाहिए।
आठ या आठ से अधिक सर्ग होने चाहिए, प्रत्येक सर्ग के अंत में छंद परिवर्तन होना चाहिए तथा सर्ग के अंत में अगले अंक की सूचना होनी चाहिए।

2- *खंडकाव्य* इसमें किसी की संपूर्ण जीवनकथा का वर्णन न होकर केवल जीवन के किसी एक ही भाग का वर्णन होता है। खंड काव्य में ये बातें होना आवश्यक हैं-
कथावस्तु काल्पनिक हो।
उसमें सात या सात से कम सर्ग हों।
उसमें जीवन के जिस भाग का वर्णन किया गया हो वह अपने लक्ष्य में पूर्ण हो।
प्राकृतिक दृश्य आदि का चित्रण देश काल के अनुसार और संक्षिप्त हो।

मुक्तक

इसमें केवल एक ही पद या छंद स्वतंत्र रूप से किसी भाव या रस अथवा कथा को प्रकट करने में समर्थ होता है। गीत कवित्त दोहा आदि मुक्तक होते हैं।

दृश्य काव्य

जिस काव्य की आनंदानुभूति अभिनय को देखकर एवं पात्रों से कथोपकथन को सुन कर होती है उसे दृश्य काव्य कहते हैं। जैसे नाटक में या चलचित्र में।

शैली के अनुसार काव्य के भेद

1- पद्य काव्य - इसमें किसी कथा का वर्णन काव्य में किया जाता है, जैसे कामायनी।

2- गद्य काव्य - इसमें किसी कथा का वर्णन गद्य में किया जाता है, जैसे रवींद्रनाथ टैगोर की गीतांजलि। गद्य में काव्य रचना करने के लिए कवि को छंद शास्त्र के नियमों से स्वच्छंदता प्राप्त होती है।

3- चंपू काव्य - इसमें गद्य और पद्य दोनों काव्यों का समावेश होता है। मैथिलीशरण गुप्त की 'यशोधरा' चंपू काव्य है।

इस प्रकार साहित्यानुगत काव्य को जानने का प्रयत्न किया गया है, यूँ तो भारतीय छंद एवं काव्य विधा इतनी विशाल है की जितना खंगालो उतना रस प्राप्त होता है एवं कोई भी पूर्णतः यह नहीं कह सकता है की वह पूर्ण जानकार है, परवर्ती अध्यायों में हम छंद के विभिन्न भेदों को विस्तार से जानने का प्रयत्न करेंगे एवं विषय के विशेषज्ञों की राय भी पढ़ेंगे।

छंद

लेखक: डॉ० योगेश रस्तोगी

भावों की अभिव्यक्ति का सबसे सशक्त, सरस एवं प्रभावोत्पादक माध्यम कविता है और छंद कविता का महत्वपूर्ण अंग होता है। यह काव्य में सरसता और संगीतात्मकता का मूल स्रोत है। संगीत पर आधारित होने के कारण इसमें मानव हृदय को झंकृत एवं आह्लादित करने की अद्भुत क्षमता होती है। छंद वह साँचा होता है जिसमें ढली रचना में स्वर ध्वनियाँ, मात्राओं का क्रम, गति, यति तथा चरणांत की समानता मिलकर ऐसा सौन्दर्य उत्पन्न करती हैं कि कविता में अनायास प्रवाह, लय, सगीतात्मकता तथा गेयता उत्पन्न हो जाती है। अतः कविता और छंद में अटूट संबंध होता है। जैसे कि प्रमाण उपलब्ध हैं वैश्विक काव्य-साहित्य आदिकाल से ही छंद बद्ध रूप में रचा जाता रहा है। छंद भारतीय आर्य भाषा परिवार की उतनी प्राचीन परंपरा है जितनी ज्ञान की अन्य शाखाएँ हैं। भारत के प्राचीनतम लिपिबद्ध आलेख वेद हैं और वेदों का सम्यक ज्ञान प्राप्त करने के लिए वेदांगों का अध्ययन अनिवार्य है, ऐसा प्राचीन मनीषी कहते हैं। वेदांगों की संख्या छः है: 1) शिक्षा 2) कल्प 3) ज्योतिष 4) व्याकरण 5) निरुक्त और 6) छंद। यजुर्वेद को छोड़कर शेष तीनों संहिताओं में छंदों का प्रयोग किया गया है। यजुर्वेद गद्य में लिखित है।

छंद-शास्त्र की व्युत्पत्ति एवं विकास से सम्बद्ध प्रासंगिक उल्लेख के अनुसार छंद की व्युत्पत्ति- परक व्याख्या सर्वप्रथम 'यास्क' ने प्रस्तुत की है। इनके पश्चात 'कात्यायन' ने छंद को परिभाषित किया। वैदिक एवं संस्कृत छंदों पर विचार करने वाले प्रथम विद्वान को 'पिंगल' मुनि के नाम से जाना जाता है। पिंगल के पश्चात जयदेव का लिखा ग्रंथ 'जयदेव छंदस' छंद-शास्त्र से जुड़ा एक महत्त्वपूर्ण ग्रंथ है। इनके बाद विभिन्न कालखण्डों में अलग-अलग विद्वानों ने छंद और काव्य में उनकी महत्ता पर अपने-अपने ढंग से प्रकाश डाला है तथा छंद शास्त्र की परंपरा का अवलोकन करने पर यह तथ्य सामने आता है कि प्राचीन काल से आधुनिक काल के पूर्व तक काव्य में छंद की अनिवार्यता का सिद्धान्त मान्य रहा है। वैदिक साहित्य से विदित होता है कि उस समय भी शास्त्र-बद्ध छंदों के अतिरिक्त यदा-कदा शास्त्र-मुक्त छंदों का भी प्रयोग हुआ करता था। इसमें (शास्त्र-मुक्त) विशेष यह कि यहाँ भी स्वर, लय का एक व्यवस्थित क्रम संगीतात्मकता उत्पन्न करता था।

हिन्दी साहित्य के आधुनिक काल में सर्वप्रथम आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने परंपरागत मात्रिक छंदों के साथ–साथ संस्कृत के वर्ण-वृत्तों को अपनाने के लिए कवियों को प्रेरित किया। उन्होंने तुकांत के साथ-साथ अतुकांत काव्य रचना करने पर भी ज़ोर दिया। आचार्य द्विवेदी से प्रेरित होकर सर्वप्रथम अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध' तथा मैथिलीशरण गुप्त ने संस्कृत के वर्ण-वृत्तों में काव्य रचना प्रारम्भ की। आधुनिक युग में सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' ने भी शास्त्र बद्ध छंदों का विरोध करते हुए छंद के पूर्व निर्धारित साँचे के प्रतिबंध और बंधन को अस्वीकारा है, परंतु काव्य में छंद अथवा मुक्त छंद अर्थात स्वछंद छंद से उन्हें कोई परहेज नहीं हैं। काव्य में छंद की उपयोगिता के विषय में उनका मानना था कि "मनुष्यों की मुक्ति की तरह कविता की भी मुक्ति होती है। मनुष्यों की मुक्ति कर्मों के बंधन से छुटकारा पाना है, और कविता की मुक्ति छंदों के शासन से अलग हो जाना। _ _ _ मुक्त काव्य (मुक्त छंद काव्य) कभी साहित्य के लिए अनर्थकारी नहीं होता, किन्तु उससे साहित्य में एक प्रकार की स्वाधीन चेतना फैलती है, जो साहित्य के कल्याण की ही मूल होती है। निराला का मुक्त छंद कवि और कविता की मुक्ति होते हुए भी है छंद ही, बस उनका मुक्त छंद सभी बंधनों से मुक्त कवि हृदय की प्रवाहात्मक अभिव्यक्ति है और उनके इस मुक्त छंद का सौन्दर्य संगीत में नहीं, पढ़ने की कला पर आश्रित है। वे स्वयं अपने इस स्वछंद छंद की उपयोगिता मंच पर ही स्वीकारते है।

छंद के भेद:

सामान्यतः छंद के दो भेद माने जाते हैं:

क) वार्णिक

ख) मात्रिक

वर्ण: एक सम्पूर्ण ध्वनि को वर्ण की संज्ञा दी जाती है। वर्ण, वार्णिक छंद के मूलाधार स्वीकार किए गए हैं। इसमें स्वर की ह्रस्वता तथा दीर्घता का कोई महत्त्व नहीं होता। उ (ह्रस्व) और ऊ (दीर्घ) दोनों अलग-अलग एक ही वर्ण के रूप में स्वीकार्य हैं। इसमें संयुक्ताक्षरों को भी एक वर्ण ही माना जाता है जैसे: क्यों, ज्यों इत्यादि।

मात्रा: छंद में मात्रा का अभिप्राय स्वरों की इकाई से है। किसी भी ध्वनि के उच्चारण में काल की लघुत्तम इकाई को मात्रा कहा जाता है। जैसे अ, इ, उ,ऋ ह्रस्व इकाइयाँ है। इनके उच्चारण में जो समय लगता है वही मात्रा कहलाता है। इसी तरह आ, ई, ऊ, ऐ, ओ, औ दीर्घ स्वर हैं इनके उच्चारण में लगने वाला समय ह्रस्व स्वरों के उच्चारण में लगने वाले समय से लगभग दोगुना है। अतः दीर्घ स्वर दो मात्राओं वाले स्वर हैं। छंद के चरणों में इनकी मात्राओं की संख्या की गणना करना ही मात्रा-विचार कहलाता है।

वार्णिक छंद:

जिनमें अक्षरों या गण की संख्या या क्रम के हिसाब से लय-गति पैदा होती है, उन्हें वार्णिक छंद कहते हैं वार्णिक छंद के प्रकार:

क) **समवार्णिक छंद:** जिन छंदों के सभी चरणों में गणों अथवा वर्णों की संख्या समान हों, उसे समवार्णिक छंद कहते हैं।

ख) **अर्द्धसमवार्णिक छंद**: जिस छंद के पहले-तीसरे या दूसरे-चौथे चरणों में अक्षरों या गणों के क्रम में समानता हो वहाँ अर्द्धसमवार्णिक छंद होता है।

ग) **विषम वार्णिक छंद:** वे वार्णिक छंद जिनके प्रत्येक चरण में अक्षरों की संख्या बराबर न हो, वे विषम वार्णिक छंद कहलाते हैं।

मात्रिक छंद:

जिन छंदों में मात्राओं की संख्या के हिसाब से चरणों (पंक्तियों) में लय और संगीतात्मक गति उत्पन्न की जाती है, उन्हें मात्रिक छंद कहते हैं। मात्रिक छंद के प्रकार :

क) **सममात्रिक छंद:** जिन छंदों के सभी चरण समान मात्राओं के हों उन्हें सम मात्रिक छंद कहते हैं।)

ख) **अर्द्धसममात्रिक छंद:** जिन मात्रिक छंदों के सम-सम (दूसरे-चौथे) एवं विषम-विषम (पहले-तीसरे) चरणों की मात्राएं समान हों उन्हें अर्द्धसममात्रिक छंद कहते हैं।

ग) **विषम मात्रिक छंद:** जिन छंदों के चारों चरणों में मात्राएं भिन्न-भिन्न अथवा असमान हो उसे विषम मात्रिक छंद कहा जाता है।

छंद के भेदोपभेद इस आरेख द्वारा स्पष्ट किए गए हैं-

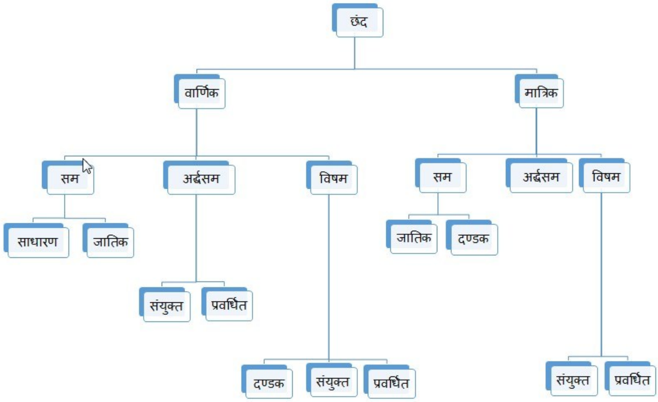

यति और गति: यति और गति का छंद में विशेष महत्व है। यति का अर्थ है विराम, और गति का अर्थ है लय। लय और गति छंद के मूल तत्व हैं या यूँ कहिए की प्राण है। मात्रिक छंदों के लिए गति नितांत उपयोगी है। समान मात्राएं होते हुए भी गति अथवा लय के बिना छंद की रचना असंभव है। गति भंग होने से छंद की मात्रात्मक असफलता स्पष्ट रूप से प्रकट होने लगती है। अतः चरण सममात्रिक होते हुए भी गति और लय का लोप छंद की रचना में सबसे बड़ी बाधा है। इसके बावजूद गति अथवा लय के निर्धारण के लिए कोई नियम नहीं बनाया जा सकता यह केवल अभ्यास पर आश्रित है।

यति की छंद में बहुत महत्त्वपूर्ण भूमिका है। छंद के चरणों में जब वर्णों और मात्राओं की संख्या इतनी अधिक हो कि पूरे चरण को एक श्वास में पढ़ा न जा सके और बीच में रुकना पड़े तो जिस चरण पर हम ठहरते हैं उसे यति या विराम कहते हैं। चरण के उच्चारण के समय जहाँ ठहराव होता है उसे यति कहा जाता है। छंद में गति व लय से माधुर्य उत्पन्न करने के लिए यति की महत्त्वपूर्ण भूमिका है। इससे दो लाभ हैं - एक तो इससे अर्थ स्पष्टीकरण में सहायता मिलती है, वहीं दूसरी ओर इससे पद्य में वाक्य-विन्यास तथा अर्द्ध चरणों का ज्ञान होता है। सामान्यतः छंद के प्रत्येक चरण में यति या विराम स्थल भी निश्चित होता है ।

तुक: 'तुक' छंद के चरणों के अंतिम अक्षरों का एक-सा होना तुक कहलाता है अर्थात् छंद के चरण के अंत में समान स्वर, वर्णों की एकरूपता तुकबंदी है इसे अन्त्यानुप्रास भी कहा जाता है। यद्यपि अब यह छंद का अनिवार्य तत्त्व नहीं है, किन्तु फिर भी तुक में ध्वनि की समानता तथा संतुलन का विशेष महत्त्व है। आदिकाल से आधुनिक हिन्दी कविता की शुरुआत तक तुकांत काव्य रचना प्रचुर मात्रा में होती रहीं हैं। किन्तु हिन्दी साहित्य के आधुनिक काल में काव्य लेखन तुकांत के बजाय अतुकांत अधिक हुआ है।

लघु-गुरु:– छंद चाहे मात्रिक हो या वार्णिक, दोनों प्रकार के छंदों में मात्राओं और वर्णों की गणना के लिए लघु-गुरु से परिचित होना आवश्यक है। लघु स्वर या अक्षर के लिए एक मात्रा होती है और इसके लिए (।) चिन्ह का प्रयोग किया जाता है। इसी प्रकार गुरु अक्षर के लिए दो मात्राएं तथा (ऽ) चिन्ह है।

गण: वार्णिक छंदों में गण का विशेष स्थान है। यहाँ 'गण' शब्द का अर्थ तीन वर्णों का समूह है। लघु (A) और गुरु (•) के भेद से गण के आठ रूप हो सकते हैं। गणों के नाम व स्वरूप को सरलता से जानने, समझने के लिए **'यमाताराजभानसलगा'** सूत्र अत्यंत सहायक व उपयोगी सिद्ध होता है। इस सूत्र में आठ गणों में से जिस गण के स्वरूप को जानना हो, उस गण के वर्ण से आगे के दो वणों को इनमें शामिल करने पर उक्त गण का स्वरूप स्पष्ट हो जाता है। उदाहरणार्थ इस सूत्र में तीसरे स्थान पर विद्यमान 'तगण' के त वर्ण से आगे के दो वर्णों र तथा ज को शामिल करने पर हमें 'ता रा ज' मिला जिसमें दो गुरु और एक लघु है और यही (ऽ ऽ ।) तगण का रूप है।

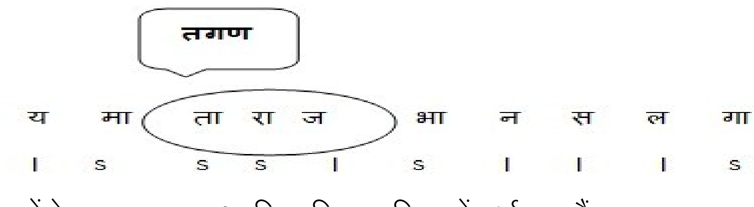

गणों के नाम, स्वरूप तथा चिन्ह निम्न तालिका में दर्शाए गए हैं-

गण का नाम	स्वरूप	उदाहरण
यगण (य मा ता)	। ऽ ऽ	यशोदा
मगण (मा ता रा)	ऽ ऽ ऽ	माताजी

तगण (ता रा ज)	ऽ ऽ ।	बाजार
रगण (रा ज भा)	ऽ । ऽ	रेशमी
जगण (ज भा न)	। ऽ ।	जहाज
भगण (भा न स)	ऽ । ।	भोजन
नगण (न स ल)	। । ।	नहर
सगण (स ल गा)	। । ऽ	कविता
लघु	।	
गुरु	ऽ	

छंद लक्षण और उदाहरण

समवार्णिक छंद

इंद्रवज्रा: इस छंद में कुल ग्यारह वर्ण होते हैं अर्थात इस छंद के प्रत्येक चरण में आए ग्यारह वर्णों को क्रमशः तगण, तगण, जगण तथा दो गुरुओं में विन्यस्त किया जाता है। इस छंद के प्रत्येक चरण के अंत में यति का विधान है।

उदाहरण:

तगण तगण जगण गु गु

ऽ ऽ । ऽ ऽ।। ऽ । ऽ ऽ

मेरी बड़ी भूल कहा कहीं रे ।

तेरो कह्यौ दूत सबै सहौं रे ।

वै जो सबै चाहत तोहि मारयो।

मारों कहा तोहि जो दैव मारयो।

मन्दाक्रान्ता: मन्दाक्रान्ता छंद के प्रत्येक चरण में सत्रह वर्ण होते हैं और उन्हें मगण, भगण, नगण, तगण, तगण, और दो गुरुओं के क्रम में रखकर मन्दाक्रान्ता छंद बनाते हैं।

उदाहरण:-

मगण भगण नगण तगण तगण गु गु

ऽ ऽ ऽ ऽ।। ।।। ऽ ऽ । ऽ ऽ । ऽ ऽ
दो वंशों में प्रकट करके पावनी लोक-लीला।
सौ पुत्रों से अधिक जिनकी पुत्रियाँ पूतशीला।
त्यागी भी हैं शरण जिनके, जो अनासक्त गेही।
राजा-योगी जय जनक वे पुण्यदेही विदेही।

द्रुतविलंबित: इस छंद के प्रत्येक चरण में बारह वर्ण होते हैं जिन्हें क्रमशः नगण, भगण, भगण तथा रगण में निबद्ध किया जाता है।
उदाहरण :
नगण भगण भगण रगण
।।। ऽ।। ऽ।। ऽ। ऽ
दिवस का अवसान समीप था,
गगन था कुछ लोहित हो चला,
तरु शिखा पर थी अब राजती,
कमलिनी कुल वल्लभ की प्रभा।

शार्दूलविक्रीड़ित: जिस पद्य के प्रत्येक चरण में उन्नीस वर्ण हों और उन्हें मगण, सगण, जगण, सगण, तगण, तगण, और एक गुरु के क्रम से सजाया गया हो तथा क्रमशः बारहवें और सातवें वर्णों पर यति हो वहाँ शार्दूलविक्रीड़ित छंद होता है।
उदाहरण:

मगण सगण जगण सगण तगण तगण गु
ऽ ऽ ऽ ।। ऽ । ऽ । ।। ऽ ऽ ऽ । ऽ ऽ । ऽ
सायंकाल हवा समुद्र तट की आरोग्यकारी यहाँ।
प्रायः शिक्षित सभ्य लोग नित ही जाते इसी से वहाँ।

सवैया: बाईस से लेकर छब्बीस वर्णों तक के चरणों वाला समवर्ण छंद सवैया कहलाता हैं। यद्यपि इस छंद के विविध रूप होते हैं जिनकी संख्या अड़तालीस के आस-पास है और इनमें सुंदरी, मत्तगयंद, दुर्मिल, मदिरा, आदि प्रमुख है। यहाँ मत्तगयंद के लक्षण तथा उदाहरण पर प्रकाश डाला गया है।

मत्तगयंद (सवैया): जिस पद्य के प्रत्येक चरण में सात भगण और दो गुरु हो वहाँ मत्तगयंद (सवैया) छंद होता है। इसके प्रत्येक चरण में तेईस वर्ण होते हैं।

उदाहरण:

भगण भगण भगण भगण भगण भगण भगण गु गु
ऽ।। ऽ।। ऽ।। ऽ।। ऽ।। ऽ।। ऽ।। ऽ ऽ

दूलह श्री रघुनाथ बने दुलही सिय सुंदर मंदिर माही।
गावति गीत सबै मिलि सुन्दरि वेद जुवा जुरि विप्र पढ़ाही।
राम को रूप निहारति जानकी कंगन के नग की परछाहीं।
यातै सबै सुधि भूलि गई कर टेकि रही पल टारति नाहीं।

सममात्रिक छंद

चौपाई: यह छंद सममात्रिक छंद है। इसके चारों चरणों में सोलह मात्राएं होती हैं तथा प्रत्येक चरण के अंत में प्रायः या तो दो लघु होते हैं या दो गुरु होते हैं। इस छंद की प्रत्येक अर्द्धाली (दो पंक्तियों) में तुकांतता होती है।
उदाहरण:

ऽ । । । । । । । । । । ऽ ऽ = 16 मात्राएं
वंदहु गुरु पद पदुम परागा। सुरुचि सुवास सरस अनुरागा।
अमिय मूरिमय चूरन चारु। समय सकल भवरूज़ परिवारु।

हरिगीतिका: सोलह, बारह की यति से 28 मात्राओं वाले छंद को हरिगीतिका कहते हैं अंत में लघु-गुरु का नियम आवश्यक है।
उदाहरण:

16 + 12 = 28

। । s । s । । s । । । s । । । s s s । s = 28 मात्राएं

अधिकार खोकर बैठ रहना, यह महादुष्कर्म है;

न्यायार्थ अपने बंधु को भी दण्ड देना धर्म है।

रोला: इस छंद के प्रत्येक चरण में चौबीस मात्राएं होती है इसके प्रत्येक चरण में क्रमशः ग्यारहवीं और तेरहवीं मात्रा में यति होती है।

उदहारण :

11 + 13 = 24

। । । । । । । s s । s । । s s s s = 24 मात्राएं

शत्रुदलित हम तुम्हें, कदापि न होने देंगे,

किसी लौह के साथ, कहीं भी लोहा लेंगे।

अतुल हमारी चमू, समरसज्जा से सज्जित ,

जाग पड़ी है एक रोषरस में विनिमज्जित।

अर्द्धसममात्रिक छंद

दोहा: जिस छंद के विषम चरणों अर्थात पहले व तीसरे चरण में क्रमशः तेरह-तेरह मात्राएं और सम चरणों अर्थात दूसरे और चौथे में ग्यारह-ग्यारह मात्राएं होती हैं। इसके विषम चरणों की शुरुआत में जगण नहीं रहता तथा सम चरणों के अंत में लघु और गुरु का क्रम रहता है।

उदाहरण:

13 + 11 = 24

s | | s | | s | s || s || s s | = 24 मात्राएं

मानस-मंदिर में सती, पति की प्रतिमा थाप,

जलती-सी उस विरह में, बनी आरती आप।

सोरठा: यह छंद भी दोहे की तरह अर्द्धसममात्रिक छंद है। इसमें भी कुल अड़तालीस मात्राएं होती है परंतु इसमें मात्राओं का क्रम दोहे से बिलकुल उल्टा होता है। इसके विषम चरणों अर्थात पहले व तीसरे चरण में क्रमशः ग्यारह-ग्यारह मात्राएं और सम चरणों अर्थात दूसरे और चौथे में तेरह-तेरह मात्राएं होती हैं। इसके पहली और तीसरी पंक्तियों के अंत में तुक साम्य होता है परंतु दूसरी और चौथी पंक्ति में तुक साम्य ज़रूरी नहीं।

11 13 + = 24

s s | | | | s | | s s | | | s | | | = 24 मात्राएँ

बंदौ गुरु पद कंज कृपा सिंधु नर रूप हरि।

महा मोह तम पुंज जासु वचन रविकर निकर।

कविता क्या है?

लेखक -- आचार्य रामचन्द्र शुक्ल

कविता से मनुष्य-भाव की रक्षा होती है। सृष्टि के पदार्थ या व्यापार-विशेष को कविता इस तरह व्यक्त करती है मानो वे पदार्थ या व्यापार-विशेष नेत्रों के सामने नाचने लगते हैं। वे मूर्तिमान दिखाई देने लगते हैं। उनकी उत्तमता या अनुत्तमता का विवेचन करने में बुद्धि से काम लेने की जरूरत नहीं पड़ती। कविता की प्रेरणा से मनोवेगों के प्रवाह जोर से बहने लगते हैं। तात्पर्य यह कि कविता मनोवेगों को उत्तेजित करने का एक उत्तम साधन है। यदि क्रोध, करूणा, दया, प्रेम आदि मनोभाव मनुष्य के अन्तःकरण से निकल जाएँ तो वह कुछ भी नहीं कर सकता। कविता हमारे मनोभावों को उच्छवासित करके हमारे जीवन में एक नया जीव डाल देती है। हम सृष्टि के सौन्दर्य को देखकर मोहित होने लगते हैं। कोई अनुचित या निष्ठुर काम हमें असह्य होने लगता है। हमें जान पड़ता है कि हमारा जीवन कई गुना अधिक होकर समस्त संसार में व्याप्त हो गया है।
कविता क्या है? जब कवि "भावनाओ की प्रसव" से गुजरते हैं तो कविताएँ प्रस्फुटित होती हैं।

कविता

——कवि महेंद्र भटनागर (लेख सौ: गूगल)

मकसद :

व्यक्ति और समाज के लिए कविता की उपादेयता निर्विवाद है। कविता के प्रमुख तत्त्वों में (अनुभूति / भाव, विचार, कल्पना, शिल्प) भाव-तत्त्व मानस को जितना उद्वेलित करता है; उतना अन्य तत्त्व नहीं। कविता इसीलिए अभीष्ट है; क्योंकि भाव-प्रधान होने के कारण वह हमारी चेतना को बड़ी तीव्रता से झकझोरने की क्षमता रखती है। कविता पढ़कर-सुनकर हम जितना प्रभावित होते हैं; उतना साहित्य की अन्य विधाओं के माध्यम से नहीं। कविता व्यक्ति को बल प्रदान करती है; उसे सक्रिय बनाती है; उसके सौन्दर्य-बोध को जाग्रत करती है। जब-तक मनुष्य का अस्तित्व है; कविता का भी अस्तित्व बना रहेगा। कविता का सहारा सदा से लिया जाता रहा है। मानवता का प्रसार करने के लिए, व्यक्ति-व्यक्ति के मध्य प्रेम-भाव बनाए रखने के लिए, देश-प्रेम का उत्साह जगाने के लिए, वेदना के क्षणों में आत्मा को बल पहुँचाने लिए, सात्त्विक हर्ष को अभिव्यक्त करने के लिए आदि अनेक प्रयोजनों की पूर्ति कविता से होती है। काव्य-रचना का प्रमुख उद्देश्य मनोरंजन नहीं (वस्तुतः मनोरंजन की भी अपनी उपयोगिता है); हृदय के सूक्ष्मतम भावों और श्रेष्ठ विचारों को रसात्मक-कलात्मक परिधान पहनाना है; आकार देना है।

एक श्रेष्ठ और सफल कविता की क्या शर्तें और नियम:

कविता के पाठक-श्रोता दो प्रकार के होते हैं — जन-साधारण और काव्य-मर्मज्ञ। काव्य-मर्मज्ञों को काव्य-शास्त्रीय ज्ञान होता है; जबकि जन-साधारण मात्र भावक होता है। कविता उसकी समझ में आनी चाहिए; तभी वह उससे आनन्दित हो सकेगा। अन्यथा भी, प्रांजलता श्रेष्ठ कविता के लिए अनिवार्य शर्त है। क्लिष्ट-दुरूह काव्य से मस्तिष्क का व्यायाम तो हो सकता है; हृदय का आवर्जन नहीं। कविता ऐसी न हो कि ख़ुद समझें या ख़ुदा समझे। सम्प्रेषणीयता किसी भी रचनात्मक कृति के लिए अनिवार्य है। सम्प्रेषणीयता वहाँ बाधित होती है; जहाँ कवि अप्रचलित शब्दों का

प्रयोग करता है, अपनी विद्वत्ता दर्शाने के लिए प्रसंग-गर्भत्व का आवश्यकता से अधिक सहारा लेता है, पाठक को चैंकाने के लिए अटपटी अभिव्यंजना का प्रयोग करता है, जान-बूझकर काव्य-शास्त्रीय बौद्धिक चमत्कारों के भार से अपनी रचना को लाद देता है। कल्पना, अलंकार, बिम्ब, प्रतीक, लक्षणा-व्यंजना आदि गुण जब कविता में सहज ही अवतरित होते हैं तो वे प्रभावोत्पादक सिद्ध होते हैं। अन्यथा आरोपित; बाहर से थोपे हुए, ऐसा कविता-कर्म कभी-कभी तो हास्यास्पद बन जाता है। अस्तु कविता की श्रेष्ठता का मापदंड उसका कथ्य, उसकी अन्तर्वस्तु, उसमें अभिव्यक्त भाव-विचार माना जाना चाहिए। व्यक्ति और समाज के मानसिक स्वास्थ्य का ध्यान रखना रचनाकार का धर्म है। इसका अर्थ यह नहीं कि कलात्मक मूल्यों के महत्त्व को कम किया जा रहा है या उनकी अवहेलना की जा रही है। प्रश्न प्राथमिकता का है। वरीयता तो कथ्य को ही देनी होगी। चाहे वह किसी भी रस की कविता हो। सफल व सार्थक कविता वही है जिसमें उत्कृष्ट भाव, श्रेष्ठ विचार, उदात्त कल्पनाएँ और अभिव्यंजना कौशल हो।

कविता की भाषा और शिल्प-सौन्दर्य:

काव्य-भाषा के अनेक रूप होते हैं। जन-सामान्य के लिए लिखी जानेवाली कविता की भाषा भी जन-भाषा होगी। सूक्ष्म भावों, गूढ़ विचारों और विराट् कल्पनाओं को अभिव्यक्त करनेवाली भाषा जन-भाषा नहीं हो सकती। यहाँ रचनाकार शब्द-शक्तियों एवं बिम्बों-प्रतीकों का भी प्रश्रय लेता है। तत्सम् शब्दों का प्रयोग क्लिष्टता नहीं है। जन-साधारण को अधिक भाषा ज्ञान नहीं होता; किन्तु शिक्षित समाज से तो कवि यह अपेक्षा रखता है कि वह परिष्कृत भाषा-सौन्दर्य को समझेगा। हाँ, अप्रचलित शब्दों का प्रयोग अवश्य सम्प्रेषण में बाधक होता है। विषयानुसार भी भाषा का रूप-परिवर्तन होता है। हास्य-रस की कविताओं की जो भाषा होती है; वह दार्शनिक अथवा प्रेम- कविताओं की नहीं। ओजस्वी कविताओं में सरल शब्दावली और अभिधा की प्रधानता रहती है। वस्तुतः भाषा क्लिष्ट व दुरूह नहीं होती; दुरूहता अक़्सर अभिव्यक्ति में होती है। कुछ शब्द ऐसे होते हैं जो आपके लिए क्लिष्ट हो सकते हैं; पर अन्यों के लिए नहीं। आज ऐसी जटिल कविताएँ लिखी जा रही हैं; जिनमें शब्द तो एक भी कठिन या अप्रचलित नहीं होता; किन्तु उनका कथन इतना

अटपटा और अद्भुत होता है कि पाठक समझ ही नहीं पाता कि क्या कहा गया है! गद्यात्मकता भी उसमें अत्यधिक पायी जाती है। ऐसी कविताएँ कविता का आभास मात्र देती हैं। कविता की लोकप्रियता कम हो जाने का एक कारण यह भी है। ऐसी रचनाओं का अस्तित्व एक दिन स्वतः समाप्त हो जाएगा।

कविता रची जाती है; अतः उसके संदर्भ में शिल्प का महत्त्व कोई कम नहीं। माना, बात (कथन) बुनियादी वस्तु है; किन्तु बात किस ढंग से कही गयी; यह भी विशेष है। कवि सौन्दर्य-तत्त्वों का ज्ञाता होता है। वह अपनी अभिव्यक्ति से पाठकों-श्रोताओं को आनन्दित करता है। सफल-सार्थक कविता के लिए यह गुण अनिवार्य है।

मुक्तक

-भास्कर रौशन(लेख सौ: गूगल)

मुक्तक शब्द का अर्थ है, अपने आप में सम्पूर्ण अथवा अन्य निरपेक्ष वस्तु, होना. अतः मुक्तक काव्य की वह विधा है जिसमे कथा का कोई पुर्वोपर सम्बन्ध नहीं होता। प्रत्येक छंद अपने आप में पूर्णतः स्वतंत्र और सम्पूर्ण अर्थ देने वाला होता है। संस्कृत काव्य परंपरा में मुक्तक शब्द सर्वप्रथम आनंदवर्धन ने प्रस्तुत किया। ऐसा नहीं माना जा सकता कि काव्य की इस दिशा का ज्ञान उनसे पूर्व किसी को नहीं था। आचार्य दंडी मुक्तक नाम से न सही पर अनिबद्ध काव्य के रूप में इससे परिचित थे। अग्निपुराण मुक्तक को परिभाषित करते हुए कहता है कि

"मुक्तकं श्लोक एवैकश्चमत्कारक्षम: सताम्"

अर्थात् चमत्कार की क्षमता रखने वाले एक ही श्लोक को मुक्तक कहते हैं। राजशेखर ने भी मुक्तक नाम से ही चर्चा की है। आनंदवर्धन ने रस को महत्त्व प्रदान करते हुए कहा है कि:

"तत्र मुक्तकेषु रसबन्धाभिनिवेशिन: कवे: तदाश्रयमौचित्यम्"

अर्थात् मुक्तकों में रस का अभिनिवेश या प्रतिष्ठा ही उसके बंध की व्यवस्थापिका है और कवि द्वारा उसी का आश्रय लेना औचित्य है। हेमचन्द्र आचार्य ने मुक्तक शब्द के स्थान पर मुक्ताकादि शब्द का प्रयोग किया। उन्होंने उसका लक्षण दंडी की परंपरा में देते हुए कहा कि जो अनिबद्ध हो, वे मुक्तादि हैं, आधुनिक युग में हिंदी के आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने मुक्तक पर विचार किया। उनके अनुसार मुक्तक में प्रबंध के समान रस की धारा नहीं रहती, जिसमे कथा–प्रसंग की परिस्थिति में अपने को भुला हुआ पाठक मग्न हो जाता है और हृदय में एक स्थाई प्रभाव ग्रहण करता है, इसमें तो रस के छींटे ऐसे पड़ते हैं, जिनमें हृदय-कलिका थोड़ी देर के लिए खिल उठती है, यदि प्रबंध एक विस्तृत वनस्थली है, तो मुक्तक एक चुना हुआ गुलदस्ता है, इसी से यह समाज के लिए अधिक उपयुक्त होता है। इसमें उतरोत्तर दृश्यों द्वारा संगठित पूर्ण

जीवन या उसके किसी पूर्ण अंग का प्रदर्शन नहीं होता, बल्कि एक रमणीय खंड दृश्य इस प्रकार सहसा सामने ला देता है कि पाठक या श्रोता मंत्रमुग्ध हो जाता है। इसके लिए कवि को मनोरम वस्तुओं और व्यापारों का एक छोटा स्तवक कल्पित करके उन्हें अत्यंत संक्षिप्त और सशक्त भाषा में प्रदर्शित करना पड़ता है। आचार्य शुक्ल ने अन्यंत्र मुक्तक के लिए भाषा की समास शक्ति और कल्पना की समाहार शक्ति को आवश्यक बताया था। गोविन्द त्रिगुणायत ने उसी से प्रभावित होकर निम्न परिभाषा प्रस्तुत की। "मेरी समझ में मुक्तक उस रचना को कहते हैं जिसमें प्रबंधत्व का अभाव होते हुए भी कवि अपनी कल्पना की समाहार शक्ति और भाषा की समाज शक्ति के सहारे किसी एक रमणीय दृश्य, परिस्थिति, घटना या वस्तु का ऐसा चित्रात्मक एवं भावपूर्ण वर्णन प्रस्तुत करता है, जिससे पाठकों को प्रबंध जैसा आनंद आने लगता है। वस्तुतः यह परिभाषा त्रुटिपूर्ण है, प्रबंध जैसा आनंद कहना उचित नहीं। ऐसे में मुक्तक की परिभाषा निम्न भी बताई गयी है:

मुक्तक काव्य की वह विधा है जिसमें कथा का पुर्वोपर सम्बन्ध न होते हुए भी त्वरित गति से साधारणीकरण करने की क्षमता होती है"

मेरी दृष्टि में आचार्य रामचंद्र शुक्ल की परिभाषा पर्याप्त है। अंततः उसे चुना हुआ गुलदस्ता ही कहा जा सकता है।

मुक्तक-परिचय
--सुरेश चौधरी

काव्य के विषयगत दो भेद होते हैं—**प्रबंध काव्य** और **मुक्तक काव्य।** प्रबंध काव्य में विषय विशेष को छंदोबद्ध कविता के रूप में प्रस्तुत किया जाता है, मुक्तक काव्य में सूक्ष्मातिसूक्ष्म मार्मिक भावों की अभिव्यक्ति होती है जो स्वयं में पूर्णतथा अपेक्षाकृत लघु रचना होती है। मुक्तक काव्य में छंद विशेष की बाध्यता नहीं होती और यह किसी भी छंद में लिखा जा सकता है, मगर जिस भी छंद का चुनाव किया जाये उसका निर्वाह किया जाना अपेक्षित है। शाब्दिक अर्थ के अनुसार मुक्तक एक स्वतंत्र एवं पूर्ण रचना है जो छोटी होते हुए भी मारक भाव रखती है।
विषय की गहराई में न जाते हुए "मुक्तक" छंद पर चर्चा करने का प्रयास करते हैं, जो सामान्यतः **आज कल प्रचलित** हैं। (यह पिंगल शास्त्र में अनिवार्यता नहीं है, वहाँ तो दोहों को भी मुक्तक कहा गया है) उन **मुक्तक छंद** में चार सम-मात्रिक पंक्तियाँ होती हैं। जिसकी पहली, दूसरी और चौथी पंक्ति में तुकान्त या समान्त होता है, जबकि तीसरी पंक्ति तुकान्त/समान्त नहीं होती, लेकिन कथ्य का उद्वेग अवश्य होता है। आपाधापी के इस दौर में लोगों के पास लम्बी कविताओं को पढ़ने का वक्त नहीं है, इसलिए दोहे की तरह मुक्तक भी लोकप्रिय होते जा रहे हैं।

मुक्तक के प्रकार

विषय के आधार पर मुक्तक को तीन वर्गों में बाँटा गया है- श्रृंगार परक, वीर-रसात्मक तथा नीति परक स्वरूप के आधार पर मुक्तक के गीत, प्रबंध मुक्तक, विषयप्रधान, संघात मुक्तक, एकार्थ प्रबंध तथा मुक्तक प्रबंध आदि भेद किये जा सकते हैं।
सम मात्रिक पंक्तियों से आशय यह है कि समान मात्राओं वाली पंक्तियों की संख्या समान होगी।

उदाहरण

तुम सुनहरे सपने देखा करते हो......मैं अश्रु बहाया करता हूँ,
तुम तो आग लगाया करते हो....... मैं प्राण लड़ाया करता हूँ

मेरा जीवन तो एक खुली पुस्तक है....पन्ने पलटते रोज तुम,
तुम मात्र बाते बनाया करते हो........मैं बाते निभाया करता हूँ
सुरेश चौधरी

उपरोक्त मुक्तक में प्रत्येक पंक्ति में ३६ मात्रा है, “करता हूँ” प्रथम द्वितीय चतुर्थ पंक्ति में है इसे ग़ज़ल विधा में रदीफ़ कहते हैं, रदीफ़ के पहले वाला काफिया होता है वह तुकांत होना चाहिए यहाँ काफिया आया है, तृतीय पंक्ति में भावों का प्रेषण सशक्त होना चाहिए जैसा कि यहाँ है पूरे मुक्तक का निचोड़ तीसरी पंक्ति में है, चौथी पंक्ति ऊपर वाली दो पंक्तियों का समापन होनी चाहिए जैसा की यहाँ है।

गद्यकाव्य

==सुरेश चौधरी

गद्यकाव्य गद्य की ऐसी विधा है, जिसमें कविता जैसी रसमयता, रमणीयता, चित्रात्मकता और संवेदनशीलता होती है, हिंदी में **रायकृष्णदास** गद्यकाव्य के जनक माने जाते हैं, इन्होंने अनेक अध्यात्मिक गद्य काव्यों की रचना की, साधना(१९१६) । यूँ माने तो गद्यकाव्य की प्रेरणा गुरु रविन्द्रनाथ की कृति **गीतांजलि** के हिंदी अनुवाद से भी मिली, गद्य काव्य का क्रमवार लेखन छायावाद युग में पूर्ण रूप से विकसित हुआ, कुछ लोग भारतेंदु को भी गद्य काव्य का जनक मानते हैं।
गद्य काव्य किसे कहते हैं हिंदी गद्यकाव्य एवं संस्कृत गद्य काव्य में क्या भेद है, इस पर कमलेश जी ने बहुत कार्य किया कई पुस्तकों का अवलोकन किया पुरानी पत्र पत्रिकाओं की खाक छानी एवं इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि : गद्य काव्य साहित्य की उतनी महत्त्वपूर्ण विधा नहीं है, जितनी प्रतिपादित की गयी है। दूसरी बात परिमाण की दृष्टि से हिंदी गद्यकाव्य प्रचुर होते हैं, गुणात्मक दृष्टि से ये निर्बल और क्षीण हैं। कुछ लोग ब्रजनंदन सही की रचना सौन्दर्योपासक को पहली गद्य काव्य रचना मानते हैं।

गद्य कवीनां निकष वदन्ति ..इस उक्ति के अनुसार गद्य काव्य की कवियों के कवित्व की कसौटी समझा जाता है, पद्य रचना में छंद गत स्वतंत्रता के कारण कवि के शब्द, भाव, कल्पना तथा कुछ व्याकरण गत दोष छिप जाते हैं, लेकिन गद्य काव्य में इस तरह की कोई विवशता नहीं होने के कारण कवि का छोटा या बड़ा कोई भी दोष क्षम्य नहीं है, यही कारण है कि गद्य कवियों को काव्यप्रतिभा की कसौटी कहा गया है।
जैसा कि प्रस्तावना में बताया गया है कि वेदों की संरचना में गद्य, पद्य एवं गान को महत्त्व देते हुए लिखा गया है, **कृष्ण यजुर्वेद** के ब्राह्मण भाग को पढ़ें यह पूर्ण रूपेण गद्य काव्य में है, महाभारत में कई श्लोक गद्य काव्य विधा में लिखे गए हैं, यास्क मुनि द्वारा विरचित निरुक्त (७०० ई. पूर्व) पतंजलि (१५०० ई.पू.) महाभाष्य ये सब गद्य काव्य ही हैं। दंडी, सुभास मनु इत्यादि ने अनेकोनेक गद्य काव्य लिखा है।

वर्तमान में गद्यकाव्य या छंदमुक्त अतुकांत काव्य ही ज्यादा लिखा जा रहा है। प्रगतिशीलवाद, अधुनिकवाद में गद्य रचनाएँ ज्यादा प्रखर हैं, क्योंकि भावों का सम्प्रेषण छंद विधा के नियमों से बंध कर सिकुड़ता नहीं, कवि अपने भावों को, विचारों को, मुक्त होकर लिखता है।

संस्कृत साहित्य में कथा और आख्यायिका के लिए ही प्रयुक्त होता था।

दण्डी ने तीन प्रकार के काव्य बताये थे:

गद्यकाव्य 2. पद्यकाव्य 3. मिश्रित काव्य

गद्य को कविता की तरह रमणीय, सरस, अनुभुतिमुलक, और ध्वनि प्रधान स्वरुप में लिखना चाहिए न की गद्य आलेखों की तरह सीधा सपाट मानो कोई बात सपाट बयानी में कही जा रही हो। इसकी अभिव्यंजना अलंकृत एवं चमत्कारी हो, अग्निपुराण के "संक्षेपात वाक्यमिष्ठार्थ व्यवच्छिना पदावली" के अनुसार संक्षिप्त काव्य विधान का विचार भी रहना चाहिए, महादेवी वर्मा ने भी गद्यकाव्य पर विचार किया। उन्होंने श्री केदार द्वारा रचित 'अधखिले फूल' की भूमिका में कहा है कि

पद्य का भाव उसके संगीत की ओट में छिप जाय, परन्तु गद्य के पास उसे छिपाने के साधन नहीं हैं, रजनीगंधा की क्षुद्र छिपी कलियों के समान एकाएक खिल कर जब हमारे नित्य परिचय के कारण शब्द हृदय को भाव सौरभ से सरोबार कर देते हैं तब हम चौंक उठाते हैं, इसी में गद्यकाव्य का सौन्दर्य निहित है, इसके अतिरिक्त गद्य की भाषा बंधनहीनता में बद्ध चित्रमय परिचित और स्वाभाविक होने पर भी हृदय को छूने में असमर्थ हो सकती है।

उदाहरण-स्वरुप निराला जी की प्रसिद्ध कविता भिक्षुक को ले सकते हैं, जहाँ हर शब्द चुन-चुन कर लयात्मकता में लिखे गए हैं, अज्ञेय जी की एक कविता का दर्शन करते हैं,

अरे ये उपस्थित
घेरते, घूरते, टेरते
लोग-लोग-लोग-लोग
जिन्हें पर विधाता ने
मेरे लिए दिया नहीं
निजी एक अंतरंग चेहरा।

अनुपस्थित केवल वे
हेरते, अगोरते
लोचन दो
निहित निजीपन जिन में
सब चेहरों का,
ठहरा।

भाषा एवं शब्दों का गठन

-आचार्य संजीव कृष्ण "सलिल"

भाषा द्वारा भावों और विचारों की अभिव्यक्ति की दो शैलियाँ गद्य तथा पद्य हैं। गद्य में वाक्यों का प्रयोग किया जाता है, जिन पर नियंत्रण व्याकरण करता है। पद्य में पद या छंद का प्रयोग किया जाता है जिस पर नियंत्रण पिंगल करता है।
कविता या पद्य को गद्य से अलग तथा व्यवस्थित करने के लिये कुछ नियम बनाये गये हैं, जिनका समुच्चय "पिंगल" कहलाता है। गद्य पर व्याकरण का नियंत्रण होता है किंतु पद्य पर व्याकरण के साथ पिंगल का भी नियंत्रण होता है। छंद वह साँचा है, जिसके अनुसार कविता ढलती है। छंद वह पैमाना है जिस पर कविता नापी जाती है। छंद वह कसौटी है जिस पर कसकर कविता को खरा या खोटा कहा जाता है। पिंगल द्वारा तय किये गये नियमों के अनुसार लिखी गयी कविता "छंद" कहलाती है। वर्णों की संख्या एवं क्रम,मात्रा, गति, यति आदि के आधार पर की गयी रचना को छंद कहते हैं। छंद के तीन प्रकार मात्रिक, वर्णिक तथा मुक्त हैं। मात्रिक व वर्णिक छंदों के उपविभाग सममात्रिक, अर्ध सममात्रिक तथा विषम मात्रिक हैं।

"भाषा" मानव का अप्रतिम आविष्कार है। वैदिक काल से उद्गम होने वाली भाषा शिरोमणि संस्कृत, उत्तरीय कालों से गुज़रती हुई, सदियों पश्चात् आज तक पल्लवित-पुष्पित हो रही है। भाषा विचारों और भावनाओं को शब्दों में साकारित करती है। संस्कृति वह बल है जो हमें एकसूत्रता में पिरोती है। भारतीय संस्कृति की नींव "संस्कृत" और उसकी उत्तराधिकारी हिन्दी ही है। "एकता" कृति में चरितार्थ होती है। कृति की नींव विचारों में होती है। विचारों का आकलन भाषा के बिना संभव नहीं। भाषा इतनी समृद्ध होनी चाहिए कि गूढ़, अमूर्त विचारों और संकल्पनाओं को सहजता से व्यक्त कर सकें। जितने स्पष्ट विचार, उतनी सम्यक् कृति; और समाज में आचार-विचार की एकरुपता याने "एकता" ।

भाषा भाव विचार को, करे शब्द से व्यक्त।
उर तक उर की चेतना, पहुँचे हो अभिव्यक्त॥

उच्चार :

ध्वनि-तरंग आघात पर, आधारित उच्चार।
मन से मन तक पहुँचता, बनकर रस आगार।।

ध्वनि विज्ञान सम्मत् शब्द व्युत्पत्ति शास्त्र पर आधारित व्याकरण नियमों ने संस्कृत और हिन्दी को शब्द-उच्चार से उपजी ध्वनि-तरंगों के आघात से मानस पर व्यापक प्रभाव करने में सक्षम बनाया है। मानव चेतना को जागृत करने के लिए रचे गए काव्य में शब्दाक्षरों का सम्यक् विधान तथा शुद्ध उच्चारण अपरिहार्य है। सामूहिक संवाद का सर्वाधिक लोकप्रिय एवं सर्व सुलभ माध्यम भाषा में स्वर-व्यंजन के संयोग से अक्षर तथा अक्षरों के संयोजन से शब्द की रचना होती है। मुख में ५ स्थानों (कंठ, तालू, मूर्धा, दंत तथा अधर) में से प्रत्येक से ५-५ व्यंजन उच्चारित किए जाते हैं।

सुप्त चेतना को करे, जागृत अक्षर नाद.
सही शब्द उच्चार से, वक्ता पाता दाद.

उच्चारण स्थान	**वर्ग**	**कठोर(अघोष) व्यंजन**		**मृदु(घोष) व्यंजन**		**अनुनासिक**
कंठ	क वर्ग	क्	ख्	ग्	घ्	ङ्
तालू	च वर्ग	च्	छ्	ज्	झ्	ञ्
मूर्धा	ट वर्ग	ट्	ठ्	ड्	ढ्	ण्

दंत	त वर्ग	त्	थ्	द्	ध्	न्
अधर	प वर्ग	प्	फ्	ब्	भ्	म्
विशिष्ट व्यंजन		ष्, श्, स्,		ह्, य्, र्, ल्, व्		

कुल १४ स्वरों में से ५ शुद्ध स्वर अ, इ, उ, ऋ तथा ऌ हैं। शेष ९ स्वर हैं आ, ई, ऊ, ॠ, ॡ, ए, ऐ, ओ तथा औ। स्वर उसे कहते हैं जो एक ही आवाज में देर तक बोला जा सके। मुख के अन्दर ५ स्थानों (कंठ, तालू, मूर्धा, दांत, होंठ) से जिन २५ वर्णों का उच्चारण किया जाता है उन्हें व्यंजन कहते हैं। किसी एक वर्ग में सीमित न रहने वाले ८ व्यंजन स्वरजन्य विशिष्ट व्यंजन हैं।

विशिष्ट (अन्तस्थ) स्वर व्यंजन :

य् तालव्य, र् मूर्धन्य, ल् दंतव्य तथा व् ओष्ठव्य हैं। ऊष्म व्यंजन- श् तालव्य, ष् मूर्धन्य, स् दंत्वय तथा ह् कंठव्य हैं।

स्वराश्रित व्यंजन: अनुस्वार (ं), अनुनासिक (चन्द्र बिंदी ँ) तथा विसर्ग (:) हैं।

संयुक्त वर्ण : विविध व्यंजनों के संयोग से बने संयुक्त वर्ण श्र, क्ष, त्र, ज्ञ, क्त आदि का स्वतंत्र अस्तित्व मान्य नहीं है।

मात्रा :

उच्चारण की न्यूनाधिकता अर्थात किस अक्षर पर कितना कम या अधिक भार (जोर, वज्न) देना है अथवा किसका उच्चारण कितने कम या अधिक समय तक करना है ज्ञात हो तो लिखते समय सही शब्द का चयन कर दोहा या अन्य काव्य रचना के शिल्प को संवारा और भाव को निखारा जा सकता है। गीति रचना के वाचन या पठन के समय शब्द सही वजन का न हो तो वाचक या गायक को शब्द या तो जल्दी-जल्दी लपेटकर पढ़ना होता है या खींचकर लंबा करना होता है, किंतु

जानकार के सामने रचनाकार की विपन्नता, उसके शब्द भंडार की कमी, शब्द ज्ञान की दीनता स्पष्टहो जाती है. अतः, दोहा ही नहीं किसी भी गीति रचना के सृजन के पूर्व मात्राओं के प्रकार व गणना-विधि पर अधिकार कर लेना जरूरी है।

उच्चारण नियम :

उच्चारण हो शुद्ध तो, बढ़ता काव्य-प्रभाव.
अर्थ-अनर्थ न हो सके, सुनिए लेकर चाव.
शब्दाक्षर के बोलने, में लगता जो वक्त.
वह मात्रा जाने नहीं, रचनाकार अशक्त.
ह्रस्व, दीर्घ, प्लुत तीन हैं, मात्राएँ लो जान.
भार एक, दो, तीन लो, इनका क्रमशः मान.

१. ह्रस्व (लघु) स्वर : कम भार, मात्रा १ – अ, इ, उ, ऋ तथा चन्द्र बिन्दु वाले स्वर।
२. दीर्घ (गुरु) स्वर : अधिक भार, मात्रा २ – आ, ई, ऊ, ॠ, ए, ऐ, ओ, औ, अं।
३. बिन्दुयुक्त स्वर तथा अनुस्वारयुक्त या विसर्ग युक्त वर्ण भी गुरु होता है। यथा – नंदन, दु:ख आदि.
४. संयुक्त वर्ण के पूर्व का लघु वर्ण दीर्घ तथा संयुक्त वर्ण लघु होता है।
५. प्लुत वर्ण : अति दीर्घ उच्चार, मात्रा ३ – ॐ, ग्वं आदि। वर्तमान हिन्दी में अप्रचलित।
६. पद्य रचनाओं में छंदों के पाद का अन्तिम ह्रस्व स्वर आवश्यकतानुसार गुरु माना जा सकता है।
७. शब्द के अंत में हलंतयुक्त अक्षर की एक मात्रा होगी।
पूर्ववत् = पूर् २ + व् १ + व १ + त १ = ५
ग्रीष्मः = ग्रीष् 3 + म: २ +५
कृष्ण: = कृष् २ + ण: २ = ४
हृदय = १ + १ +२ = ४

अनुनासिक एवं अनुस्वार उच्चार :

उक्त प्रत्येक वर्ग के अन्तिम वर्ण (ङ्, ञ्, ण्, न्, म्) का उच्चारण नासिका से होने का कारण ये 'अनुनासिक' कहलाते हैं।

१. अनुस्वार का उच्चारण उसके पश्चातवर्ती वर्ण (बाद वाले वर्ण) पर आधारित होता है। अनुस्वार के बाद का वर्ण जिस वर्ग का हो, अनुस्वार का उच्चारण उस वर्ग का अनुनासिक होगा। यथा-

१. अनुस्वार के बाद क वर्ग का व्यंजन हो तो अनुस्वार का उच्चार ङ् होगा।

क + ङ् + कड़ = कंकड़,

श + ङ् + ख = शंख,

ग + ङ् + गा = गंगा,

ल + ङ् + घ् + य = लंघ्य

२. अनुस्वार के बाद च वर्ग का व्यंजन हो तो, अनुस्वार का उच्चार ञ् होगा.

प + ञ् + च = पञ्च = पंच

वा + ञ् + छ + नी + य = वांछनीय

म + ञ् + जु = मंजु

सा + ञ् + झ = सांझ

३. अनुस्वार के बाद ट वर्ग का व्यंजन हो तो अनुस्वार का उच्चारण ण् होता है.

घ + ण् + टा = घंटा

क + ण् + ठ = कंठ

ड + ण् + डा = डंडा

४. अनुस्वार के बाद 'त' वर्ग का व्यंजन हो तो अनुस्वार का उच्चारण 'न्' होता है.

शा + न् + त = शांत

प + न् + थ = पंथ

न + न् + द = नंद

स्क + न् + द = स्कंद

५ अनुस्वार के बाद 'प' वर्ग का व्यंजन हो तो अनुस्वार का उच्चार 'म्' होगा.

च + म्+ पा = चंपा

गु + म् + फि + त = गुंफित

ल + म् + बा = लंबा

कु + म् + भ = कुंभ

छंद के अंग

छंद की रचना में वर्ण, मात्रा, पाद, चरण, गति, यति, तुक तथा गण का विशेष योगदान होता है।

वर्ण- किसी मूलध्वनि को व्यक्त करने हेतु प्रयुक्त चिन्हों को वर्ण या अक्षर कहते हैं, इन्हें और विभाजित नहीं किया जा सकता।

मात्रा- "मात्रा" शब्द अक्षरों की उच्चरित ध्वनि में लगनेवाली समयावधि की ईकाई का द्योतक है। तद्नुसार हिंदी में अक्षरों के केवल दो भेद १. लघु या ह्रस्व तथा २. गुरु या दीर्घ हैं। इन्हें आम बोलचाल की भाषा में छोटा तथा बडा भी कहा जाता है। इनका भार क्रमशः १ तथा २ गिना जाता है। अक्षरों को लघु या गुरु गिनने के नियम निर्धारित हैं। इनका आधार उच्चारण के समय हो रहा बलाघात तथा लगनेवाला समय है।

वर्ण के उच्चारण में लगे कम या अधिक समय के आधार पर उन्हें ह्रस्व, लघु या छोटा तथा दीर्घ या बड़ा ऽ कहा जाता है।

इनकी मात्राएँ क्रमशः एक व दो गिनी जाती हैं।

उदाहरण- गगन = ।+। +। = ३, भाषा = ऽ + ऽ = ४.

पाद- पद, पाद तथा चरण इन शब्दों का प्रयोग कभी समान तथा कभी असमान अर्थ में होता है। दोहा के संदर्भ में पद का अर्थ पंक्ति से है। दो पंक्तियों के कारण दोहा को दो पदी, द्विपदी, दोहयं, दोहड़ा, दूहड़ा, दोग्धक आदि कहा गया। दोहा के हर पद में दो, इस तरह कुल चार चरण होते हैं। प्रथम व तृतीय चरण विषम तथा द्वितीय व चतुर्थ चरण सम कहलाते हैं।

गति- छंद पठन के समय शब्द ध्वनियों के आरोह व अवरोह से उत्पन्न लय या प्रवाह को गति कहते हैं। गति का अर्थ काव्य के प्रवाह से है। जल तरंगों के उठाव-गिराव की तरह शब्द की संरचना तथा भाव के अनुरूप ध्वनि के उतार चढ़ाव को गति या लय कहते हैं। हर छंद की लय अलग अलग होती है। एक छंद की लय से अन्य छंद का पाठ नहीं किया जा सकता।

यति- छंद पाठ के समय पूर्व निर्धारित नियमित स्थलों पर ठहरने या रुकने के स्थान को यति कहा जाता है। दोहा के दोनों चरणों में १३ व ११ मात्राओं पर अनिवार्यतः यति होती है। नियमित यति के अलावा भाव या शब्दों की आवश्यकता अनुसार चजण के बीच में भी यति हो सकती है। अल्प या अर्ध विराम यति की सूचना देते है।

तुक- दो या अनेक चरणों की समानता को तुक कहा जाता है। तुक से काव्य सौंदर्य व मधुरता में वृद्धि होती है। दोहा में सम चरण अर्थात् दूसरा व चौथा चरण सम तुकांती होते हैं।

गण- तीन वर्णों के समूह को गण कहते हैं। गण आठ प्रकार के हैं। गणों की मात्रा गणना के लिये निम्न सूत्र में से गण के पहले अक्षर तथा उसके आगे के दो अक्षरों की मात्राएँ गिनी जाती हैं।

गणसूत्र- यमाताराजभानसलगा।

क्रम	गण का नाम		अक्षर		मात्राएँ
१.	यगण	यमाता	|ऽऽ	=	५
२.	मगण	मातारा	ऽऽऽ	=	६
३.	तगण	ताराज	ऽऽ|	=	५
४.	रगण	राजभा	ऽ|ऽ	=	५
५.	जगण	जभान	|ऽ|	=	४
६.	भगण	भानस	ऽ||	=	४
७.	नगण	नसल	|||	=	३

८. सगण सलगा ||ऽ = ४

मात्रा की गणना

-सुरेश चौधरी

संस्कृत और प्राकृत/भाषा/अवधी/ब्रज में छन्द दो प्रकार के होते हैं - **वार्णिक** और **मात्रिक।** दोनों की इकाई है वर्ण, जो कि मात्रा सहित उच्चारित ध्वनि है। वर्ण से यहाँ अर्थ है १. एक अकेला (व्यञ्जन रहित) स्वर २. एक या एक से अधिक व्यञ्जन के बाद एक स्वर (क क्य स्त्य स्त्न्र्य इत्यादि)
वर्णों के उच्चारण में लगनेवाले समय को मात्रा कहते हैं। इस हिसाब से अर्द्धमात्रा, एकमात्रा, द्विमात्रा और त्रिमात्रा का विधान है जो इस प्रकार हैं-

एक मात्रो भवेद ह्रस्वः द्विमात्रो दीर्घ उच्यते
त्रिमात्रस्तु प्लुतो ज्ञेयो व्यंजनंचार्द्ध मात्रकम

अर्थात् **ह्रस्व** की एक मात्रा, **दीर्घ** की दो मात्रा, **प्लुत** की तीन और व्यंजन की आधी मात्रा मानी जाती है। पूर्व में हम कह आये हैं कि मनुष्य मूलतः प्रकृति से प्रेरणा लेता है अतः यहाँ बताना उचित होगा कि इन मात्राओं के प्राकृतिक उदाहरण क्या हैं-

चाषश्चैकांवदेन्मात्रां द्विमात्रं वायसो वदेत
त्रिमात्रंतु शिखी ब्रूते नकुलश्चार्द्धमात्रकम

अर्थात् नीलकंठ की बोली एकमात्रा, कौआ दो मात्रा, मोर तीन मात्रा और नेवला आधीमात्रा वाला होता है। इनमें से छंदशास्त्र में सिर्फ़ एक और दो मात्राओं का ही प्रयोग होता है जो कि क्रमशः लघु और गुरु के लिये निर्धारित है।

वार्णिक छन्द में वर्णों की सङ्ख्या और लघु-गुरु के क्रम का नियम होता है। जबकि **मात्रिक** छन्द में केवल मात्राओं की सङ्ख्या का नियम होता है। छन्दों में मात्रा गिनने के लिए और लघु-गुरु निर्धारण के लिए कुछ नियम हैं -

१. अ इ उ ऋ - ये ह्रस्व स्वर अकेले आएँ या किसी व्यञ्जन के बाद - तब एक मात्रा गिनी जाती है (लघु)

२. आ ई ऊ ए ऐ ओ औ - ये दीर्घ स्वर अकेले आएँ या किसी व्यञ्जन के बाद - तब दो मात्राएँ गिनी जाती हैं (गुरु) |

३. यदि एक ही शब्द में लघु के तुंरत बाद संयुक्ताक्षर (दो या अधिक व्यञ्जन जिनके बीच कोई स्वर न हो) हो तो पहले आनेवाले लघु को गुरु गिना जाता है।

४. छन्द के एक चरण (चौथे या आधे भाग) के अन्त में लघु को गुरु गिना जा सकता हैं यदि चरण पूरा करने के लिए आवश्यकता हो।

५. प्राकृत में एकार और ओकार एकमात्रिक भी होते हैं। मानस गेय है, अतः इसमें दोनों प्रकार के (एकमात्रिक और द्विमात्रिक) एकार और ओकार का प्रयोग है। यह सूक्ष्मज्ञान मानस के छन्द गाने के बाद ही होता है।

दो शब्दों के बीच आने वाले विराम या अवसान को छन्दःशास्त्र में **"यति**" की संज्ञा दी जाती है। छन्दःशास्त्र में गणों द्वारा छन्दों का वर्णन किया जाता है। तीन वर्णों के समूह को संक्षेप में लिखने के लिए एक अक्षर का प्रयोग होता है।

आठ **गण** इस प्रकार है।

१. **य-**लघु-गुरु-गुरु २. **म-**गुरु-गुरु-गुरु ३. **त-**गुरु-गुरु-लघु ४. **र-**गुरु-लघु-गुरु ५. **ज-**लघु-गुरु-लघु ६. **भ-**गुरु-लघु-लघु ७. **न-**लघु-लघु-लघु ८. **स-**लघु-लघु-गुरु

गणों के अक्षरों को कण्ठस्थ करने के लिए एक सूत्र है - ***"यमाताराजभानसलगाः"*।** इसके अतिरिक्त एक श्लोक भी है -

आदिमध्यावसानेषु यरता यान्ति लाघवम्।
भजसा गौरवं यान्ति मनौ तु गुरुलाघवम्।।

मात्राभार

जैसा की ऊपर बताया जा चूका है , छन्द बद्ध रचना के लिये मात्राभार की गणना का ज्ञान आवश्यक है, इसके निम्नलिखित नियम हैं :-

(१) ह्रस्व स्वरों की मात्रा १ होती है जिसे **लघु** कहते हैं , जैसे - अ, इ, उ, ऋ

(२) दीर्घ स्वरों की मात्रा २ होती है जिसे **गुरु** कहते हैं, जैसे-आ, ई, ऊ, ए, ऐ, ओ, औ

(३) व्यंजनों की मात्रा १ होती है , जैसे -

.... क,ख,ग,घ / च,छ,ज,झ,ञ / ट,ठ,ड,ढ,ण / त,थ,द,ध,न / प,फ,ब,भ,म /

.... य,र,ल,व,श,ष,स,ह

(४) व्यंजन में ह्रस्व स्वर इ , उ , ऋ की मात्रा लगने पर उसका मात्राभार १ ही रहती है

(५) व्यंजन में दीर्घ स्वर आ,ई,ऊ,ए,ऐ,ओ,औ की मात्रा लगने पर उसका मात्राभार .... २ हो जाता है

(६) किसी भी वर्ण में **अनुनासिक** लगने से मात्राभार में कोई अन्तर नहीं पडता है, ... जैसे - रँग=११ , चाँद=२१ , माँ=२ , आँगन=२११, गाँव=२१

(७) लघु वर्ण के ऊपर **अनुस्वार** लगने से उसका मात्राभार २ हो जाता है , जैसे - .... रंग=२१ , अंक=२१ , कंचन=२११ ,घंटा=२२ , पतंगा=१२२

(८) गुरु वर्ण पर **अनुस्वार** लगने से उसके मात्राभार में कोई अन्तर नहीं पडता है, ... जैसे - नहीं=१२ , भींच=२१ , छींक=२१ ,

.... कुछ विद्वान इसे अनुनासिक मानते हैं लेकिन मात्राभार यही मानते हैं,

(९) **संयुक्ताक्षर** का मात्राभार १ (लघु) होता है , जैसे - स्वर=११ , प्रभा=१२

.... श्रम=११ , च्यवन=१११

(१०) **संयुक्ताक्षर** में ह्रस्व मात्रा लगने से उसका मात्राभार १ (लघु) ही रहता है , ... जैसे - प्रिया=१२ , क्रिया=१२ , द्रुम=११ ,च्युत=११, श्रुति=११

(११) **संयुक्ताक्षर** में दीर्घ मात्रा लगने से उसका मात्राभार २ (गुरु) हो जाता है ,

..... जैसे - भ्राता=२२ , श्याम=२१ , स्नेह=२१ ,स्त्री=२ , स्थान=२१ ,

(१२) **संयुक्ताक्षर** से पहले वाले लघु वर्ण का मात्राभार २ (गुरु) हो जाता है ,

..... जैसे - नम्र=२१ , सत्य=२१ , विख्यात=२२१

(१३) **संयुक्ताक्षर** के पहले वाले गुरु वर्ण के मात्राभार में कोई अन्तर नहीं पडता है, ... जैसे - हास्य=२१ , आत्मा=२२ , सौम्या=२२ , शाश्वत=२११ , भास्कर=२११.

(१४) **संयुक्ताक्षर** सम्बन्धी नियम (१२) के कुछ **अपवाद** भी हैं , जिसका आधार ..... पारंपरिक उच्चारण है, अशुद्ध उच्चारण नहीं। मुख्यतः ल्ह, न्ह, म्ह के पहले अगर लघु है एवं ये भी लघु है तो पहले वाला दीर्घ हो जायगा, अगर ये दीर्घ हैं एवं पहले वाला लघु है तो भी यह लघु ही रहेगा दीर्घ नहीं बनेगा उदहारण :

तुम्हें=१२ , तुम्हारा/तुम्हारी/तुम्हारे=१२२, जिन्हें=१२, जिन्होंने=१२२,

..... कुम्हार=१२१, कन्हैया=१२२ , मल्हार=१२१ यहाँ संयुक्त अक्षर के पहले का अक्षर लघु है फिर भी दीर्घ नहीं बना क्योंकि यहाँ ह दीर्घ है

यहाँ ह लघु है अतः संयुक्ताक्षर के पहले वाला अक्षर दीर्घ बन गया जैसे कुल्हड़=211 अल्हड 211.

तुकान्तता के नियम

-सौरभ पाण्डेय

काव्यकर्म में पदों या पंक्तियों में तुकान्तता का बड़ा महत्त्व है। इनके बिना सार्थक और स्वीकार्य गेय रचनाएँ – अर्थात् छंद, गीत, नवगीत आदि उचित नहीं मानी जानी चाहिये, कारण कि, **गेय रचनाओं** के लालित्य और प्रस्तुतीकरण में भारी कमी आ जाती है।

अर्थात् काव्यकर्म में मात्र मात्राओं या वर्णों का ही निर्वाह न हो, बल्कि गेय (मात्रिक या वर्णिक) रचनाओं में उनके पदों या उनकी पंक्तियों का अन्त भी नियमानुकूल हो। इस तथ्य का कविगन अवश्य ध्यान रखें। तुकान्तता के निर्वहन में मात्र अन्त्याक्षर ही नहीं मिलाये जाते, बल्कि स्वर के अनुसार भी शब्दों का मिलाना आवश्यक हुआ करता है। पदों या पंक्तियों के तुकान्त तीन तरह के होते हैं :

1) उत्तम तुकान्तता
2) मध्यम तुकान्तता
3) निकृष्ट या अधम तुकान्तता

सलाह तो यही दी जाती है कि रचनाओं में गेयता और उच्चारण के अनुसार निकृष्ट या अधम तुकान्तता से उत्तरोत्तर बचने का प्रयास हो।
उदाहरण :

तुकान्तता	उत्तम	मध्यम	निकृष्ट
IS	खाइये, जाइये/	सूचना, बूझना/	देखिये, रोइये
II	आवत, जावत /	जागत, पावत /	साजन, दीनन
III	नमन, गमन/	सुमति, विपति/	उचित, सुनत
IIII	बरसत, तरसत /	विहँसत, हुलसत /	अरुचित, तड़पत
SS	मनाना, जनाना/	सहारा, सकारा/	विधाता, पलीता
SI	विधान, निधान/	सुधार, हज़ार/	सुधीर, कहार

अर्थात्, तुकान्त में अंत्याक्षर और उनके स्वर का अनरूप भी अवश्य मिले हों, और जहाँ तक संभव हो, अन्त के ठीक पूर्व का अक्षर भी समवर्णी ही हो। यदि वह समवर्णी न बन पाये तो समान स्वर का तो अवश्य हो। इस कारण कविता सुनने और पढ़ने में सरस और सुगढ़ लगती है।

इस हिसाब से, उत्तम और मध्यम तुकांतता सर्वमान्य और स्वीकार्य हैं।
मात्र स्वर सामिप्य के आधार पर हुई तुकान्तता कर्णकटु लगती है। अतः सर्वमान्य नहीं है। इस तरह की किसी तुकान्तता से जहाँ संभव हो, बचना चाहिये।

वैसे हिन्दी भाषा के काव्यकर्म में अंग्रेज़ी या संस्कृत भाषा की तरह भिन्न तुकान्तता के भी प्रयोग हुए हैं। ऐसी तुकान्तायें पंक्तियों या पदों के शब्द संयोजन के आधार पर ही मान्य या अमान्य हुआ करती हैं।

छंदों के प्रकार
==सुरेश चौधरी

प्रयोग के हिसाब से छंदों के दो भेद हैं- वैदिक और लौकिक। वैदिक छंद सात हैं- गायत्री, उष्णिक, अनुष्टुप, वृहती, पंक्ति, त्रिष्टुप और जगती। लैकिक छंद कई हैं जैसे- मंदाक्रांता, घनाक्षरी, दोहा, चौपाई आदि। अब छंदों की नियम व्यवस्था पर आते हैं। इस हिसाब से मोटे तौर पर दो विभाजन हैं (कुछ विद्वान तीन भी मानते है, विस्तार भय से इस पर फ़िलहाल चर्चा नहीं करेंगे)- मात्रिक छंद और वार्णिक छंद। मात्रिक में सिर्फ़ मात्राओं का बंधन होता है साथ ही कहीं कहीं पर लगु, गुरु का क्रम होता है, जबकि वार्णिक वृत्तों में वर्णों का एक विशिष्ट क्रम होता है। आगे इस संबंध में विस्तार से चर्चा की जायेगी। एक छंद में सामान्यतया चार पाद होते हैं और अगर इन चारों पादों में समान योजना हो तो इन्हे सम, सम और विषम पादों में एक सी योजना हो तो अर्द्धसम और सभी पादों में अलग योजना हो, तो इन्हें विषम कहा जाता है। नीचे के चित्र में देखें-

छंद

मात्रिक -----------वार्णिक

सम-अर्धसम-विषम   गणात्मक अगणात्मक।

वर्णिक छन्द

इनमें वृत्तों की संख्या निश्चित रहती है। इसके दो भी प्रकार हैं- **गणात्मक** और **अगणात्मक**।

गणात्मक वणिंक छंदों को **वृत्त** भी कहते हैं। इनकी रचना तीन लघु और दीर्घ गणों से बने हुए गणों के आधार पर होती है। लघु तथा दीर्घ के विचार से यदि वर्णों के प्रस्तार-व्यवस्था की जाए आठ रूप बनते हैं। इन्हीं को "आठ गण" कहते हैं इनमें भ, न, म, य शुभ गण माने गए हैं और ज, र, स, त अशुभ माने गए हैं। वाक्य के आदि में प्रथम चार गणों का प्रयोग उचित है, (**भ-**गुरु-लघु-लघु **न-**लघु-लघु-लघु **भ-**गुरु-लघु-लघु य-लघु-गुरु-गुरु) अंतिम चार का प्रयोग निषिद्ध है। यदि अशुभ गणों से

प्रारंभ होनेवाले छंद का ही प्रयोग करना है, देवतावाची या मंगलवाची वर्ण अथवा शब्द का प्रयोग प्रथम करना चाहिए - इससे गणदोष दूर हो जाता है। इन गणों में परस्पर मित्र, शत्रु और उदासीन भाव माना गया है। छंद के आदि में दो गणों का मेल माना गया है। वर्णों के लघु एवं दीर्घ मानने का भी नियम है। लघु स्वर अथवा एक मात्रावाले वर्ण लघु अथवा ह्रस्व माने गए और इसमें एक मात्रा मानी गई है। दीर्घ स्वरों से युक्त संयुक्त वर्णों से पूर्व का लघु वर्ण भी विसर्ग युक्त और अनुस्वार वर्ण तथा छंद का वर्ण दीर्घ माना जाता है।

अगणात्मक वर्णिक वृत्त वे हैं जिनमें गणों का विचार नहीं रखा जाता, केवल वर्णों की निश्चित संख्या का विचार रहता है विशेष मात्रिक छंदों में केवल मात्राओं का ही निश्चित विचार रहता है और यह एक विशेष लय अथवा गति (पाठप्रवाह अथवा पाठपद्धति) पर आधारित रहते हैं। इसलिये ये छंद लयप्रधान होते हैं।
संस्कृत में अधिकतर वर्णिक छंदों का ही ज्ञान कराया जाता है; मात्रिक छन्दों का कम।

मात्रिक छंद

सम, विषम, अर्धसम छन्द

छंदों का विभाजन मात्राओं और वर्णों की चरण-भेद-संबंधी विभिन्न संख्याओं पर आधारित है।
इस प्रकार छंद सम, विषम, अर्धसम होते हैं।
सम छंदों में छंद के चारों चरणों में वर्ण स्वर संख्या समान रहती है।
अर्धसम में प्रथम, तृतीय और द्वितीय तथा चतुर्थ में वर्णस्वर संख्या समान रहती है।
विषम छंद के चारों चरणों में वर्णों एवं स्वरों की संख्या असमान रहती है।
ये वर्ण परस्पर पृथक् होते हैं वर्णों और मात्राओं की कुछ निश्चित संख्या के पश्चात् बहुसंख्यक वर्णों औ स्वरों से युक्त छंद दंडक कहे जाते है। इनकी संख्या बहुत अधिक है।

स्वतंत्र छंद और मिश्रित छंद:

छंदों का विभाजन फिर अन्य प्रकार से भी किया जा सकता है। स्वतंत्र छंद और मिश्रित छंद। स्वतंत्र छंद एक ही छंद विशेष नियम से रचा हुआ रहता है।
मिश्रित छंद दो प्रकार के है :
(१) जिनमें दो छंदों के चरण एक दूसरे से मिला दिए जाते हैं। प्राय: ये अलग-अलग जान पड़ते हैं किंतु कभी-कभी नहीं भी जान पड़ते।
(२) जिनमें दो स्वतंत्र छंद स्थान-स्थान पर रखे जाते है और कभी उनके मिलाने का प्रयत्न किया जाता है, जैसे कुंडलिया छंद एक दोहा और चार पद रोला के मिलाने से बनता है।
दोहा और रोला के मिलाने से दोहे के चतुर्थ चरण की आवृत्ति उसके प्रथम चरण के आदि में की जाती है और दोहे के प्रारंभिक कुछ शब्द रोले के अंत में रखे जाते हैं। दूसरे प्रकार का मिश्रित छंद है "छप्पय" जिसमें चार चरण रोला के देकर दो उल्लाला के दिए जाते हैं। इसीलिये इसे षट्पदी अथवा छप्पय (छप्पद) कहा जाता है।
इनके देखने से यह ज्ञात होता है कि छंदों का विकास न केवल प्रस्तार के आधार पर ही हुआ है वरन् कवियों के द्वारा छंद-मिश्रण-विधि के आधार पर भी हुआ है। इसी प्रकार कुछ छंद किसी एक छंद के विलोम रूप के भाव से आए हैं जैसे दोहे का विलोम सोरठा है। ऐसा प्रतीत होता है कि कवियों ने बहुधा इसी एक छंद में दो एक वर्ण अथवा मात्रा बढ़ा घटाकर भी छंद में रूपांतर कर नया छंद बनाया है। यह छंद प्रस्तार के अंतर्गत आ सकता है।

मानस में विभिन्न छंदों का प्रयोग

--सुरेश चौधरी

(गूगल के विभिन्न लेखों के सहयोग से लिखित)

मानस में विविध छन्दों की सङ्ख्या: चौपाई - ९३८८, दोहा - ११७२, सोरठा - ८७, श्लोक (अनुष्टुप्, शार्दूलविक्रीडित, वसन्ततिलका, वंशस्थ, उपजाति, प्रमाणिका, मालिनी, स्रग्धरा, रथोद्धता, भुजङ्गप्रयात, तोटक) - ४७, छन्द (हरिगीतिका, चौपैया, त्रिभङ्गी, तोमर) - २०८। कुल १०९०२।

श्रीरामचरितमानस में संस्कृत श्लोकों में प्रयुक्त छन्द

मानस में कुल मिलाकर ४७ संस्कृत के श्लोक हैं जिनके छन्द इस प्रकार हैं:

अनुष्टुप्

यह मानस का पहला छन्द है। वाल्मीकि रामायण मुख्यतः इसी छन्द में लिखी हुई है। इसे श्लोक भी कहते हैं। यह छन्द न पूर्णत: मात्रिक है, न ही पूर्णत: वार्णिक। इसमें चार चरण होते हैं। हर चरण में आठ वर्ण होते हैं - पर मात्राएँ सबमें भिन्न भिन्न। प्रत्येक चरण में पाँचवा वर्ण लघु और छठा वर्ण गुरु होता है। पहले और तीसरे चरण में सातवाँ वर्ण गुरु होता है, और दूसरे और चौथे में सातवाँ वर्ण लघु होता है। प्रत्येक चरण के बाद यति होती है। मानस में ७ अनुष्टुप् छन्द हैं - पाँच बालकाण्ड के प्रारंभ में (१.१.१-१.१.५), एक युद्धकाण्ड के प्रारंभ में (६.१.३) और एक उत्तरकाण्ड में रुद्राष्टकम् के अन्त में (७.१०८.९)। उदाहरण - मानस का पहला छन्द (१.१.१) - *वर्णानामर्थसङ्घानां रसानां छन्दसामपि। मङ्गलानां च कर्तारौ वन्दे वाणीविनायकौ।।*

शार्दूलविक्रीडित

इस मनोरम छन्द में चार चरण होते हैं। प्रत्येक चरण में १९ वर्ण होते हैं | १२ वर्णों के पश्चात् तथा चरण के अन्त में यति होती है। गणों का क्रम इस प्रकार है - म स ज स त त ग। मानस में यह छन्द सभी काण्डों में प्रयुक्त है (दोहा, सोरठा, चौपाई और हरिगीतिका भी सभी काण्डों में प्रयुक्त हैं) । मानस में १० शार्दूलविक्रीडित छन्द हैं -

बालकाण्ड (१.१.६), अयोध्याकाण्ड (२.१.१), सुन्दरकाण्ड (५.१.१) और युद्धकाण्ड (६.१.२) के प्रारम्भ में एक-एक, अरण्यकाण्ड (३.१.१, ३.१.२) और किष्किन्धाकाण्ड (४.१.१, ४.१.२) के प्रारम्भ में दो-दो, और उत्तरकाण्ड के (और मानस के) अन्तिम दो छन्द (७.१३१.१, ७.१३१.२) | उदाहरण - मानस का अन्तिम छन्द (७.१३१.२) –

पुण्यं पापहरं सदा शिवकरं ज्ञानभक्तिप्रदं मायामोहमलापहं सुविमलं प्रेमाम्बुपूरं शुभम्। श्रीमद्रामचरित्रमानसमिदं भक्त्यावगाहन्ति ये ते
संसारपतङ्गघोरकिरणैर्दह्यन्ति नो मानवाः।।

वसन्ततिलका

इसे उद्धर्षिणी या सिंहोन्नता भी कहते हैं। यह बड़ा ही सुन्दर छन्द है। इसमें चार चरण होते हैं। प्रत्येक चरण में १४ वर्ण होते हैं, ८ वर्णों के बाद यति होती है। गणों का क्रम इस प्रकार है - त-भ-ज-ज-ग-ग। "उक्ता वसन्ततिलका तभजा जगौ गः"। मानस में दो स्थानों पर यह छन्द प्रयुक्त है -

१) बालकाण्ड के प्रारम्भ में (१.१.७)

नानापुराणनिगमागमसम्मतं यद्रामायणे निगदितं क्वचिदन्यतोऽपि। स्वान्तःसुखाय तुलसी रघुनाथगाथाभाषानिबन्धमतिमञ्जुलमातनोति।।

२) सुन्दरकाण्ड के प्रारम्भ में (५.१.२)

नान्या स्पृहा रघुपते हृदयेऽस्मदीये सत्यं वदामि च भवानखिलान्तरात्मा,
भक्तिं प्रयच्छ रघुपुङ्गव निर्भरां मे कामादिदोषरहितं कुरु मानसं च।।

वंशस्थ

इसे वंशस्थविल अथवा वंशस्तनित भी कहते हैं। इसके चार चरण होते हैं। प्रत्येक चरण में १२ वर्ण होते हैं और गणों का क्रम होता है - ज त ज र। प्रत्येक चरण में पाँचवे और बारहवे वर्ण के बाद यति होती है। मानस में केवल एक वंशस्थ छन्द का प्रयोग है अयोध्याकाण्ड के प्रारम्भ में (२.१.२) -

प्रसन्नतां या न गताभिषेकतस्तथा न मम्लौ वनवासदुःखतः। मुखाम्बुजश्री रघुनन्दनस्य मे सदाऽस्तु सा मञ्जुलमङ्गलप्रदा।।

स्मरण रहे कि कुछ प्रतियों में "मम्ले" पाठ छपा है जो अशुद्ध है। हमारे गुरुदेव के अनुसार - "ग्लैम्लै धातुक्षये" इस गणपाठ सूत्र से म्लै धातु परस्मैपदी होने के कारण लिट्लकार प्रथमपुरुष एकवचन में "मम्लौ" रूप ही बनता है।

उपजाति

इन्द्रवज्रा (चार चरण, ११ वर्ण - त त ज ग ग) और **उपेन्द्रवज्रा** (चार चरण, ११ वर्ण - ज त ज ग ग) के चरण जब एक ही छन्द में प्रयुक्त हों तो उस छन्द को उपजाति कहते हैं। साधारणतः उपजाति छन्द संस्कृत के काव्यों में सबसे अधिक प्रयुक्त होता है, परन्तु मानस में यह एक ही स्थान पर प्रयुक्त हुआ है। अयोध्याकाण्ड के प्रारंभ में (२.१.३)।

नीलाम्बुजश्यामलकोमलाङ्गं सीतासमारोपितवामभागम्।
पाणौ महासायकचारुचापं नमामि रामं रघुवंशनाथम्।।

गुरुवर के अनुसार यह श्लोक एकाक्षरी रामायण कहलाने योग्य हैं, क्योंकि इसके चार चरणों में प्रभु श्रीराम की चार लीलाओं - बाललीला, विवाहलीला, रणलीला और राज्यलीला का एक ही श्लोक में वर्णन है।

प्रमाणिका

इसके चार चरण होते हैं। प्रत्येक चरण में ८-८ वर्ण होते हैं। चरण में वर्णों का क्रम लघु-गुरु-लघु-गुरु-लघु-गुरु-लघु-गुरु (|ऽ|ऽ|ऽ|ऽ) होता है। गणों में लिखे तो ज-र-ल-ग। मानस में १३ प्रमाणिकाएँ हैं। अरण्यकाण्ड में अत्रि मुनि कृत स्तुति (३.४.१ से ३.४.१२) में १२ प्रमाणिकाएँ प्रयुक्त हैं जिनमें से प्रथम है:

नमामि भक्तवत्सलं कृपालुशीलकोमलम्।
भजामि ते पदाम्बुजं अकामिनां स्वधामदम्।।

गुरुदेव के अनुसार १२ प्रमाणिकाएँ प्रयुक्त होने का कारण है कि प्रभु राम ने १२ वर्षों तक चित्रकूट में निवास किया था। उत्तरकाण्ड में काकभुशुण्डि-गरुड़ संवाद में एक प्रमाणिका है - ७.१२२(ग)।

विनिश्चितं वदामि ते न अन्यथा वचांसि मे।
हरिं नरा भजन्ति येऽतिदुस्तरं तरन्ति ते।।

मालिनी

इसके चार चरण होते हैं। प्रत्येक चरण में पन्द्रह (१५) वर्ण होते हैं - दो नगण, एक मगण और दो यगण (न-न-म-य-य) होते हैं। आठवें वर्ण पर और चरण के अंत में यति होती है। मानस में केवल एक मालिनी छन्द है, जो सुन्दरकाण्ड के प्रारम्भ में हनुमान जी की स्तुति में आता है (५.१.३) –

अतुलितबलधामं स्वर्णशैलाभदेहं, दनुजवनकृशानुं
ज्ञानिनामग्रगण्यम् सकलगुणनिधानं वानराणामधीशंरघुपतिवरदूतं वातजातं
नमामि।।

स्रग्धरा

स्रग्धरा मानस में प्रयुक्त संस्कृत छन्दों में सबसे लम्बा है। इसके चार चरण होते हैं। प्रत्येक चरण में वर्ण २१ होते हैं, और ७-७-७ के क्रम से यति। गणों का क्रम इस प्रकार है - म-र-भ-न-य-य-य। तदनुसार लघु (।) – गुरु (ऽ) का क्रम इस प्रकार है - ऽ ऽ ऽ ऽ । ऽ ऽ (यति) । । । । । । ऽ (यति) ऽ । ऽ ऽ । ऽ ऽ (यति)। मानस में दो स्थानों पर यह छंद प्रयुक्त है -

१) युद्धकाण्ड पहला (६.१.१)

रामं कामारिसेव्यं भवभयहरणं कालमत्तेभसिंहं योगीन्द्रज्ञानगम्यं गुणनिधिमजितं
निर्गुणं निर्विकारम्। मायातीतं सुरेशं खलवधनिरतं ब्रह्मवृन्दैकदेवं वन्दे कन्दावदातं
सरसिजनयनं देवमुर्वीशरूपम्।।

२) उत्तरकाण्ड पहला छन्द (७.१.१)

केकीकण्ठाभनीलं सुरवरविलसद्विप्रपादाब्जचिह्नं शोभाढ्यं पीतवस्त्रं सरसिजनयनं सर्वदा सुप्रसन्नम्। पाणौ नाराचचापं कपिनिकरयुतं बन्धुना सेव्यमानं नौमीड्यं जानकीशं रघुवरमनिशं पुष्पकारूढरामम्॥

रथोद्धता

इसके चार चरण होते हैं। प्रत्येक चरण में ११-११ वर्ण होते हैं। गणों का क्रम है र-न-र-ल-ग। हर चरण में तीसरे/चौथे वर्ण के बाद यति होती है। मानस में उत्तरकाण्ड के प्रारंभ में दो रथोद्धता छन्द हैं (७.१.२ और ७.१.३) –

कोसलेन्द्रपदकञ्जमञ्जुलौ कोमलावजमहेशवन्दितौ। जानकीकरसरोजलालितौ चिन्तकस्य मनभृङ्गसङ्गिनौ॥ कुन्द इन्दुदरगौरसुन्दरं म्बिकापतिमभीष्टसिद्धिदम्। कारुणीककलकञ्जलोचनं नौमि शङ्करमनङ्गमोचनम्॥

गुरुवचन के अनुसार ७.१.३ के प्रारंभ में "कुन्दः मन्दबुद्धिः इन्दुदरगौरसुन्दरम्" विग्रह समझना चाहिए। कुन्दः अहम् तुलासीदासः शंकरं नौमि इति। सन्धि के कारण कुन्दः के विसर्ग का लोप हो गया है।

भुजङ्गप्रयात

इसके चार चरण होते हैं। हर चरण मे चार यगण होते हैं (य-य-य-य) । उत्तरकाण्ड में रुद्राष्टक (७.१०८.१-७.१०८.८) में ब्राह्मण द्वारा की गयी शिवजी की स्तुति में आठ भुजङ्गप्रयात छन्दों का प्रयोग है, जिनमें से प्रथम है –
नमामीशमीशाननिर्वाणरूपं विभुं व्यापकं ब्रह्मवेदस्वरूपम्।
निजं निर्गुणं निर्विकल्पं निरीहं चिदाकाशमाकाशवासं भजेऽहम्॥

श्रीरामचरितमानस में प्राकृत (अवधी) भाषा में प्रयुक्त छन्द

सोरठा (सौराष्ट्र)

यह मानस में प्राकृत में पहला छन्द है। यह मात्रिक छन्द है। इसमें चार चरणों में ११-१३ ११-१३ मात्राएँ होती हैं। हर चरण के अन्त में यति होती है। पहले और तीसरे चरण के अन्त में तुक होता है, और तुक में गुरु-लघु का क्रम रहता है। ११ मात्राएँ ६-४-१ और १३ मात्राएँ को ६-४-३ में विभाजित होती हैं, परन्तु इस विभाजन में यति या शब्द सीमा का कोई नियम नहीं है। हर चरण के अन्त पर शब्द सीमा होती है। उदाहरण (१.१.८) –

जेहि सुमिरत सिधि होइ गन नायक करिबर बदन।
करउ अनुग्रह सोइ बुद्धि रासि सुभ गुन सदन।।

दोहा में १३-११ १३-११ का क्रम रहता है और तुक दूसरे और चौथे चरण में बनता है - बाकी सब सोरठे जैसा ही है। वैसे यहाँ भी दूसरे और चौथे चरण में तुक है लेकिन यह दोहा नहीं है क्योंकि बदन और सदन में तुक में गुरु-लघु का क्रम नहीं है, और दूसरे पंक्ति में १३ मात्राओं के बाद यति (शब्द का अंत) नहीं है, "करउ अनुग्रह सोइ" में "बुद्धि" जोड़ने से ११ से सीधे १४ मात्राएँ हो जायेंगी और क्रम १४-१० हो जायेगा। मानस में ८७ सोरठे हैं - बालकाण्ड में ३६, अयोध्याकाण्ड में १३ (हर पच्चीसवे चौपाई समूह के बाद - २.२५, २.५०, २.७५, २.१००, २.१२६, २.१५१,इत्यादि), अरण्यकाण्ड में ८, किष्किन्धाकाण्ड में ३, सुन्दरकाण्ड में १, युद्धकाण्ड में ९ और उत्तरकाण्ड में १७।

चौपाई

<u>इस मात्रिक छन्द के दो चरण होते हैं, प्रत्येक में १६-१६ मात्राएँ होती हैं। हर चरण में ८ मात्राओं के बाद यति होती है</u>। केवल एक चरण हों तो उसे अर्धाली कहते हैं। यह मानस का प्रमुख छन्द है। प्रथम और द्वितीय चरण के अन्त में तुक होता है। उदाहरण (५.४०.६) -
जहाँ सुमति तहँ संपति नाना। जहाँ कुमति तहँ बिपति निदाना।। (यह आधा है)

हनुमान चालीसा में भी यही छंद है, और वहाँ ४० चौपाइयाँ हैं। मानस में कुल ९३८८ चौपाइयाँ हैं, जिनकी उपमा इस अर्धाली (१.३७.४) में गोस्वामी जी ने मानससरोवर के घने कमल के पत्तों से दी है -

पुरइनि सघन चारु चौपाई।

दोहा (द्विपाद)

यह भी एक मात्रिक छंद है। इसमें चार चरणों में १३-११ १३-११ मात्राएं होती हैं। हर चरण के अन्त में यति होती है। दूसरे और चौथे चरण के अन्त में तुक होता है, और तुक में गुरु-लघु का क्रम रहता है। १३ मात्राएँ ६-४-३ और ११ मात्राएँ को ६-४-१ में विभाजित होती हैं, परन्तु इस विभाजन में यति या शब्द सीमा का कोई नियम नहीं है। हर चरण के अन्त पर शब्द सीमा होती है। उदाहरण (१.१) -

जथा सुअंजन अंजि दृग साधक सिद्ध सुजान।

कौतुक देखत सैल बन भूतल भूरि निधान।।

श्रीरामचरितमानस में ११७२ दोहे हैं - जिनमें बालकाण्ड में ३५९, अयोध्याकाण्ड में ३१४, अरण्यकाण्ड में ५१, किष्किन्धाकाण्ड में ३१, सुन्दरकाण्ड में ६२, युद्धकाण्ड में १४८ और उत्तरकाण्ड में २०७ दोहे सम्मिलित हैं।

हरिगीतिका

यदि मानस कि चौपाइयाँ कमल हैं और दोहे-सोरठे कुमुद हैं, तो निश्चित रूप से हरिगीतिका उत्तुङ्ग शिखरों पे दीखने वाला "ब्रह्मकमल" है। यह छन्द गाने में अत्यन्त मनोहर है, और इसमें गोस्वामीजी के भाव ऐसे निखर के सामने आते हैं कि इस छन्द की शोभा सुनते ही बनती है। इसमें चार चरण होते हैं। प्रत्येक चरण में २८ मात्राएँ होती हैं, जोकि ७-७-७-७ (२-२-१-२, २-२-१-२, २-२-१-२, २-२-१-२) के क्रम से होती हैं। प्रत्येक सातवीं मात्रा के बाद यति होती है। पहले और दूसरे चरण के अन्त में तुक होता है, और तीसरे और चौथे चरण के अन्त में भी तुक होता है। तुक में क्रम लघु-गुरु होता है। मानस में हरिगीतिका चौपाइयों और दोहा/सोरठा के बीच आता है। और इसके प्रारम्भ के २-३ शब्द प्रायः इसके पहले की चौपाई के अंत के २-३ शब्द अथवा उन शब्दों के पर्याय होते है। ध्यान देने योग्य है कि शिव विवाह में ११ स्थानों पर (१ सोरठा और १० दोहों के पहले) और राम विवाह में

१२ स्थानों पर (१२ दोहों के पहले) हरिगीतिका छन्द है - स्वामी अखण्डानन्द सरस्वती के अनुसार इसका कारण है कि रुद्र (शिव) ११ हैं और आदित्य (विष्णु) १२ हैं। उदाहरण (५.३५.११) –

चिक्करहिं दिग्गज डोल महि गिरि लोल पावक खरभरे।
मन हरष सभ गंधर्ब सुर मुनि नाग किंनर दुख टरे॥
कटकटहिं मर्कट बिकट भट बहु कोटि कोटिन्ह धावहीं।
जय राम प्रबल प्रताप कोसलनाथ गुन गन गावहीं॥

मानस में केवल पाँच छन्द हैं जो प्रत्येक काण्ड में हैं - चौपाई, दोहा, हरिगीतिका, सोरठा और शार्दूलविक्रीडित। हरिगीतिकाओं की सङ्ख्या १३९ है - बालकाण्ड में ४७, अयोध्याकाण्ड में १३, अरण्यकाण्ड में १४, किष्किन्धाकाण्ड में ३, सुन्दरकाण्ड में ६, युद्धकाण्ड में ३८ और उत्तरकाण्ड में १८।

चौपैया

चार चरण, हर चरण में ३० मात्राएँ (१०-८-१२) , १० और १८ मात्राओं के बाद यति, हर चरण के अंत में गुरु। पहले और दूसरे चरणों के अन्त में तुक, तीसरे और चौथे चरणों के अंत में तुक। और साथ ही हर चरण के अन्दर १० और १८ मात्राओं के अन्त पे भी तुक। ध्यान रहे - त्रिभङ्गी में १०-८-१४ मात्राओं का क्रम है, और यहाँ १०-८-१२। मानसजी में बालकाण्ड में १० चौपैया छन्दों का प्रयोग है - १.१८३.९, १.१८४.९, १.१८६.१ से १.१८६.४, १.१९२.१ से १.१९२.४। इनमें देवताओं द्वारा श्रीरामचन्द्र की स्तुति (१.१८६.१ से १.१८६.४,) और श्रीराम का आविर्भाव (१.१९२.१ से १.१९२.४) तो मानस प्रेमियों को अत्यन्त प्रिय हैं। उदाहरण –

१) देवताओं की स्तुति (१.१८६.१)
जय जय सुरनायक (१०) + जन सुखदायक (८) + प्रनतपाल भगवंता (१२) = ३० | गो द्विज हितकारी (१०) + जय असुरारी (८) + सिंधुसुता प्रिय कंता (१२) = ३० ||

पालन सुर धरनी (१०) अद्भुत करनी (८) मरम न जानई कोई (१२) = ३० | जो सहज कृपाला (१०) + दीनदयाला (८) करउ + अनुग्रह सोई (१२) = ३० ||

२) श्रीराम जी का आविर्भाव (१.१९२.१)

भए प्रगट कृपाला (१०) + दीनदयाला (८) + कौसल्या हितकारी (१२) = ३० | हरषित महतारी (१०) + मुनि मन हारी (८) + अद्भुत रूप बिचारी (१२) = ३० || लोचन अभिरामा (१०) + तनु घनश्यामा (8) + निज आयुध भुज चारी (१२) = ३० | भूषन बनमाला (१०) + नयन बिशाला (८) शोभासिन्धु खरारी (१२) = ३०||

त्रिभङ्गी

त्रिभङ्गी के एक चरण में ३२ मात्राएँ होती हैं। इसमें एक चरण के अन्दर भी तुक होता है और चरणों के बीच मैं भी। प्रथम और द्वितीय चरणों में, और तृतीय और चतुर्थ चरणों में तुक होता है - और हर चरण का अन्तिम वर्ण गुरु होता है। ३२ मात्राएँ १०-८-१४ में विभाजित हैं, १० और ८ के बीच यति है, और ८ और १४ के बीच यति है। साथ में १० मात्राओं के अन्तिम वर्ण और ८ मात्राओं के अन्तिम वर्ण में भी तुक बनता है। ऐसे त्रिभंगी को १०-८-८-६ में भी बाँटते हैं, पर मानस में सर्वत्र अन्तिम ८ और ६ के बीच यति न होने के कारण १०-८-१४ का क्रम दिया गया है। मानस में बालकाण्ड में अहल्योद्धार के प्रकरण में चार (४) त्रिभङ्गी छन्द प्रयुक्त हुए हैं - १.२११.१ से १.२११.४। गुरुवचन के अनुसार इसका कारण है कि अपने चरण से अहल्या माता को छूकर प्रभु श्रीराम ने अहल्या के पाप, ताप और शाप को भङ्ग (समाप्त) किया, अतः गोस्वामी जी की वाणी में सरस्वतीजी ने त्रिभङ्गी छन्द को प्रकट किया। उदाहरण (१.२११.१) –

परसत पद पावन (१०) + शोक नसावन (८) + प्रगट भई तपपुंज सही (१४) = ३२ | देखत रघुनायक (१०) + जन सुखदायक (८) + सनमुख होइ कर जोरि रही (१४) = ३२ || अति प्रेम अधीरा (१०) + पुलक शरीरा (८) + मुख नहिं आवइ बचन कही (१४) = ३२ | अतिशय बड़भागी (१०) + चरनन लागी (८) + जुगल नयन जलधार बही (१४) = ३२ ||

तोमर

तोमर एक मात्रिक छन्द है जिसके प्रत्येक चरण में १२ मात्राएँ होती हैं। पहले और दुसरे चरण के अन्त में तुक होता है, और तीसरे और चौथे चरण के अन्त में भी तुक होता है। मानस में तीन स्थानों पर आठ-आठ (कुल २४) तोमर छन्दों का प्रयोग है। ये तीन स्थान हैं १) अरण्यकाण्ड में खर, दूषण, त्रिशिरा और १४००० राक्षसों की सेना के साथ प्रभु श्रीराम का युद्ध (३.२०.१ से ३.२०.८) –

तब चले बान कराल | फुंकरत जनु बहु ब्याल | कोपेउ समर श्रीराम | चले बिशिख निशित निकाम ||

२) युद्धकाण्ड में रावण का मायायुद्ध (६.१०१.१ से ६.१०१.८)

जब कीन्ह तेहिं पाषंड | भए प्रगट जंतु प्रचंड || बेताल भूत पिशाच | कर धरें धनु नाराच ||

३) युद्धकाण्ड में वेदवतीजी के अग्निप्रवेश और सीताजी के अग्नि से पुनरागमन के पश्चात् इन्द्रदेव द्वारा राघवजीकी स्तुति (६.११३.१ से ६.११३.८)

जय राम शोभा धाम | दायक प्रनत बिश्राम || धृत तूण बर शर चाप | भुजदंड प्रबल प्रताप ||

तोटक

तोटक में चार चरण होते हैं। हर चरण में १२-१२ वर्ण होते हैं और सारे छंद में केवल "सगण" (लघु-लघु-गुरु अथवा ।।ऽ) का क्रम रहता है ("वद तोटकमब्धिसकारयुतम्")। प्रत्येक चरण में ४ सगण होते हैं। मानस जी में ३१ तोटक छन्द हैं जो कि इन स्थानों पर हैं -

१. युद्धकाण्ड में रावण वध के बाद ब्रह्माजी कृत राघवस्तुति में ग्यारह छन्द (६.१११.१ से ६.१११.११) -
जय राम सदा सुखधाम हरे | रघुनायक सायक चाप धरे ||
भव बारन दारन सिंह प्रभो | गुन सागर नागर नाथ बिभो ||

२. उत्तरकाण्ड में वेदों द्वारा की गयी स्तुति में दस छन्द (७.१४.१ से ७.१४.१०)

जय राम रमा रमणं शमनम् | भवताप भयाकुल पाहि जनम् || अवधेश सुरेश रमेश बिभो | शरणागत माँगत पाहि प्रभो ||

३. उत्तरकाण्ड में काकभुशुण्डि जी के पूर्वजन्म की कथा में विकराल कलियुग वर्णन के प्रकरण में दस छन्द (७.१०१.१ से ७.१०१.५, और ७.१०२.१ से ७.१०२.५) -

बहु दाम सँवारहिं धाम जती | विषया हरी लीन्ह गई बिरती || तपसी धनवंत दरिद्र गृही | कलि कौतुक तात न जात कही ||

हिंदी के मात्रिक छंद :

---आचार्य संजीव कृष्ण सलिल

८ मात्रा के वासव जातीय छंद :

अखंड, छवि/मधुभार विश्व वाणी हिंदी का छांदस कोश अप्रतिम, अनन्य और असीम है। संस्कृत से विरासत में मिले छंदों के साथ-साथ अंग्रेजी, जापानी आदि विदेशी भाषाओँ तथा पंजाबी, मराठी, बृज, अवधी आदि आंचलिक भाषाओं/ बोलिओं के छंदों को अपनाकर तथा उन्हें अपने अनुसार संस्कारित कर हिंदी ने यह समृद्धता अर्जित की है। हिंदी छंद शास्त्र के विकास में ध्वनि विज्ञान तथा गणित ने आधारशिला की भूमिका निभायी है।

विविध अंचलों में लंबे समय तक विविध पृष्ठभूमि के रचनाकारों द्वारा व्यवहृत होने से हिंदी में शब्द विशेष को एक अर्थ में प्रयोग करने के स्थान पर एक ही शब्द को विविधार्थों में प्रयोग करने का चलन है। इससे अभिव्यक्ति में आसानी तथा विविधता तो होती है किंतु शुद्धता नहीँ रहती। विज्ञान विषयक विषयों के अध्येताओं तथा हिंदी सीख रहे विद्यार्थियों के लिये यह स्थिति भ्रमोत्पादक तथा असुविधाकारक है। रचनाकार के आशय को पाठक ज्यों का त्यो ग्रहण कर सके इस हेतु हम छंद-रचना में प्रयुक्त विशिष्ट शब्दों के साथ प्रयोग किया जा रहा अर्थ विशेष यथा स्थान देते रहेंगे।

अक्षर / वर्ण = ध्वनि की बोली या लिखी जा सकनेवाली लघुतम स्वतंत्र इकाई।

शब्द = अक्षरों का सार्थक समुच्चय। मात्रा / कला / कल = अक्षर के उच्चारण में लगे समय पर आधारित इकाई। लघु या छोटी मात्रा = जिसके उच्चारण में इकाई समय लगे। भार १, यथा अ, इ, उ, ऋ अथवा इनसे जुड़े अक्षर, चंद्रबिंदी वाले अक्षर दीर्घ, हृस्व या बड़ी मात्रा = जिसके उच्चारण में अधिक समय लगे। भार २, उक्त लघु अक्षरों को छड़कर शेष सभी अक्षर, संयुक्त अक्षर अथवा उनसे जुड़े अक्षर, अनुस्वार (बिंदी वाले अक्षर)।

पद = पंक्ति, चरण समूह। चरण = पद का भाग, पाद। छंद = पद समूह। यति = पंक्ति पढ़ते समय विराम या ठहराव के स्थान। छंद लक्षण = छंद की विशेषता जो उसे अन्यों से अलग करतीं है।

गण = तीन अक्षरों का समूह विशेष (गण कुल ८ हैं, सूत्र: माताराजभानसलगा के पहले ८ अक्षरों में से प्रत्येक अगले २ अक्षरों को मिलाकर गण विशेष का मात्राभार / वज़्न तथा मात्राक्रम इंगित करता है. गण का नाम इसी वर्ण पर होता है। यगण = यमाता = लघु गुरु गुरु = ४, गण = मातारा = गुरु गुरु गुरु = ६, तगण = ता रा ज = गुरु गुरु लघु = ५,रगण = राजभा = गुरु लघु गुरु = ५, जगण = जभान = लघु गुरु लघु = ४, गण = भानस = गुरु लघु लघु = ४, नगण = न स ल = लघु लघु लघु = ३, सगण = सलगा = लघु लघु गुरु = ४)। तुक = पंक्ति / चरण के अन्त में शब्द/अक्षर/मात्रा या ध्वनि की समानता । गति = छंद में गुरु-लघु मात्रिक क्रम। सम छंद = जिसके चारों चरण समान मात्रा भार के हों। अर्द्धसम छंद = जिसके सम चरणोँ का मात्रा भार समान तथा विषम चरणों का मात्रा भार एक सा हो किन्तु सम तथा विषम चरणोँ क़ा मात्रा भार समान न हों। विषम छंद = जिसके चरण असमान हों।

लय = छंद पढ़ने या गाने की धुन या तर्ज़।

छंद भेद = छंद के प्रकार।

वृत्त = पद्य, छंद, वर्स, काव्य रचना । ४ प्रकार- क. स्वर वृत्त, ख. वर्ण वृत्त, ग. त्रा वृत्त, घ. ताल वृत्त।

जाति = समान मात्रा भार के छंदों का समूहनाम।

प्रत्यय = वह रीति जिससे छंदों के भेद तथा उनकी संख्या जानी जाए। ९ प्रत्यय: प्रस्तार, सूची, पाताल, नष्ट, उद्दिष्ट, मेरु, खंडमेरु, पताका तथा मर्कटी।

दशाक्षर = आठ गणों तथा लघु - गुरु मात्राओं के प्रथमाक्षर य म त र ज भ न स ल ग ।

दग्धाक्षर = छंदारंभ में वर्जित लघु अक्षर - झ ह र भ ष। देवस्तुति में प्रयोग वर्जित नहीं। गुरु या संयुक्त दग्धाक्षर छन्दारंभ में प्रयोग किया जा सकता है।

अष्ट मात्रिक छंद / वासव छंद

जाति नाम वासव (अष्ट वसुओं के आधार पर), भेद ३४, संकेत: वसु, सिद्धि, विनायक, मातृका, मुख्य छंद: अखंड, छवि, मधुभार आदि।

वासव छंदों के ३४ भेदों की मात्रा बाँट लघु-गुरु मात्रा संयोजन के आधार पर ५ वर्गों में निम्न अनुसार होगी:

अ वर्ग. ८ लघु: (१) १. ११११११११,
आ वर्ग. ६ लघु १ गुरु: (७) २. ११११११२ ३. १११११२१, ४. ११११२११, ५. १११२१११, ६. ११२११११, ७. १२१११११, ८. २११११११,
इ वर्ग. ४ लघु २ गुरु: (१५) ९. ११११२२, १०. १११२१२, ११. १११२२१, १२, ११२१२१, १३. ११२२११, १४, १२१२११, १५. १२२१११, १६. २१२१११, १७. २२११११, १८. ११२११२,, १९. १२११२१, २०. २११२११, २२. १२१११२, २३. २१११२१,
ई वर्ग. २ लघु ३ गुरु: (१०) २४. ११२२२, २५. १२१२२, २६. १२२१२, २७. १२२२१, २८. २१२२१, २९. २२१२१, ३०. २२२११, ३१. २११२२, ३२. २२११२, ३३. २१२१२
उ वर्ग. ४ गुरु: (१) २२२२
छंद की ४ या ६ पंक्तियों में विविध तुकान्तों प्रयोग कर और भी अनेक उप प्रकार रचे जा सकते हैं।

वासव

छंद-**लक्षण**: प्रति पंक्ति ८ मात्रा
लक्षण छंद:

अष्ट कला चुन
वासव रचिए।
सम तुकांत रख
रस भी चखिए।

उदाहरण:
कलकल बहती
नदिया कहती
पतवार थाम
हिम्मत न हार

अ वर्ग. .....मलयज छंद:.......... ८ लघु (११११११११)
छंद-लक्षण: प्रति पंक्ति ८ लघु मात्राएँ, प्रकार एक।
लक्षण छंद:

भव शव रव तज

सुरभित मलयज
लघु अठ कल सज
रुक मत हरि भज

उदाहरण:
१. अनवरत सतत
बढ़, न तनिक रुक
सजग रह न थक
'सलिल' न चुक-झुक

आ वर्ग. .....अष्टक छंद: ....६ लघु १ गुरु (१११११२)
छंद-लक्षण: प्रति पंक्ति ६ लघु तथा १ गुरु मात्राएँ, प्रकार ७।
लक्षण छंद:

शुभ अष्टक रच
छै लघु गुरु वर
छंद निहित सच
मधुर वाद्य सुर

उदाहरण:
१. कर नित वंदन
शुभ अभिनन्दन
मत कर क्रंदन
तज पर वंचन

इ वर्ग....... अष्टांग छंद:.......... ४ लघु २ गुरु (११११२२)
छंद-लक्षण: प्रति पंक्ति ४ लघु तथा २ गुरु मात्राएँ, प्रकार १५।
लक्षण छंद:

चौ-द्वै लघु-गुरु
अष्टांग सृजित
सत्काव्य मधुर
सत्कार्य अजित

उदाहरण:
१. संभाव्य न सच
सर्वदा घटित।
दुर्भाग्य न पर
हो सदा विजित।

ई वर्ग. ....पर्यावरणी छंद:.......... २ लघु ३ गुरु (११२२२)
छंद-लक्षण: प्रति पंक्ति २ लघु तथा ३ गुरु मात्राएँ, प्रकार १०।
लक्षण छंद:

मात्रा द्वै लघु
पूजें त्रै गुरु
पर्यावरणी
लगा रोपणी

उदाहरण:
१. नहीं फैलने
दें बीमारी।
रहे न बाकी
अब लाचारी।

उ. ४ गुरु:........... धारावाही छंद............ (२२२२)
छंद-लक्षण: प्रति पंक्ति ४ लघु तथा २ गुरु मात्राएँ, प्रकार १।
लक्षण छंद:

धारावाही
चौपालों से
शिक्षा फ़ैली
ग्रामीणों में

उदाहरण:
१. टेसू फूला
झूले झूला
गौरा-बौरा
गाये भौंरा।

अखण्ड छंद
छंद-लक्षण: वासव जाति, प्रति पंक्ति ८ मात्रा, सामान्यतः ४ पंक्तियाँ, ३२ मात्राएँ।
लक्षण छंद:

चार चरण से, दो पद रचिए
छंद अखंड न, बंधन रखिए।
अष्ट मात्रिक पंक्ति-पंक्ति हो-
बिम्ब भाव रस, गति लय लखिए।

उदाहरण:
१. सुनो प्रणेता!
बनो विजेता।
कहो कहानी,
नित्य सुहानी।
तजो बहाना,
वचन निभाना।
सजन सजा ना!
साज बजा ना!
लगा डिठौना,
नाचे छौना
चाँद चाँदनी,
पूत पावनी।
है अखंड जग,
आठ दिशा मग
पग-पग चलना,
मंज़िल वरना।
२. कवि जी! युग की
करुणा लिख दो.
कविता अरुणा-
वरुणा लिख दो.
सरदी-गरमी-
बरखा लिख दो.
बुझना-जलना-
चलना लिख दो
रुकना-झुकना-
तनना लिख दो
गिरना-उठना-
बढ़ना लिख दो
पग-पग सीढ़ी
चढ़ना लिख दो

मधुभार / छवि छंद

छंद-लक्षण: जाति वासव, प्रति पंक्ति ८ मात्रा, चरणान्त पयोधर, जगण (लघु गुरु लघु)।
लक्षण छंद:

रचें मधुभार,
कला अठ धार
जगण छवि अंत,
रखें कवि कंत
उदाहरण:
१. करुणानिधान!
सुनिए पुकार
रख दास-मान,
भव से उबार

२. कर ले सितार,
दें छेड़ तार
नित तानसेन,
सुध-बुध बिसार

३. जब लोकतंत्र,
हो लोभतंत्र
बन कोकतंत्र,
हो शोकतंत्र

दोहा --

=सुरेश चौधरी (विभिन्न आलेखों से संकलित)

दोहा गाथा सनातन, शारद कृपा पुनीत।
साँची साक्षी समय की, जनगण-मन की मीत।।

हिन्दी ही नहीं सकल विश्व के इतिहास में केवल दोहा सबसे पुराना छंद है जिसने एक नहीं अनेक बार युद्धों को रोका है, नारी के मान-मर्यादा की रक्षा की है, भटके हुओं को रास्ता दिखाया है, देश की रक्षा की है, हिम्मत हार चुके राजा को लड़ने और जीतने का हौसला दिया है, बीमारियों से बचने की राह सुझाई है और जिंदगी को सही तरीके से जीने का तरीका ही नहीं बताया भगवान के दर्शन कराने में भी सहायक हुआ है. आप इसे दोहे की अतिरेकी प्रशंसा मत मानिये.

अमरकंटकी नर्मदा,........दोहा अविरल धार।
गत-आगत से आज का, सतत ज्ञान व्यापार।।

आप यह जानकर चकित होंगे कि जाने-अनजाने आप दैनिक जीवन में कई बार दोहे कहते-सुनते हैं. आप में से हर एक को कई दोहे याद हैं.

कल का कल से आज ही, कलरव सा संवाद।
कल की कल हिन्दी करे, कलकल दोहा नाद।।
(कल = बीता समय, आगामी समय, शान्ति, यंत्र)

दोहा रचना सम्बन्धी प्रश्नों के अभाव में हम दोहा के एतिहासिक योगदान की चर्चा करेंगे। इन्द्रप्रस्थ नरेश पृथ्वीराज चौहान अभूतपूर्व पराक्रम, श्रेष्ठ सैन्यबल, उत्तम आयुध तथा कुशल रणनीति के बाद भी मो॰ गोरी के हाथों पराजित हुए। उनकी आँखें फोड़कर उन्हें कारागार में डाल दिया गया। उनके बालसखा निपुण दोहाकार चंदबरदाई (संवत् १२०५-१२४८) ने अपने मित्र को जिल्लत की जिंदगी

से आजाद कराने के लिए दोहा का सहारा लिया। उसने गोरी से सम्राट की शब्द-भेदी बाणकला की प्रशंसा कर परीक्षा किए जाने को उकसाया। परीक्षण के समय बंदी सम्राट के कानों में समीप खड़े कवि मित्र द्वारा कहा गया दोहा पढ़ा, दोहे ने गजनी के सुल्तान के आसन की ऊंचाई तथा दूरी पल भर में बतादी। असहाय दिल्लीपति ने दोहा हृदयंगम किया और लक्ष्य साध कर तीर छोड़ दिया जो सुल्तान का कंठ चीर गया। सत्तासीन सम्राट हार गया पर दोहा ने अंधे बंदी को अपनी हार को जीत में बदलने का अवसर दिया, वह कालजयी दोहा है-

चार बांस चौबीस गज, अंगुल अष्ट प्रमाण।
ता ऊपर सुल्तान है, मत चुक्कै चव्हाण।।

इतिहास गढ़ने, मोड़ने, बदलने तथा रचने में सिद्ध दोहा की जन्म कुंडली महाकवि कालिदास (ई. पू. ३००) के विकेमोर्वशीयम के चतुर्थांक में है।

मइँ जाणिआँ मिअलोअणी, निसअणु कोइ हरेइ।
जावणु णवतलिसामल, धारारुह वरिसेई।।

श्रृंगार रसावतार महाकवि जयदेव की निम्न द्विपदी की तरह की रचनाओं ने भी संभवतः वर्तमान दोहा के जन्म की पृष्ठभूमि तैयार करने में योगदान किया हो।

किं करिष्यति किं वदष्यति, सा चिरं विरहेऽण।
किं जनेन धनेन किं मम, जीवितेन गृहेऽण।।

हिन्दी साहित्य के आदिकाल (७००ई.–१४००ई.) में नाथ सम्प्रदाय के ८४ सिद्ध संतों ने विपुल साहित्य का सृजन किया। सिद्धाचार्य सरोजवज्र(स्वयंभू / सरहपा / सरह वि. सं. ६९०) रचित दोहाकोश एवं अन्य ३९ ग्रंथों ने दोहा को प्रतिष्ठित किया।
जहि मन पवन न संचरई, रवि-ससि नांहि पवेस।
तहि वट चित्त विसाम करू, सरहे कहिअ उवेस।।

दोहा की यात्रा भाषा के बदलते रूप की यात्रा है। देवसेन के इस दोहे में सतासत की विवेचना है-

जो जिण सासण भा भाषीयउ, सो मई कहियउ सारु।
जो पालइ सइ भाउ करि, सो सरि पावइ पारु।।

चलते-चलते ८ वीं सदी के उत्तरार्ध का वह दोहा देखें, जिसमें राजस्थानी वीरांगना युद्ध पर गए अपने प्रीतम को दोहा-दूत से संदेश भेजती है कि वह वायदे के अनुसार श्रावण की पहली तीज पर न आया तो प्रिया को जीवित नहीं पायेगा।

पिउ चित्तोड़ न आविउ, सावण पैली तीज।
जोबै बाट बिरहणी, खिण-खिण अणवे खीज।।

संदेसो पिण साहिबा, पाछो फिरिय न देह।
पंछी थाल्या पींजरे, छूटण रो संदेह।।

संस्कृत वांग्मय के अनुसार 'दोग्धि चित्तमिति दोग्धकम्' अर्थात् जो श्रोता/पाठक के चित्त का दोहन करे वह दोग्धक (दोहा) है, किंतु हिन्दी साहित्य का दोहा चित्त का ही नहीं वर्ण्य विषय के सार का भी दोहन करने में समर्थ है १२. दोहा अपने अस्तित्व-काल के प्रारम्भ से ही लोक परम्परा और लोक मानस से संपृक्त रहा है१३. संस्कृत साहित्य में बिना पूर्ववर्ती या परवर्ती प्रसंग के एक ही छंद में पूर्ण अर्थ व चमत्कार प्रगट करनेवाले अनिबद्ध काव्य को मुक्तक कहा गया है-

'मुक्तक श्लोक एवैकश्चमत्कारः क्षमः सतां'. अभिनव गुप्त के शब्दों में 'मुक्ता मन्यते नालिंकित तस्य संज्ञायां कन. तेन स्वतंत्रया परिसमाप्त निराकांक्षार्थमपि, प्रबंधमध्यवर्ती मुक्तक मिनमुच्यते'।

हिन्दी गीति काव्य के अनुसार मुक्तक पूर्ववर्ती या परवर्ती छंद या प्रसंग के बिना चमत्कार या अर्थ की पूर्ण अभिव्यक्ति करनेवाला छंद है। मुक्तक का प्रयोग प्रबंध

काव्य के मध्य में भी किया जा सकता है। रामचरित मानस महाकाव्य में चौपाइयों के बीच-बीच में दोहा का प्रयोग मुक्तक छंद के रूप में सर्व ज्ञात है। मुक्तक काव्य के दो भेद १. पाठ्य (एक भावः या अनुभूति की प्रधानता यथा कबीर के दोहे) तथा २. गेय (रागात्मकता प्रधान यथा तुलसी के दोहे) हैं।

दोहों को दोहा इसलिए कहा जाता है की इनमें संरचना को दोहराया जाता है ताकि लय गति बनी रहे एवं शब्दों का प्रभाव उभर कर आये, सबसे पहले हमें छंद में कलों का महत्त्व समझना होगा, ज्यों उर्दू ग़ज़लों में बह्र होती है गेयता को निश्चित दिशा देने को उसी तरह छंदों में कलों का स्थान है, २ मात्रा के समूह को द्विकल कहते हैं अर्थात् १,१ हों या २ हो ३ मात्रा के समूह को त्रिकल (१,१,१ या १२, या २१) कहते हैं ४ मात्राओं के समूह को चौकल कहते हैं (११११, १२१,२२,२११,११२), चरणों की रचना करते समय इसका ध्यान रहना चाहिए।
दोहों की बनावट दो तरह की प्रचलित है- पहली- त्रिकल+ त्रिकल +द्विकल+द्विकल+त्रिकल = १३ (यहां अंतिम त्रिकल में ।ऽ वर्जित है) जैसे- राम नाम सुमिरा करो (सही) राम नाम लो सदा तुम (गलत) दूसरा प्रकार यूं है- चौकल+चौकल+द्विकाल+त्रिकाल=१३ (यहां भी त्रिकल ।ऽ के रूप में नहीं आ सकता)
सम चरणों की बनावट: पहला प्रकार=त्रिकल+त्रिकल+द्विकल+त्रिकल = ११ दूसरा प्रकार, चौकल+चौकल+त्रिकल = ११ दोनों ही स्थितियों में अंत का त्रिकल हमेंशा ऽ। के रूप में आयेगा। उपर्युक्त नियमों पर यदि सूक्ष्म दृष्टि दौड़ायें तो पायेंगे कि यहां सम के पीछे सम (४+४) और विषम के पीछे विषम (३+३) यानि एक ही चीज को दुहराया गया है। इसी कारण इसे दोहा या दोहरा के नाम से जाना जाता है। साथ ही पायेंगे कि विषम चरणों के अंत में सगण, रगण अथवा नगण आयेगा और सम चरणों के अंत में जगण या तगण आयेगा।
विशेष: विषम चरण के प्रारंभ में जगण का निषेध सिर्फ़ नरकाव्य के लिये है। देवकाव्य या मंगलवाची शब्द होने की स्थिति में कोई दोष नहीं है। साथ ही जगण एक शब्द के तीन वर्णों में नहीं आना चाहिये, यदि दो शब्दों से मिलकर जगण बने तो वहां दोष नहीं है जैसे- "महान" एक शब्द के तीन वर्ण जगण बना रहे हैं अतः वर्जित है। जहां जहां = जहांज हां (जगण दो शब्दों से बन रहा है अतः दोष नहीं है।)

दोहे के प्रथम और तृतीय चरण में 212 पदभार तथा दूसरे और चौथे चरण के अंत में 21 पदभार अनिवार्य है। इसे साहित्यिक भाषा में पताका कहते हैं | प्रथम और तृतीय चरण के अंत में 212 पदभार संयोजन की। दोहा 23 प्रकार के होते हैं और सब में यह सम्भव नहीं हो सकता। दोहों के वह 23 प्रकार जिन्हें कुछ नाम दिया जा चुका है:

1	**भ्रमर** 22 गुरु और 4 लघु वर्ण	भूले भी भूलूँ नहीं, अम्मा की वो बात। दीवाली देती हमें, मस्ती की सौगात।। 22 2 22 12 22 2 2 21 222 22 12 22 2 221
2	**सुभ्रमर** 21 गुरु और 6 लघु वर्ण	रम्मा को सुधि आ गयी, अम्मा की वो बात। दीवाली देती हमें, मस्ती की सौगात।। 22 2 11 2 12 22 2 2 21 222 22 12 22 2 221
3	**शरभ** 20 गुरु और 8 लघु वर्ण	रम्मा को सुधि आ गयी, अम्मा की वो बात। जी में हो आनन्द तो, दीवाली दिन-रात।। 22 2 11 2 12 22 2 2 21 2 2 2 221 2 222 11 21
4	**श्येन** 19 गुरु और 10 लघु वर्ण	रम्मा को सुधि आ गयी, अम्मा की वो बात। जी में रहे उमंग तो, दीवाली दिन-रात।। 22 2 11 2 12 22 2 2 21 2 2 12 121 2 222 11 21
5	**मण्डूक** 18 गुरु और 12 लघु वर्ण	जिन के तलुवों ने कभी, छुई न गीली घास। वो क्या समझेंगे भला, माटी की सौंधास।। 11 2 112 2 12 12 1 22 21 2 2 1122 12 22 2 221
6	**मर्कट**	बुधिया को सुधि आ गयी, अम्मा की वो बात।

	17 गुरु और 14 लघु वर्ण	दिल में रहे उमंग तो, दीवाली दिन-रात।। 112 2 11 2 12 22 2 2 21 11 2 12 121 2 222 11 21
7	**करभ** 16 गुरु और 16 लघु वर्ण	झरनों से जब जा मिला, शीतल मन्द समीर। कहीं लुटाई मस्तियाँ, कहीं बढ़ाई पीर।। 112 2 11 2 12 211 21 121 12 122 212 12 122 21
8	**नर** 15 गुरु और 18 लघु वर्ण	द्वै पस्से भर चून अरु, बस चुल्लू भर आब। फिर भी आटा गुंथ गया!!!!! पूछे कौन हिसाब????? 2 22 11 21 11 11 22 11 21 11 2 22 11 12 22 21 121
9	**हंस** 14 गुरु और 20 लघु वर्ण	अपनी मरज़ी से भला, कब होवे बरसात? नाहक उस से बोल दी, अपने दिल की बात।। 112 112 2 12 11 22 1121 211 11 2 21 2 112 11 2 21
10	**गयंद** 13 गुरु और 22 लघु वर्ण	चायनीज़ बनते नहीं, चायनीज़ जब खाएँ। फिर इंगलिश के मोह में, क्यूँ फ़िरंग बन जाएँ।। 2121 112 12 2121 11 21 11 1111 2 21 2 2 121 11 21
11	**पयोधर** 12 गुरु और 24 लघु वर्ण	हर दम ही चिपके रहो, लेपटोप के संग। फिर ना कहना जब सजन, दिल पे चलें भुजंग।। 11 11 2 112 12 2121 2 21 11 2 112 11 111 11 2 12 121
12	**बल** 11 गुरु और 26 लघु वर्ण	सजल दृगों से कह रहा, विकल हृदय का ताप। मैं जल-जल कर त्रस्त हूँ, बरस रहे हैं आप।। 111 12 2 11 12 111 111 2 21 2 11 11 11 21 2 111 12 2 21
13	**पान**	अति उत्तम अनुपम अमित अविचल अपरम्पार

	10 गुरु और 28 लघु वर्ण	शुचिकर सरस सुहावना दीपों का त्यौहार 11 211 1111 111 1111 11221 1111 111 1212 22 2 221
14	**त्रिकल** 9 गुरु और 30 लघु वर्ण	अति उत्तम अनुपम अमित अविचल अपरम्पार शुचिकर सरस सुहावना दीपावलि त्यौहार 11 211 1111 111 1111 11221 1111 111 1212 2211 221
15	**कच्छप** 8 गुरु और 32 लघु वर्ण	अति उत्तम अनुपम अमित अविचल अपरम्पार शुचिकर सरस सुहावना दीप अवलि त्यौहार 11 211 1111 111 1111 11221 1111 111 1212 21 111 221
16	**मच्छ** 7 गुरु और 34 लघु वर्ण	अति उत्तम अनुपम अमित अविचल अपरम्पार शुचिकर सुख वर्धक सरस, दीप अवलि त्यौहार 11 211 1111 111 1111 11221 1111 11211 111 21 111 221
17	**शार्दूल** 6 गुरु र 36 लघु वर्ण	अति उत्तम अनुपम अमित अविचल अपरम्पार शुचिकर सुखद सुफल सरस दीप अवलि त्यौहार 11 211 1111 111 1111 11221 1111 111 111 111 21 111 221
18	**अहिवर** 5 गुरु और 38 लघु वर्ण	अति उत्तम अनुपम अमित अविचल अगम अपार शुचिकर सुखद सुफल सरस दीप अवलि त्यौहार 11 211 1111 111 1111 111 121 1111 111 111 111 21 111 221
19	**व्याल** 4 गुरु और 40 लघु वर्ण	अचल, अटल, अनुपम, अमित, अजगुत, अगम,अपार शुचिकर सुखद सुफल सरस दीप अवलि त्यौहार 111 111 1111 111 1111 111 121 1111 111 111 111 21 111 221
20	**विडाल**	अचल, अटल, अनुपम, अमित, अजगुत, अगम,अपार

	3 गुरु और 42 लघु वर्ण	शुचिकर सुखद सुफल सरस दियनि-अवलि त्यौहार 111 111 1111 111 1111 111 121 1111 111 111 111 111 111 221
21	**उदर** 1 गुरु और 46 लघु वर्ण	डग मग महिं डगमग करत, मन बिसरत निज करम तन तरसत, झुरसत हृदय, यही बिरह कर मरम 11 11 11 1111 111 11 1111 11 111 11 1111 1111 111 12 111 11 111 पहले और तीसरे चरण के अंत में 212 प्रावधान का सम्मान रखा गया है तथा दूसरे और चौथे चरण के अंत में 21 पदभार वाले शब्दों के अपभ्रश स्वरूप को लिया गया है
22	**श्वान** 2 गुरु और 44 लघु वर्ण	डग मग महिं डगमग करत, परत चुनर पर दाग तबहि सुं प्रति पल छिन मनुज, सहत रहत विरहाग 11 11 11 1111 111 111 111 11 21 111 1 11 11 11 111 111 111 1121
23	**सर्प** सिर्फ़ 48 लघु वर्ण	डग मग महिं डगमग करत, मन बिसरत निज करम तन तरसत, झुरसत हृदय, इतिक बिरह कर मरम 11 11 11 1111 111 11 1111 11 111 11 1111 1111 111 111 111 11 111 पहले और तीसरे चरण के अंत में 212 प्रावधान का सम्मान रखा गया है तथा दूसरे और चौथे चरण के अंत में 21 पदभार वाले शब्दों के अपभ्रश स्वरूप को लिया गया है

चौपाई :

-सुरेश चौधरी(विभिन्न लेखों पर आधारित)

इस मात्रिक छन्द के दो चरण होते हैं, प्रत्येक में १६-१६ मात्राएँ होती हैं। हर चरण में ८मात्राओं के बाद यति होती है। केवल एक चरण हों तो उसे अर्धाली कहते हैं। यह मानस का प्रमुख छन्द है। प्रथम और द्वितीय चरण के अन्त में तुक होता है। उदाहरण (५.४०.६) -

जहाँ सुमति तहँ संपति नाना | जहाँ कुमति तहँ बिपति निदाना ||

हनुमान चालीसा में भी यही छंद है, और वहाँ ४० चौपाइयाँ हैं | मानस मेंकुल ९३८८ चौपाइयाँ हैं,

हर चरण के अंत में चौकल का विधान है पर २-१ वर्जित है

तुलसी दास जी ने ८ पर यति की छुट ली है कई जगहों पर, परन्तु प्रवाह ,गति बाधित न हो उसका विशेष ध्यान रखा है | जैसे:

जय हनुमान ज्ञान गुण सागर,

1. इस छंद में कलों के संयोजन पर विशेष ध्यान रखा जाता है. यानि द्विकल या चौकल के बाद कोई सम मात्रिक कल अर्थात द्विकल या चौकल ही रखते हैं.

2. विषम मात्रिक कल होने पर तुरत एक और विषम मात्रिक कल रख कर सम मात्रिक कर लेते हैं. यह अनिवार्य है. यानि दोनों त्रिकलों को साथ रखने से षटकल बन जाता है जो कि सम मात्रिक कल ही होता है

3. किसी त्रिकल के बाद कोई सम मात्रिक कल यानि द्विकल या चौकल किसी सूरत में न रखें.

4. यह अवश्य है, कि किसी त्रिकल के बाद का चौकल यदि जगण (लघु गुरु लघु यानि ।ऽ। यानि 121) के रूप में आ रहा हो तो कई बार क्षम्य भी हो सकता है. क्यों कि जगण के पहली दो मात्राएँ उच्चारण के अनुसार त्रिकल का ही निर्माण करती हैं.

जैसे, राम महान कहें सब कोई .. .

यहाँ, राम (21) यानि त्रिकल के बाद महान (121) का चौकल आता है लेकिन इसके जगण होने के कारण महान के महा से राम का षटकल बन जाता है तथा महान का बचा हुआ न अगले शब्द कहें (12) के त्रिकल के साथ चौकल (न-कहें) बनाता हुआ आने वालों शब्दों सब और कोई के साथ प्रवाह में आजाता है.
यानी उच्चारण विन्यास हुआ राम महा –न कहे सब कोई ...अथार्थ षटकल - चौकल - द्विकल - चौकल .. इस तरह पूरा चरण संयत रूप से सम मात्रिक शब्दों का समूह हो जाता है. कलों के विन्यास के अनुसार निम्नलिखित व्यवहार याद रखना आवश्यक है.

1. सम-सम सम-सम सम रखते हैं.	कुल	16	मात्राएँ
2. विषम-विषम पर सम रखते हैं	कुल	16	मात्राएँ
3. विषम-विषम पर शब्द रखेंगे	कुल	16	मात्राएँ

चौपाई छंद के समकक्ष पादाकुलक छंद आता है जिसके प्रत्येक चरण में चार चौकल समूह बनते हैं. पादाकुलक छंद के लिए यह अनिवार्य शर्त है. अर्थातहर पादकुलक चौपाई छंद ही है जबकि हर चौपाई पादाकुलक नहीं हो सकती. इस विषय पर गहराई से आगे के आयोजनों में प्रकाश डालेंगे जब अन्य सोलह मात्रिक छंदों की चर्चा होगी. उदाहरनार्थ कुछ चौपाइयाँ

छाता छाता मेरा छाता। बादल जैसा छाया छाता॥
आरे बादल काले बादल। गर्मी दूर भगा रे बादल॥ .... (अज्ञात)
या,
जय हनुमान ज्ञान गुण सागर। जय कपीश तिहुँ लोक उजागर॥
राम दूत अतुलित बल धामा। अंजनि पुत्र पवन सुत नामा॥ .... . (तुलसी)

या,

दैहिक दैविक भौतिक तापा। राम राज नहिं काहुँहि व्यापा॥
सब नर करहिं परस्पर प्रीती। रहहिं स्वधर्म निरत स्रुति नीती॥ ...... (तुलसी)

आगे, कुछ कहने के पूर्व मैं यह कहता चलूँ कि चौपाई में कई लोगों के लिए **चरण** और **पद** अक्सर गड्डमड्ड हो जाते हैं. कारण कि, तुकान्त पंक्तियों के अपने-अपने भागों में कोई यति नहीं होती. यथा,

जय हनुमान ज्ञान गुण सागर । जय कपीश तिहुँ लोक उजागर ॥
<-----------चरण--------------->|<------------चरण-------------------->
<------------------------------पद/अर्द्धाली-------------------------------->
उपरोक्त एक-एक पंक्ति को लोग अलग-अलग यानि दो चरणों की तरह बताते हैं. यानि, उपरोक्त एक पद में दो चरण हुए. लेकिन, परेशानी तो तब होती है जब कुछ विद्वान इन पंक्तियों को दो पदों का होना बताते हैं. इसे दोहा छंद के माध्यम से इसे समझना उचित होगा. दोहा छंद के एक पद में दो चरण होते हैं. यानि एक पद के बीच एक यति आती है जो किसी एक पद को दो भागों में बाँटती है. ये दो भाग अलग-अलग चरण कहलाते हैं .

किन्तु, जैसा कि स्पष्ट किया गया है, चौपाई के मामले में यह बात नहीं होती. इसकी दो पंक्तियों में तुकान्तता तो होती है लेकिन उन पंक्तियों में यति नहीं आती. यहाँ तुकान्त ही यति है. सारी उलझन यहीं और इसी कारण से है.

मैं ऐसे इसलिए कह रहा हूँ कि अगल-अलग छंद-विद्वानों ने **चरण** और **पद** जैसे शब्दों को अपने-अपने ढंग से इस्तमाल किया है.

तो हमें किसी एक स्कूल को मजबूती से पकड़े रहना होगा. तथ्य के एक बार स्पष्ट हो जाने के बाद फिर कोई परेशानी नहीं होती. जैसे, गुरुवार कहिये या वीरवार मतलब वृहस्पतिवार से

अब आइये, चौपाइयों की असली गिनती पर. इस लेख में कहा ही गया है कि दो चरणों की अर्द्धाली होती है. यानि, यह आधी चौपाई होती है जैसे,

जय हनुमान ज्ञान गुण सागर ।
जय कपीश तिहुँ लोक उजागर ॥

उपरोक्त दो चरणों की हुई एक अर्द्धाली. यही एक पद भी हुआ.

इस तरह से आप देखियेगा कि हनुमान चालीसा में कुल 80 पंक्तियाँ यानि 40 अर्द्धालियाँ हैं. इन्हीं 40 पदों के कारण चालीसा नाम पड़ा है.

चौपाई आधारित छंद :

16 मात्रा के चौपाई छंद में कुछ मात्राएँ घटा-बढ़ाकर अनेक छंद बनते है। ऐसे चौपाई आधारित छंदों का चौपाई छंद से आतंरिक सम्बन्ध यहाँ पर दिया जा रहा है। इससे इन छंदों को समझने और स्मरण रखने में बहुत सुविधा रहेगी।

*चौपाई – 1 = 15 मात्रा का **चौपई छंद,** अंत 21
*चौपाई + 6 = 22 मात्रा का **रास छंद**, अंत 112
*चौपाई + 7 = 23 मात्रा का **निश्चल छंद,** अंत 21
*चौपाई + 9 = 25 मात्रा का **गगनांगना छंद,** अंत 212 X
*चौपाई + 10 = 26 मात्रा का **शंकर छंद,** अंत 21
*चौपाई + 10 = 26 मात्रा का **विष्णुपद छंद**, अंत 2
*चौपाई + 11 = 27 मात्रा का **सरसी/कबीर छंद,** अंत 21
*चौपाई + 12 = 28 मात्रा का **सार छंद,** अंत 22
*चौपाई + 14 = 30 मात्रा का **ताटंक छंद**, अंत 222
*चौपाई + 14 = 30 मात्रा का **कुकुभ छंद,** अंत 22
*चौपाई + 14 = 30 मात्रा का **लावणी छंद,** अंत स्वैच्छिक
*चौपाई + 15 = 31 मात्रा का **बीर/आल्ह छंद,** अंत 21

मापनीयुक्त मात्रिक छंद

===ओमनीरव

विशेषताएं –

(क) **मापनीयुक्त मात्रिक छंदों** में छंदों में '**वाचिक मापनी'** प्रयुक्त होती है जिसमें उच्चारण के अनुरूप '**वाचिक भार'** का प्रयोग किया जाता है अर्थात लय को ध्यान में रखते हुए मापनी के किसी भी गुरु 2 के स्थान पर दो लघु 11 का प्रयोग किया जा सकता है। **विशेष** : **मापनीयुक्त वर्णिक छंदों** में दूसरे प्रकार की **'वर्णिक मापनी'** प्रयुक्त होती है जिसमें **'वर्णिक भार'** का प्रयोग किया जाता है अर्थात इस मापनी के किसी गुरु 2 के स्थान पर दो लघु 11 प्रयोग करने की छूट कदापि नहीं होती है! सामान्यतः 'मापनी' से 'वाचिक मापनी' ही समझना चाहिए।

(ख) छंद रचना के लिए इन छंदों की मापनी समझ लेने के बाद केवल **यति** और **तुकांत** ही समझना शेष रह जाता है , अन्य कुछ समझने की आवश्यकता नहीं रहती है।

(ग) 'मापनीमुक्त छंदों' की तुलना में 'मापनीयुक्त छंदों' की लय को साधना अधिक सरल होता है क्योंकि **एक मापनी से केवल एक ही सुनिश्चित लय बनती है** अर्थात यदि किसी पंक्ति में मापनी के अनुरूप वर्ण आते हैं तो वह पंक्ति उसी मापनी की लय में निश्चित रूप से होगी।

(घ) केवल गुरु स्वरों पर आधारित मापनी प्रामाणिक नहीं हैं, जैसे 22 22 22 22 क्योंकि इनके द्वारा एक से अधिक लय बन जाती हैं तथा इनमें स्वरक(रुक्न) 121 को भी 22 मानना पड़ जाता है जो स्वरकों के मूल सिद्धांत के विरुद्ध है। अतः ऐसी **मनगढ़ंत मापनी** वाले छंदों को हम इस वर्ग में सम्मिलित करना उचित नहीं समझते हैं जैसे हाकलि/मानव, चौपाई, पदपादाकुलक/राधेश्यामी, लावणी, विष्णुपद, सार आदि। ऐसे छंदों को हमने 'मापनीमुक्त छंदों' के वर्ग में सम्मिलित किया है।

(1) छंद – **मधुमालती**

विधान – इसके प्रत्येक चरण में 14 मात्राएँ होती हैं, अंत में 212 वाचिक भार होता है, 5-12 वीं मात्रा पर लघु अनिवार्य होता है।

मापनी –

2212 2212

गागालगा गागालगा

उदाहरण -

होंगे सफल ,   धीरज धरो
कुछ हम करें , कुछ तुम करो
संताप में,   अब मत जलो
कुछ हम चलें , कुछ तुम चलो

(2) **छंद – विजात**

विधान – इसके प्रत्येक चरण में 14 मात्राएँ होती हैं, अंत में 222 वाचिक भार होता है, 1,8 वीं मात्रा पर लघु अनिवार्य होता है ।

मापनी -

1222 1222

लगागागा लगागागा

उदाहरण :

तुम्हारे नाम की माला
तुम्हारे नाम की हाला
हुआ जीवन तुम्हारा है
तुम्हारा ही   सहारा है

(3) **छंद - मनोरम**

विधान - इसके प्रत्येक चरण में 14 मात्राएँ होती हैं , आदि में 2 और अंत में 211 या 122 होता है , 3-7 वीं मात्रा पर लघु अनिवार्य है।

मापनी -

2122 2122
गालगागा गालगागा

उलझनें पूजालयों में
शांति है शौचालयों में
शान्ति के इस धाम आयें
उलझनों से मुक्ति पायें

उदाहरण -

(4) **छंद – शक्ति**

विधान – इसमें 18 मात्राओं के चार चरण होते हैं, अंत में वाचिक भार 12 होता है तथा 1,6,11,16 वीं मात्रा पर लघु अनिवार्य होता है।

मापनी -
122 122 122 12
लगागा लगागा लगागा लगा

उदाहरण -
चलाचल चलाचल अकेले निडर
चलेंगे हजारों, चलेगा जिधर
दया-प्रेम की ज्योति उर में जला
टलेगी स्वयं पंथ की हर बला

(5) **छंद - पीयूष वर्ष / आनंद वर्धक**

विधान - इसमें 10+9=19 मात्राओं के चार चरण होते हैं, अंत में 12 होता है तथा 3,10,17 वीं मात्रा पर लघु अनिवार्य है। यदि यति अनिवार्य न हो और अंत में 2 = 11 की छूट हो तो यही छंद 'आनंदवर्धक' कहलाता है।

मापनी -
2122 2122 212
गालगागा गालगागा गालगा

उदाहरण --
लोग कैसे , गन्दगी फैला रहे
नालियों में छोड़ जो मैला रहे

नालियों पर शौच जिनके शिशु करें
रोग से मारें सभी को खुद मरें

(6) छंद - सुमेरु

विधान - इसके प्रत्येक चरण में 12+7=19 अथवा 10+9=19 मात्राएँ होती हैं ; 12,7 अथवा 10,9 पर यति होतो है ; इसके आदि में लघु आता है जबकि अंत में 221,212,121,222 वर्जित हैं तथा 1,8,15 वीं मात्रा लघु होती है।

मापनी -
1222 1222 122
लगागागा लगागागा लगागा

लहै रवि लोक सोभा , यह सुमेरु
कहूँ अवतार पर , ग्रह केर फेरू
सदा जम फंद सों , रही हौं अभीता
भजौ जो मीत हिय सों , राम सीता

(7) छंद - सगुण

विधान - इसके प्रयेक चरण में 19 मात्राएँ होती हैं , आदि में 1 और अंत में 121 होता है , 1,6,11,16,19 वी मात्रा लघु होती है।

मापनी -
122 122 122 121
लगागा लगागा लगागा लगाल

उदाहरण -
सगुण पञ्च चारौ जुगन वन्दनीय ,
अहो मीत, प्यारे भजौ मातु सीय
लहौ आदि माता चरण जो ललाम
सुखी हो मिलै अंत में राम धाम

(8) छंद - शास्त्र

विधान - इसके प्रत्येक चरण में 20 मात्राएँ होती हैं ; अंत में 21 होता है तथा 1,8,15,20 वीं मात्राएँ लघु होती हैं।

मापनी -
1222 1222 1221
लगागागा लगागागा लगागाल

उदाहरण -
मुनीके लोक लहिये शास्त्र आनंद
सदा चित लाय भजिये नन्द के नन्द
सुलभ है मार प्यारे ना लगै दाम
कहौ नित कृष्ण राधा और बलराम

(9) छंद - सिन्धु

विधान - इसके प्रत्येक चरण में 21 मात्राएँ होती है और 1,8,15 वीं मात्रा लघु 1 होती है !

मापनी -
1222 1222 1222
लगागागा लगागागा लगागागा

उदाहरण –
लखौत्रयलोकमहिमासिन्धुकी भारी
तऊ पुनि गर्व के कारण भयो खारी
लहे प्रभुता सदा जो शील को धारै
दया हरि सों तरै कुल आपनो तारै

(10) छंद - बिहारी

विधान - इसके प्रत्येक चरण में 14+8=22 मात्राएँ होती हैं , 14,8 मात्रा पर यति होती है तथा 5,6,11,12,17,18 वीं मात्रा लघु 1 होती है।

मापनी -
221 1221 1221 122
गागाल लगागाल लगागाल लगागा

उदाहरण -

लाचार बड़ा आज पड़ा हाथ बढ़ाओ
हे श्याम फँसी नाव इसे पार लगाओ
कोई न पिता मात सखा बन्धु न वामा
हे श्याम दयाधाम खड़ा द्वार सुदामा

(11) **छंद - दिगपाल / मृदुगति**

विधान - इस छंद के प्रत्येक चरण में 24 मात्राएँ होती हैं ; 12,24 मात्रा पर यति होती है , आदि में समकल होता है और 5,8,17,20 वीं मात्रा अविवार्यतः लघु होती है।

मापनी -
221 2122 221 2122
गागाल गालगागा गागाल गालगागा

उदाहरण
सविता विराज दोई , दिक्पाल छन्द सोई
सो बुद्धि मंत प्राणी, जो राम शरण होई
रे मान बात मेरी, मायाहि त्यागि दीजै
सब काम छाँड़ि मीता, इक राम नाम लीजै

(12) **छंद - सारस**

विधान - इसके प्रत्येक चरण में 24 मात्राएँ होती हैं , 12,12 मात्रा पर यति होती है आदि में विषम कल होता है और 3,4,9,10,15,16,21,22 वीं मात्राएँ अनिवार्यतः लघु 1 होती हैं।

मापनी -
2112 2112 2112 2112
गाललगा गाललगा गाललगा गाललगा

उदाहरण

भानु कला राशि कला, गादि भला सारस है
राम भजत ताप भजत, शांत लहत मानस है
शोक हरण पद्म चरण, होय शरण भक्ति सजौ
राम भजौ रान भजौ, राम भजौ राम भजौ

(13) छंद - गीतिका

विधान - इसके प्रत्येक चरण में 26 मात्राएँ होती हैं ; 14,12 अथवा 12,14 पर यति होती है और 3,10,17,24 वीं मात्राएँ अनिवार्यतः लघु होती हैं।

मापनी -
2122 2122 2122 212
गालगागा गालगागा गालगागा गालगा

रत्न रवि कल धारि कई लग, अंत रचिये गीतिका
क्यों बिसारे श्याम सुन्दर, यह धरी अनरीति का
पाय के नर जन्म प्यारे, कृष्ण के गुण गाइये
पाद पंकज हीय में धरि, जन्म को फल पाइये

(14) छंद - गीता

विधान - इसके प्रत्येक चरण में 26 मात्राएँ होती हैं; 14,12 पर यति होती है, आदि में सम कल होता है ; अंत में 21 आता है और 5,12,19,26 वीं मात्राएँ अनिवार्यतः लघु होती हैं।

मापनी -
2212 2212 2212 221
गागालगा गागालगा गागालगा गागाल

उदहारण -
कृष्णारजुन गीता भुवन, रवि सम प्रकट सानंद
जाके सुने नर पावहीं, संतत अमित आनंद
दुहुं लोक में कल्याण कर, यह मेट भाव को शूल
तातें कहौं प्यारे कवौं, उपदेश हरि ना भूल

(15) छंद - शुद्ध गीता

विधान - इसके प्रत्येक चरण में 27 मात्राएँ होती हैं ; 14,13 मात्रा पर यति होती है आदि में 21 होता है तथा 3,10,17,24,27 वीं मात्राएँ लघु होती हैं।

मापनी -
2122 2122 2122 2121
गालगागा गालगागा गालगागा गालगाल

उदाहरण -
मत्त चौदा और तेरा, शुद्ध गीता ग्वाल धार
ध्याय श्री राधा रमण को, जन्म अपनों ले सुधार
पाय के नर देह प्यारे, व्यर्थ माया में न भूल
हो रहो शरणै हरी के, तौ मिटै भव जन्म शूल

(16) छन्द - हरिगीतिका / श्रीगीतिका /मिश्रितगीतिका

विधान - इसके प्रत्येक चरण में 28 मात्राएँ होती हैं , 16,12 मात्रा पर यति होती है द्विकल, त्रिकल, चौकल का क्रम 2+3+4+3+4+3+4+3+2 होता है, चौकल 4 में जगण 121 वर्जित होता है तथा 5,12,19,26 वीं मात्राएँ लघु होती हैं।

मापनी -
2212 2212 2212 2212
गागालगा गागालगा गागालगा गागालगा

उदाहरण -
ये दारिका परिचारिका , करि, पालिबी करुणामयी
अपराध क्षमियो बोलि पठये, बहुत हौं ढीठी दयी
पुनि भानु कुल भूषण सकल, सन मान विधि समधी किये
कहि जात नहिं विनती परस्पर, प्रेम परिपूरण हिये

विशेष - यह हरिगीतिका छंद का सर्वाधिक व्यावहारिक रूप है जिसे मिश्रितगीतिका कह सकते हैं ! वस्तुतः 11212 की चार आवृत्तियों से हरिगीतिका , 2212 की चार आवृत्तियों से श्रीगीतिका तथा दोनों स्वरकों की स्वैच्छिक चार आवृत्तियों से मिश्रितगीतिका छंद बनता है।

(17) छंद - विधाता

विधान - इसके प्रत्येक चरण में 28 मात्राएँ होती है ; 14,14 मात्रा पर यति होती है ; 1, 8, 15, 22 वीं मात्राएँ लघु होती हैं।

मापनी -
1222 1222 1222 1222
लगागागा लगागागा लगागागा लगागागा

उदाहरण -

ग़ज़ल हो या भजन कीर्तन , सभी में प्राण भर देता

.

अमर लय ताल से गुंजित , समूची सृष्टि कर देता

भले हो छंद या सृष्टा , बड़ा प्यारा 'विधाता' है

सुहानी कल्पना जैसी , धरा सुन्दर सजाता है

मापनीमुक्त मात्रिक छंद

-ओमनीरव

विशेषताएं :

(क) इन छंदों की लय को किसी मापनी में बाँधना संभव नहीं है। इन छंदों की लय को निर्धारित करने के लिए **कलों** (द्विकल 2 मात्रा, त्रिकल 3 मात्रा, चौकल 4 मात्रा) का प्रयोग किया जाता है -

द्विकल = 2 या 11

त्रिकल = 21 या 12 या 111

चौकल = 22 या 211 या 112 या 121 या 1111

(ख) कलों के अतिरिक्त चरणों या पदों के आदि-अंत में किसी निश्चित मात्राक्रम की चर्चा भी की जाती है जिसमें प्रायः वाचिक भार ही प्रयुक्त होता है

(ग) कभी-कभी कलों का प्रतिबन्ध पूरा होने पर भी लय बाधित हो जाती है अर्थात लय होने पर कलों का प्रतिबन्ध होना अनिवार्य है किन्तु कलों का प्रतिबन्ध होने पर लय का होना अनिवार्य नहीं है।

उदाहरण :

श्रीरा/म दिव्य/ रूप/ को , लंके/श गया/ जान

4+4+3+2 , 4+4+3

चौकल+चौकल+त्रिकल+द्विकल, चौकल+चौकल+त्रिकल

अर्थात इस पंक्ति में दोहा छंद के अनुसार कलों का प्रतिबन्ध पूरा है फिर भी यह पंक्ति दोहा छंद की लय में नहीं है

यह पंक्ति दोहे की लय में इस प्रकार होगी --

दिव्य/रूप/ श्री/राम/ को, जान/ गया/ लं/केश

3+3+2+3+2 , 3+3+2+3

(घ) **मापनीमुक्त छंदों में लय ही सर्वोपरि है** जो मुख्यतः अनुकरण से आती है। अस्तु रचनाकारों के लिए उचित है कि वह पहले किसी जाने-समझे छंद को सस्वर

गाकर उसकी लय को मन में स्थापित करे , फिर उसी लय पर अपना छंद रचे और अंत में मात्राभार तथा नियमों की जांच कर लें।

(च) मापनीमुक्त मात्रिक छंद तीन प्रकार के होते हैं – 1) **सम मात्रिक छंद** जिनके सभी चरणों के मात्राभार और नियम सामान होते हैं जैसे चौपाई, रोला आदि 2) **अर्धसम मात्रिक छंद** जिनमें मात्राभार और नियम की दृष्टि से विषम चरण परस्पर एक सामान होते है और उनसे भिन्न सम चरण परस्पर एक सामान होते हैं जैसे दोहा, सोरठा, बरवै आदि तथा 3)**विषम मात्रिक छंद** जिनके चरणों के मात्राभार और नियम भिन्न होते हैं किन्तु अर्धसम मात्रिक नहीं होते हैं जैसे कुण्डलिया, कुण्डलिनी, छप्पय आदि।

कतिपय उदाहरण :

(1) **हाकलि/मानव छंद [सम मात्रिक]**

विधान - इसके प्रत्येक चरण में 14 मात्रा होती हैं , तीन चौकल के बाद एक द्विकल होता है (4+4+4+2)। यदि तीन चौकल अनिवार्य न हों तो यही छंद 'मानव' कहलाता है।

उदाहरण -

बने ब/हुत हैं/ पूजा/लय
अब बन/वाओ/ शौचा/लय
घर की/ लाज ब/चाना/ है
शौचा/लय बन/वाना है
- ओम नीरव

विशेष : इस छंद की मापनी को भी इसप्रकार लिखा जाता है -
22 22 22 2
गागा गागा गागा गा
किन्तु केवल गुरु स्वरों से बनने वाली इसप्रकार की मापनी द्वारा एक से अधिक लय बन सकती है तथा इसमें स्वरक(रुक्न) 121 को 22 मानना पड़ता है जो मापनी

की मूल अवधारणा के विरुद्ध है इसलिए यह मापनी मान्य नहीं है , यह **मनगढ़ंत मापनी** है। फलतः यह छंद मापनीमुक्त ही मानना उचित है।

(2) चौपई या जयकरी छंद [सम मात्रिक]

विधान – इसके प्रयेक चरण में 15 मात्रा होती हैं, अंत में 21 या गाल अनिवार्य होता है, कुल चार चरण होते हैं, क्रमागत दो-दो चरण तुकांत होते हैं।

उदाहरण :

भोंपू लगा-लगा धनवान
फोड़ रहे जनता के कान
ध्वनि-ताण्डव का अत्याचार,
कैसा है यह धर्म-प्रचार
- ओम नीरव

(3) चौपाई छंद [सम मात्रिक]

विधान – इसके प्रत्येक चरण में 16 मात्रा होती हैं , अंत में 21 या गाल वर्जित होता है , कुल चार चरण होते हैं , क्रमागत दो-दो चरण तुकांत होते हैं।

उदाहरण :

बिनु पग चलै सुनै बिनु काना
कर बिनु करै करम विधि नाना
आनन रहित सकल रस भोगी
बिनु बानी बकता बड़ जोगी
- तुलसीदास

विशेष : इस छंद की मापनी को भी इसप्रकार लिखा जाता है -
22 22 22 22
गागा गागा गागा गागा
किन्तु केवल गुरु स्वरों से बनने वाली इसप्रकार की मापनी द्वारा एक से अधिक लय बन सकती है तथा इसमें स्वरक(रुक्न) 121 को 22 मानना पड़ता है जो मापनी

की मूल अवधारणा के विरुद्ध है इसलिए यह मापनी मान्य नहीं है, यह मनगढ़ंत मापनी है। फलतः यह छंद मापनीमुक्त ही मानना उचित है।

(4) पदपादाकुलक/राधेश्यामी/मत्तसवैया छंद [सम मात्रिक]

विधान – पदपादाकुलक छंद के एक चरण में 16 मात्रा होती हैं , आदि में द्विकल (2 या 11) अनिवार्य होता है किन्तु त्रिकल (21 या 12 या 111) वर्जित होता है, पहले द्विकल के बाद यदि त्रिकल आता है तो उसके बाद एक और त्रिकल आता है , कुल चार चरण होते हैं, क्रमागत दो-दो चरण तुकान्त होते है।

राधेश्यामी या मत्त सवैया छंद के एक चरण में 32 मात्रा होती है और यह पदपादाकुलक का दो गुना होता है। अन्य लक्षण पूर्ववत हैं।

पदपादाकुलक का उदाहरण :

कविता में हो यदि भाव नहीं
पढने में आता चाव नहीं
हो शिल्प भाव का सम्मेलन
तब काव्य बनेगा मनभावन
- ओम नीरव

राधेश्यामी/मत्तसवैया का उदाहरण :

दो चरणों के जिस आसन पर, मैं शैशव में शी करता था
शी-शी के स्वर से संचालित, दो दृग मैं निरखा करता था
करता विलम्ब देतीं झिड़की, ले-ले मेरे शैशवी नाम
तेरे उस युग-पद-आसन को, मन बार-बार करता प्रणाम
विशेष : इस छंद की मापनी को भी इसप्रकार लिखा जाता है -
22 22 22 22
गागा गागा गागा गागा

राधेश्यामी या मत्तसवैया छंद में यही मापनी दो गुनी समझी जा सकती है।
किन्तु केवल गुरु स्वरों से बनने वाली इसप्रकार की मापनी द्वारा एक से अधिक लय बन सकती है तथा इसमें स्वरक(रुक्न) 121 को 22 मानना पड़ता है जो मापनी की मूल अवधारणा के विरुद्ध है इसलिए यह मापनी मान्य नहीं है , यह मनगढ़ंत मापनी है। फलतः यह छंद मापनीमुक्त ही मानना उचित है।

(5) श्रृंगार छंद (उपजाति सहित) [सम मात्रिक]

विधान – इसके प्रत्येक चरण में 16 मात्रा होती हैं, आदि में क्रमागत त्रिकल-द्विकल (3+2) और अंत में क्रमागत द्विकल-त्रिकल (2+3) आते हैं, कुल चार चरण होते हैं , क्रमागत दो-दो चरण तुकांत होते हैं।

उदाहरण :
भागना लिख मनुजा के भाग्य
भागना क्या होता वैराग्य
दास तुलसी हों चाहे बुद्ध
आचरण है यह न्याय विरुद्ध

(6) **राधिका छंद** [सम मात्रिक]

विधान – इसके प्रत्येक चरण में 22 मात्रा होती हैं, 13,9 पर यति होती है, यति से पहले और बाद में त्रिकल आता है, कुल चार चरण होते हैं , क्रमागत दो-दो चरण तुकांत होते हैं।

उदाहरण :
मन में रहता है काम , राम वाणी में
है भारी मायाजाल, सभी प्राणी में
लम्पट कपटी वाचाल, पा रहे आदर
पुजता अधर्म है ओढ़, धर्म की चादर

(7) कुण्डल/उड़ियाना छंद [सम मात्रिक]

विधान – इसके प्रत्येक चरण में 22 मात्रा होती हैं, 12,10 पर यति होती है , यति से पहले और बाद में त्रिकल आता है औए अंत में 22 आता है। यदि अंत में एक ही गुरु 2 या गा आता है तो उसे उड़ियाना छंद कहते हैं। कुल चार चरण होते हैं, क्रमागत दो-दो चरण तुकांत होते हैं।

कुण्डल का उदाहरण :
गहते जो अम्ब पाद, शब्द के पुजारी
रचते हैं चारु छंद, रसमय सुखकारी
देती है माँ प्रसाद, मुक्त हस्त ऐसा
तुलसी रसखान सूर, पाये हैं जैसा
- ओम नीरव

उड़ियाना का उदाहरण :
ठुमकि चालत रामचंद्र, बाजत पैंजनियाँ
धाय मातु गोद लेत, दशरथ की रनियाँ
तन-मन-धन वारि मंजु, बोलति बचनियाँ
कमल बदन बोल मधुर, मंद सी' हँसनियाँ
- तुलसी दास

(8) रास छंद [सम मात्रिक]

विधान – 22 मात्रा, 8,8,6 पर यति, अंत में 112 , चार चरण , क्रमागत दो-दो चरण तुकांत

उदाहरण :
व्यस्त रहे जो, मस्त रहे वह, सत्य यही
कुछ न करे जो, त्रस्त रहे वह, बात सही
जो न समय का, मूल्य समझता, मूर्ख बड़ा
सब जाते उस, पार मूर्ख इस, पार खड़ा

(9) निश्चल छंद [सम मात्रिक]

विधान – 23 मात्रा, 16,7 पर यति, चरणान्त में 21 या गाल। कुल चार चरण, क्रमागत दो-दो चरण तुकांत

उदाहरण :

बीमारी में चाहे जितना, सह लो क्लेश
पर रिश्ते-नाते में देना, मत सन्देश
आकर बतियायें, इठलायें, निस्संकोच
चैन लूट रोगी का, खायें, बोटी नोच

(10) रोला छंद [सम मात्रिक]

विधान – 24 मात्रा, 11,13 पर यति, यति से पहले वाचिक भार 21 या गाल (अपवाद स्वरुप 122 या लगागा भी) और यति के बाद वाचिक भार 12 लगा या 21 गाल। कुल चार चरण, क्रमागत दो-दो चरणों में तुकांत। प्रत्येक चरण यति पर दो पदों में विभाजित हो जाता है।

पहले पद के कलों का क्रम निम्नवत होता है -

4+4+3 (चौकल+चौकल+त्रिकल) अथवा

3+3+2+3 (त्रिकल+त्रिकल+द्विकल+त्रिकल)

दूसरे पद के कलों का क्रम निम्नवत होता है -

3+2+4+4(त्रिकल+द्विकल+चौकल+चौकल) अथवा

3+2+3+3+2 (त्रिकल+द्विकल+त्रिकल+त्रिकल+द्विकल)

उदाहरण :

नागफनी की बाग़ बनी हो जब अँगनाई
घूमे लहू लुहान देश की ही तरुणाई
फिर पाँवों में डाल चले जो कविता पायल
बोलो मेरे मीत न हो कवि कैसे घायल

विशेष : दोहा के विषम और सम चरणों का क्रम परस्पर बदल देने से सोरठा छंद बनता है और उसकी प्रत्येक पंक्ति का मात्रा क्रम 11,13 होता है किन्तु वह रोला का चरण नहीं हो सकता है जबकि रोला के चरण का मात्राभार भी 11,13 ही होता है। कारण यह है की दोनों के लय भिन्न होती है। अस्तु रोला को दो सोरठा के समान समझ लेना नितांत भ्रामक है ।

(11) रूपमाला/मदन छंद [सम मात्रिक]

विधान – 24 मात्रा, 14,10 पर यति, आदि और अंत में वाचिक भार 21 गाल, कुल चार चरण , क्रमागत दो-दो चरणों में तुकांत

उदाहरण :

देह दलदल में फँसे हैं, साधना के पाँव
दूर काफी दूर लगता, साँवरे का गाँव
क्या उबारेंगे कि जिनके, दलदली आधार
इसलिए आओ चलें इस, धुंध के उसपार

(12) मुक्तामणि छंद [सम मात्रिक]

विधान – 25 मात्रा, 13,12 पर यति, यति से पहले वाचिक भार 12 या लगा, चरणान्त में वाचिक भार 22 या गागा। कुल चार चरण, क्रमागत दो-दो चरण तुकांत
विशेष – दोहा के क्रमागत दो चरणों के अंत में एक लघु बढ़ा देने से मुक्तामणि का एक चरण बनता है

उदाहरण :

विनयशील संवाद में, भीतर बड़ा घमण्डी
आज आदमी हो गया, बहुत बड़ा पाखण्डी
मेरा क्या सब आपका, बोले जैसे त्यागी
जले ईर्ष्या द्वेष में, बने बड़ा बैरागी

(13) गगनांगना छंद [सम मात्रिक]

विधान – 25 मात्रा, 16,9 पर यति, चरणान्त में 212 या गालगा। कुल चार चरण, क्रमागत दो-दो चरण तुकांत

उदाहरण :

कब आओगी फिर, आँगन की, तुलसी बूझती
किस-किस को कैसे समझाऊँ, युक्ति न सूझती
अम्बर की बाहों में बदरी, प्रिय तुम क्यों नहीं
भारी है जीवन की गठरी, प्रिय तुम क्यों नहीं

(14) विष्णुपद छंद [सम मात्रिक]

विधान – 26 मात्रा, 16,10 पर यति, अंत में वाचिक भार 2 या गा। कुल चार चरण, क्रमागत दो-दो चरण तुकांत

उदाहरण :

अपने से नीचे की सेवा, तीर-पड़ोस बुरा,
पत्नी क्रोधमुखी यों बोले, ज्यों हर शब्द छुरा
बेटा फिरे निठल्लू बेटी, खोये लाज फिरे
जले आग बिन वह घरवाला, घर पर गाज गिरे

(15) शंकर छंद [सम मात्रिक]

विधान – 26 मात्रा, 16,10 पर यति, चरणान्त में 21 या गाल। कुल चार चरण, क्रमागत दो-दो चरणों पर तुकांत

उदाहरण :

सुरभित फूलों से सम्मोहित, बावरे मत भूल
इन फूलों के बीच छिपे हैं, घाव करते शूल
स्निग्ध छुअन या क्रूर चुभन हो, सभी से रख प्रीत
आँसू पीकर मुस्काता चल, यही जग की रीत

(16) सरसी/कबीर/सुमंदर छंद [सम मात्रिक]

विधान – 27 मात्रा, 16,11 पर यति, चरणान्त में 21 लगा अनिवार्य। कुल चार चरण, क्रमागत दो-दो चरण तुकांत।

विशेष : चौपाई का कोई एक चरण और दोहा का सम चरण मिलाने से सरसी का एक चरण बन जाता है

उदाहरण :

पहले लय से गान हुआ फिर, बना गान ही छंद
गति-यति-लय में छंद प्रवाहित, देता उर आनंद
जिसके उर लय-ताल बसी हो, गाये भर-भर तान
उसको कोई क्या समझाये, पिंगल छंद विधान

(17) सार छंद [सम मात्रिक]

विधान – 28 मात्रा, 16,12 पर यति, अंत में वाचिक भार 22 गागा। कुल चार चरण, क्रमागत दो-दो चरण तुकांत।

उदाहरण :

कितना सुन्दर कितना भोला, था वह बचपन न्यारा
पल में हँसना पल में रोना, लगता कितना प्यारा
अब जाने क्या हुआ हँसी के, भीतर रो लेते हैं
रोते-रोते भीतर-भीतर, बाहर हँस देते हैं

विशेष : इस छंद की मापनी को इसप्रकार लिखा जाता है -
22 22 22 22, 22 22 22
गागा गागा गागा गागा, गागा गागा गागा
फैलुन फैलुन फैलुन फैलुन, फैलुन फैलुन फैलुन
किन्तु केवल गुरु स्वरों से बनने वाली इसप्रकार की मापनी द्वारा एक से अधिक लय बन सकती है तथा इसमें स्वरक(रुक्न) 121 को 22 मानना पड़ता है जो मापनी

की मूल अवधारणा के विरुद्ध है। इसलिए यह मापनी मान्य नहीं है , यह मनगढ़ंत मापनी है। फलतः यह छंद मापनीमुक्त ही मानना उचित है।

(18) **लावणी/कुकुभ/ताटंक छंद** [सम मात्रिक]

विधान – 30 मात्रा, 16,14 पर यति। कुल चार चरण, क्रमागत दो-दो चरण तुकांत।
विशेष – इसके चरणान्त में वर्णिक भार 222 या गागागा अनिवार्य होने पर ताटंक , 22 या गागा होने पर कुकुभ और कोई ऐसा प्रतिबन्ध न होने पर यह लावणी छंद कहलाता है

उदाहरण :

तिनके-तिनके बीन-बीन जब, पर्ण कुटी बन पायेगी,
तो छल से कोई सूर्पणखा, आग लगाने आयेगी।
काम अनल चन्दन करने का, संयम बल रखना होगा,
सीता सी वामा चाहो तो, राम तुम्हें बनना होगा।

विशेष : इस छंद की मापनी को भी इसप्रकार लिखा जाता है -

22 22 22 22, 22 22 22 2
गागा गागा गागा गागा, गागा गागा गागा गा
फैलुन फैलुन फैलुन फैलुन, फैलुन फैलुन फैलुन अल

किन्तु केवल गुरु स्वरों से बनने वाली इसप्रकार की मापनी द्वारा एक से अधिक लय बन सकती है तथा इसमें स्वरक(रुक्न) 121 को 22 मानना पड़ता है जो मापनी की मूल अवधारणा के विरुद्ध है। इसलिए यह मापनी मान्य नहीं है , यह मनगढ़ंत मापनी है। फलतः यह छंद मापनीमुक्त ही मानना उचित है।

(19) बीर/आल्ह छंद [सम मात्रिक]

विधान – 31 मात्रा, 16,15 पर यति, चरणान्त में वाचिक भार 21 या गाल। कुल चार चरण, क्रमागत दो-दो चरणों पर तुकांत

उदाहरण :

विनयशीलता बहुत दिखाते, लेकिन मन में भरा घमण्ड,
तनिक चोट जो लगे अहम् को, पल में हो जाते उद्दण्ड

गुरुवर कहकर टाँग खींचते , देखे कितने ही वाचाल,
इसीलिये अब नया मंत्र यह, नेकी कर सीवर में डाल

(20) त्रिभंगी छंद [सम मात्रिक]

विधान – 32 मात्रा, 10,8,8,6 पर यति, चरणान्त में 2 गा। कुल चार चरण, क्रमागत दो-दो चरण तुकांत। पहली तीन या दो यति पर आतंरिक तुकांत होने से छंद का लालित्य बढ़ जाता है। तुलसी दास जैसे महा कवि ने पहली दो यति पर आतंरिक तुकान्त का अनिवार्यतः प्रयोग किया है।

उदाहरण :

तम से उर डर-डर, खोज न दिनकर, खोज न चिर पथ, ओ राही
रच दे नव दिनकर, नव किरणें भर, बना डगर नव, मन चाही
सद्भाव भरा मन, ओज भरा तन, फिर काहे को, डरे भला
चल-चल अकला चल, चल अकला चल, चल अकला चल, चल अकला

(21) दोहा छंद [अर्ध सम मात्रिक]

विधान – 13, 11, 13, 11 मात्रा के चार चरण, विषम चरणों के अंत में वाचिक भार 12 या 12 (अपवाद स्वरुप 12 2 या लगा गा भी), सम चरणों के अंत में 21 गाल अनिवार्य, विषम चरणों के प्रारंभ में 'मात्राक्रम 121 का स्वतंत्र शब्द' वर्जित। कुल चार चरण, सम चरण तुकांत जबकि विषम चरण अतुकांत।

विशेष - (क) विषम चरणों के कलों का क्रम निम्नवत होता है -
4+4+3+2 (चौकल+चौकल+त्रिकल+द्विकल)
3+3+2+3+2 (त्रिकल+त्रिकल+द्विकल+त्रिकल+द्विकल)
सम चरणों के कलों का क्रम निम्नवत होता है -
4+4+3 (चौकल+चौकल+त्रिकल)
3+3+2+3 (त्रिकल+त्रिकल+द्विकल+त्रिकल)
(ख) उल्लेखनीय है कि लय होने पर कलों का प्रतिबन्ध अनिवार्य है किन्तु कलों का प्रतिबन्ध होने पर लय अनिवार्य नहीं है। जैसे -
श्रीरा/म दिव्य/ रूप/ को , लंके/श गया/ जान

4+4+3+2, 4+4+3 अर्थात कलों का प्रतिबन्ध सटीक है फिर भी लय बाधित है। (ग) कुछ लोग दोहे को दो ही पंक्तियों/पदों में लिखना अनिवार्य मानते हैं किन्तु यह कोरी रूढ़िवादिता है इसका छंद विधान से कोई सम्बन्ध नहीं है। दोहे के चार चरणों को चार पन्तियों में लिखने में कोई दोष नहीं है।

उदाहरण :

बड़ा हु/आ तो/ क्या हु/आ,

4+4+3+2,

जैसे/ पेड़ ख/जूर

4+4+3

पंथी/ को छा/या न/हीं

4+4+3+2,

फल ला/गे अति/ दूर

4+4+3

(22) सोरठा छंद [अर्ध सम मात्रिक]

विधान – 11,13,11,13 मात्रा की चार चरण , सम चरणों के अंत में वाचिक भार 12 (अपवाद स्वरुप 12 2 भी), विषम चरणों के अंत में 21 अनिवार्य, सम चरणों के प्रारंभ में ‘मात्राक्रम 121 का स्वतंत्र शब्द’ वर्जित, विषम चरण तुकांत जबकि सम चरण अतुकांत।

विशेष – दोहा छंद के विषम और सम चरणों को परस्पर बदल देने से सोरठा छंद बन जाता है ! इसप्रकार अन्य लक्षण दोहा छंद के लक्षणों से समझे जा सकते हैं।

उदाहरण :

चरण बदल दें आप

दोहा में यदि सम-विषम

बदलें और न माप

बने सोरठा छंद प्रिय

(23) कुण्डलिया छंद [विषम मात्रिक]

विधान – दोहा और रोला को मिलाने से कुण्डलिया छंद बनता है जबकि दोहा के चतुर्थ चरण से रोला का प्रारंभ होता हो (पुनरावृत्ति) तथा प्रारंभिक शब्द या शब्दों से ही छंद का समापन हो (पुनरागमन)। दोहा और रोला छंदों के लक्षण अलग से पूर्व वर्णित हैं। कुण्डलिया छंद में कुल छः चरण होते हैं , क्रमागत दो-दो चरण तुकांत होते हैं।

कुण्डलिया = दोहा + रोला

विशेष :

(क) इस छंद के प्रथम दो चरणों के मात्राभार (13,11) और नियम एक जैसे हैं तथा उससे भिन्न अंतिम चार चरणों के मात्राभार (11,13) और नियम एक जैसे हैं। अस्तु यह छंद विषम मात्रिक है।

(ख़) दोहे के चतुर्थ चरण की रोला के प्रारंभ में पुनरावृत्ति सार्थक होनी चाहिए अर्थात दुहराया गया अंश दोनों चरणों में सार्थकता के साथ आना चाहिए।

(ग) चूँकि कुण्डलिया के अंत में वाचिक भार 22 आता है , इसलिए इसका प्रारंभ भी वाचिक भार 22 से ही होना चाहिए अन्यथा पुनरागमन दुरूह या असंभव हो जायेगा।

(घ) कथ्य का मुख्य भाग अंतिम चरणों में केन्द्रित होना चाहिए , तभी छंद अपना पूरा प्रभाव छोड़ता है।

उदाहरण :

माता कभी न माँगती, आँचल का प्रतिकार,
जननी करती पुत्र से, आँचल का व्यापार
आँचल का व्यापार, चिता तक करती रहती
गर्भ-दूध का क़र्ज़, चुकाने को नित कहती
करे सुता से नेह, बहू से धन का नाता
जो ले माँग दहेज़, नहीं वह माता माता

(24) **कुण्डलिनी छंद** [विषम मात्रिक]

विधान - दोहा और अर्ध रोला को मिलाने से कुण्डलिनी छंद बनता है जबकि दोहा के चतुर्थ चरण से अर्ध रोला का प्रारंभ होता हो (पुनरावृत्ति)। इस छंद में यथारुचि प्रारंभिक शब्द या शब्दों से छंद का समापन किया जा सकता है (पुनरागमन), किन्तु

यह अनिवार्य नहीं है। दोहा और रोला छंदों के लक्षण अलग से पूर्व वर्णित हैं। कुण्डलिनी छंद में कुल चार चरण होते हैं , क्रमागत दो-दो चरण तुकांत होते हैं।

कुण्डलिया = दोहा + अर्धरोला

विशेष :

(क) इस छंद के प्रथम दो चरणों के मात्राभार (13,11) और नियम एक जैसे हैं तथा उससे भिन्न अंतिम दो चरणों के मात्राभार (11,13) और नियम एक जैसे हैं। अस्तु यह छंद विषम मात्रिक है।

(ख़) दोहे के चतुर्थ चरण की अर्धरोला के प्रारंभ में पुनरावृत्ति सार्थक होनी चाहिए अर्थात दुहराया गया अंश दोनों चरणों में सार्थकता के साथ आना चाहिए।

(ग) चूँकि कुण्डलिनी के अंत में वाचिक भार 22 या गागा आता है, इसलिए यदि पुनरागमन रखना है तो इसका प्रारंभ भी वाचिक भार 22 या गागा से ही होना चाहिए अन्यथा पुनरागमन दुरूह या असंभव हो जायेगा

(घ) कथ्य का मुख्य भाग अंतिम चरणों में केन्द्रित होना चाहिए, तभी छंद अपना पूरा प्रभाव छोड़ पाता है।

(च) कुण्डलिनी लेखक द्वारा सृजित एक लौकिक छंद है, जिसमें परम्परागत कुण्डलिया छंद का सरलीकरण किया गया है और उसे अधिक व्यावहारिक बनाने का प्रयास किया गया है।

उदाहरण :

जननी जनने से हुई, माँ ममता से मान
जननी को ही माँ समझ, भूल न कर नादान
भूल न कर नादान, देख जननी की करनी
करनी से माँ बने, नहीं तो जननी जननी

सवैया :

(आलेख श्री सौरभ पाण्डेय जी की विभिन्न पोस्ट पर आधारित)

किसी एक गण को, जो क्रमशः लघु और गुरु को मिला कर तीन वर्ण बनाते हैं, यथा, यगण, सगण, भगण आदि-आदि, की सात आवृतियों के साथ आवश्यकतानुसार गुरु या लघु वर्ण या एक या अधिक कोई अन्य यथोचित गण से बनी आवृति को जो एक पद का निर्माण करते हैं, ऐसे चार पदों के समूह को **सवैया** कहते हैं। इस तरह से स्पष्ट है कि सवैया वर्णिक छंद होते हैं। एक सवैया में अमूमन चार पद होते हैं और उनका स्वरूप तुकांत होता है। यानी एक सवैया छंद चार पदों का होता है।

वर्णिक पंक्तियों - इसे वृत्त भी कहते हैं- में 22 से 26 वर्ण के चरण अथवा पद वाले जाति-छन्दों को **सवैया** कहा जाता है। यहाँ पद और चरण दोनों की क्यों बात की गयी है यह सवैया के विभिन्न प्रारूपों को पढने के बाद स्वयं ज्ञात हो जायेगा।

कवित्त-घनाक्षरी के समान ही हिन्दी रीतिकाल में विभिन्न प्रकार के सवैया प्रचलित रहे हैं। कई विद्वान हिन्दी के सवैया को भी कवित्त की तरह मुक्तक की तरह गिनते हैं।

जिस प्रकार कवित्त एक विशेष लय पर चलता है, उसी प्रकार सवैया भी लयमूलक ही है.

सवैया चूँकि एक वर्णिक छंद है, जिसमें गणों के अनुसार शाब्दिकता स्थान प्राप्त करती है, अतः इसके पद आज की हिन्दी के रूप को सहज स्वीकार नहीं करते. या कहा जाना चाहिए कि कठिनता से स्वीकार करते हैं.

हिन्दी का आंचलिक रूप इस छंद को अधिक संतुष्ट करता है. या, यह भी सत्य है कि आंचलिक भाषाओं, यथा, अवधी, ब्रज,भोजपुरी आदि भाषाओं में सवैया छंद में रचनाकर्म अधिक सरल है.

कारण कि, वाचन-प्रवाह के क्रम में कई शब्दों की मात्राएँ गणों के अनुसार बरतनी पड़ती है. इस से होता यह है कि शब्दों में निहित गुरु मात्राएँ उच्चारित तो होती हैं लेकिन उन पर स्वरघात का समय गण के तयशुदा लघु वर्ण के हिसाब से कम हो जाता है और वे लघु के अधिक सन्निकट हो जाती हैं. दूसरे, हमें शब्द और गण

आधारित पद में अंतर समझना चाहिये. यहाँ ध्यातव्य है कि यह पद ऐसे शब्द जो गण के अनुरूप ढल जाते हैं.

जैसे, **मन** शब्द है जबकि **मनहिं** पद है, जिसका अर्थ है मन में. पुनः, एक शब्द लिया जाय **सारे**. यहाँ **रे** पर **यदि बलाघात कम कर दिया जाय तो 'रे' का लघु रूप उच्चारित होगा**. इसी तरह **नहीं** शब्द है. इसे **नहिं** की तरह लिखा भी जाता है. **ही** को **हि** कर दिया जाता है. या, **है** को भी कभी-कभी **ह** की तरह या कम स्वरबल लगा कर लघु रूप में उच्चारित करते हैं.

अब प्रश्न उठता है कि शब्द **सारे** के **सा** पर बलाघात कम किया जा सकता है क्या ? इस का उत्तर इस शब्द की बुनावट में छुपा है जहाँ **सा** का लघु होना इस शब्द के रूप को ही बिगाड़ कर रख देगा. और **सारे सरे** की तरह उच्चारित होगा. इस तरह तो शब्द ही बदल गया. यह तो शब्द की आत्मा से ही खिलवाड़ होना हो गया है न ?

एक बात और, जो सभी प्रकार के शास्त्रीय छंदों में मान्य है, वह यह है कि कारक की विभक्तियों के एक शाब्दिकचिह्न लघु की तरह व्यवहार में लाये जा सकते हैं.

जैसे,

कर्ता - ने को न की तरह उच्चारित किया सकता है.

कर्म - को. इसे क पढ़ा जा सकता है.

करण - से स की तरह पढ़ सकते हैं.

अपादान - से. इसे स की तरह लिया जा सकता है.

सम्बन्ध - का, के, की के लिए भी मात्र क कहा जा सकता है.

अधिकरण - में, पे आदि क्रमशः मँ और प की तरह उच्चारित हो सकते हैं.

उच्चारण के कारण ही कारक विभक्तियों के चिह्न छंद रचना के समय लघु रूप में व्यवहृत होते हैं.

सवैया के निम्नलिखित विभिन्न प्रकार अत्यंत प्रचलित हैं.

भगणाश्रित मुख्यतः छः सवैये हैं –
1) मदिरा 2) मत्तगयन्द 3) चकोर 4) किरीट 5) अरसात 6) मोद [भगण X 5 + मगण सगण गुरु]

सगणाश्रित मुख्यतः चार सवैये हैं -
1) दुर्मिल 2) सुन्दरी 3) अरविन्द 4) सुखी और सुख

जगणाश्रित मुख्यतः चार सवैये हैं -
1) सुमुखि 2) मुक्ताहरा 3) वाम 4) लवंगलता [जगण X 8 +गुरु]

तगणाश्रित मुख्यतः तीन सवैये हैं -
1) मंदारमाला 2) सर्वगामी [तगण X 7 + गुरु गुरु] 3) आभार [तगण X 8]

रगणाश्रित मुख्यतः एक सवैया है -
1) गंगोदक

यगणाश्रित मुख्यतः दो सवैये हैं -
1) महाभुजंगप्रयात 2) वागीश्वरी [यगण X 7 +लघु गुरु]
मगणाश्रित (मगण - दीर्घ दीर्घ दीर्घ यानि सभी गुरु वर्ण) और **नगणाश्रित** (नगण - ह्रस्व ह्रस्व ह्रस्व यानि सभी लघु वर्ण) स्वरानुसार (गेयता के हिसाब से) आवृतियाँ उचित नहीं होतीं. हुईं भी तो इनका वृत अरुचिकारक ही होगा.
आगे यथासंभव **एक समूह से कम से कम एक सवैया** की प्रक्रिया पर अवश्य चर्चा करेंगे.
उपजाति सवैया का भी खूब प्रचलन रहा है. कहते हैं उपजाति सवैया स्वामी तुलसीदास से प्रारंभ हुआ है. माना जाता है कि तुलसीदास ने 'कवितावली' में सर्वप्रथम इनका प्रयोग किया था. उपजाति का अर्थ है जिसमें दो भिन्न सवैया एक साथ प्रयुक्त हुए हों. केशवदास ने भी इस दिशा में बखूब प्रयोग किये हैं.
निम्नलिखित

सारिणी-१ मगणाश्रित, सगाणाश्रित और जगाणाश्रित सवैयों की आवृतियाँ को दर्शाती है. इनके पदांत में साम्य होना विशेष रूप से द्रष्टव्य है. **सारिणी-१** -

मदिरा (भ०)	S I I S I I S I I S I I S I I S I I S I I S
दुर्मिला (स०)	I I S I I S I I S I I S I I S I I S I I S I I S
सुमुखी (ज०)	I S I I S I I S I I S I I S I I S I I S I I S
मत्तगयंद (भ०)	S I I S I I S I I S I I S I I S I I S I I S S
सुन्दरी (स०)	I I S I I S I I S I I S I I S I I S I I S I I S S
बाम (ज०)	I S I I S I I S I I S I I S I I S I I S I I S S
चकोर (भ०)	S I I S I I S I I S I I S I I S I I S I I S I
अरविंद (स०)	I I S I I S I I S I I S I I S I I S I I S I I S I
मुक्ताहरा (ज०)	I S I I S I I S I I S I I S I I S I I S I I S I
किरीट (भ०)	S I I S I I S I I S I I S I I S I I S I I S I I
सुखी (स०)	I I S I I S I I S I I S I I S I I S I I S I I S I I
लवंगलता (ज०)	I S I I S I I S I I S I I S I I S I I S I I S I I
अरसात (भ०)	S I I S I I S I I S I I S I I S I I S I I S I S
मोद (भ०)	S I I S I I S I I S I I S I I S S S I I S S

निम्नलिखित **सारिणी - 2 तगणाश्रित, यगणाश्रित और रगणाश्रित सवैयों** की आवृतियों को दर्शाती है. इनके पदांत में साम्य होना विशेष रूप से द्रष्टव्य है.

सारिणी - 2

गंगोदक (र०)	S I S S I S S I S S I S S I S S I S S I S S I S
मंदार माला (त०)	S S I S S I S S I S S I S S I S S I S S I S
सर्वगामी (त०)	S S I S S I S S I S S I S S I S S I S S I S S
भुजंग (य०)	I S S I S S I S S I S S I S S I S S I S S I S S
आभार (त०)	S S I S S I S S I S S I S S I S S I S S I S S I
वागीश्वरी (य)	I S S I S S I S S I S S I S S I S S I S S I S

इन दोनों सारिणियों से सवैयों के प्रारूपों की आवृतियों से संबंधित सटीक जानकारियाँ मिल जाती हैं.

उपरोक्त सवैया के बारे में विस्तार से चर्चा

मदिरा सवैया [भगण X 7 + गुरु]

मत्तगयंद सवैया में भगण की सात आवृति के पश्चात् दो गुरु का होना तय माना गया है.

इसी सवैये में थोड़ा सा परिवर्तन करते हुए हम पद के अंत से एक गुरु कम कर दें तो एक विशेष सवैया सामने आता है. इसी सवैया को **मदिरा सवैया** कहते हैं.

अर्थात, **मदिरा सवैया** = **भगण X 7 + गुरु**

मदिरा सवैया = भानस भानस भानस भानस भानस भानस भानस + गुरु

चूँकि, सवैया के विषय में हम समझते हैं कि गेयता के अनुसार यति निर्धारित हो जाती है. फिरभी, मत्तगयंद सवैया के अनुसार मदिरा सवैया के पदों में भी 12-10 या 10-12 वर्णों पर यति मान्य है.

उदाहरण स्वरूप हम नवोदित रचनाकार कुमार गौरव अजीतेन्दु द्वारा रचित मदिरा सवैया को लेते हैं --

भारत के हम शेर, रखें मन-प्राण सुरक्षित कानन को ।
मेट रहे बल-पौरुष से, दिखते हर संकट कारण को ॥
भाग चला हर शत्रु लिए तन-मोह ढके निज आनन को ।
विश्व कहे, हम वीर बड़े दिल से रखते वसुधा-मन को ॥

पहला पद -

भारत (गुरु लघु लघु) / के हम (गुरु लघु लघु) / शेर र (गुरु लघु लघु) / खें मन (गुरु लघु लघु) /

<--------1------------><------------2----------><----------3----------><------------4------------>

प्राण सु (गुरु लघु लघु) / रक्षित (गुरु लघु लघु) / कानन (गुरु लघु लघु) / को (गुरु)

<------------5-----------><----------6------------><-----------7-----------><--
-8--->

दुर्मिल सवैया [दुर्मिल स२. वैया = सगण X 8]

दुर्मिल सवैया में 24 वर्ण होते हैं. छंद के पद आठ सगणों यानि सलगा यानि लघु लघु गुरु या ।।ऽ से बनते हैं.
यानि, दुर्मिल सवैया = सगण X 8

अर्थात, सगण सगण सगण सगण सगण सगण सगण सगण

या, ।।ऽ ।।ऽ ।।ऽ ।।ऽ ।।ऽ ।।ऽ ।।ऽ ।।ऽ

छंद पद की गेयता के अनुसार चार सगण के बाद यति मानी जाती है. या, इसे ऐसे भी कह सकते हैं कि 12, 12 वर्णों पर यति होती है. किन्तु, पुनः निवेदन है कि ये छंद मात्रिक नहीं होते अतः यहाँ गेयता या वाचन के अनुसार स्वयं यति का निरुपण हो जाता है.
चार पदों से बने ये छंद सम-तुकान्त होते हैं. जबतक कि, रचनाकार द्वारा विशेष किन्तु मान्य प्रयोग न हुए हों. यह अत्यंत ही प्रचलित सवैया छंद है और इसका विशद प्रयोग रीतिकाल और भक्तिकाल से लेकर आधुनिक काल तक में होता आ रहा है.
तुलसी कृत कवितावली के बालकाण्ड में प्रारम्भ के कई छंद दुर्मिल सवैया के बेहतरीन उदाहरण हैं किन्तु यहाँ बालकाण्ड का ही पहला छंद उदाहरण हेतु प्रस्तुत किया जा रहा है –

अवधेसके द्वारें सकारें गई सुत गोद कै भूपति लै निकसे।
अवलोकि हौं सोच बिमोचनको ठगि-सी रही, जे न ठगे धिक-से।
तुलसी मन-रंजन रंजित-अंजन नैन सुखंजन-जातक-से।

सजनी ससिमें समसील उभै नवनील सरोरूह -से बिकसे ।

प्रथम पद -

अवधे (लघु लघु गुरु) / स **के** द्वा (लघु **लघु** गुरु) / **रें** सका (**लघु** लघु गुरु) / **रें** गई (**लघु** लघु गुरु) /

<----------1----------><-----------2--------------><------------3------------><------------4--------->

सुत गो (लघु लघु गुरु) / द **कै** भू (लघु **लघु** गुरु) / पति लै (लघु लघु गुरु) / निकसै (लघु लघु गुरु)

<-----------5----------><-------------6-----------><------------7------------><-----------8---------->

उपरोक्त विन्यास में बोल्ड किये गये अक्षर अधिकतर शब्द-संयोजक हैं जो कारक विभक्ति के रूप में हैं कैसे गुरु होते हुए भी लघु रूप में प्रयुक्त हो सकते हैं. **मैं ध्यान खींचना चाहता हूँ तीसरे तथा चौथे सगण पर, जहाँ रें का गुरु रूप लघु की तरह स्वीकृत है.** इसकी भी व्याख्या पूर्ववत है कि वाचन-प्रवाह के क्रम मेंशब्दों के उक्त अक्षरों पर स्वरघात शब्द के अनुसार न हो कर उक्त गण (यहाँ सगण) की मात्रा के अनुसार हो रहा है.

सुमुखि सवैया [जगण X 7 + लघु + गुरु]

सवैये का यह प्रकार जगण यानि जभान या लघु गुरु लघु (।ऽ।) की आवृति पर चलता है. अर्थात -

सुमुखि सवैया = जगण X 7 + लघु + गुरु

या, इसे ऐसे भी समझ सकते हैं - मदिरा सवैया **के प्रारंभ में एक लघु लगा देने से सुमुखि सवैया बन जाती है**.

मदिरा सवैया का विन्यास = भानगा X 7 + गुरु

यानि ऽ। । ऽ। । ऽ। । ऽ। । ऽ। । ऽ। । ऽ। । ऽ

इस पद का प्रारंभ यदि लघु से हो तो पद होगा -- लघु भानस भानस भानस

भानस भानस भानस भानस गुरु
यानि । ऽ। । ऽ। । ऽ। । ऽ। । ऽ। । ऽ। । ऽ। । ऽ
इस क्रम को यदि पुनर्व्यवस्थित किया जाय तो -
। ऽ। / । ऽ। / । ऽ। / । ऽ। / । ऽ। / । ऽ। / । ऽ। / ।ऽ
। ऽ । या जगण यानि जभान हुआ. अतः, जगण जगण जगण जगण जगण
जगण जगण + लघु गुरु

यही विन्यास **सुमुखि सवैया** का पद-विन्यास है. यानि **सात जभान + लघु गुरु**

उदाहराणार्थ निम्नलिखित छंद प्रस्तुत किया जा रहा है -
जु लोक लगैं सिय रामहिं साथ चलैं बन माँहिं फिरै न चहैं ।
हमें प्रभु आयसु देहु चलैं रउरे संग यों कर जोरि कहैं ॥
चलैं कछु दूर नमे पग धूरि भले फल जन्म अनेक लहैं ।
सिया सुमुखी हरि फेरि तिन्हें बहु भाँतिन तें समुझाय कहैं ॥

प्रथम पद -
जु लोक (लघु गुरु लघु) / लगैं सि (लघु गुरु लघु) / य राम (लघु गुरु लघु) / हिं साथ (लघु गुरु लघु) /
<-------------1----------><-----------2------------><-----------3------------
><----------4-------------->
चलैं ब (लघु गुरु लघु) / न माँहिं (लघु गुरु लघु) / फिरै न (लघु गुरु लघु) / चहैं (लघु गुरु)
<-------------5---------><-------------6-----------><------------7-----------
><-----8----->

इस सवैया को मानिनी या मल्लिका सवैया भी कहते हैं

मत्तगयंद सवैया [भगण X 7 +गुरु+गुरु]

मत्तगयन्द सवैया 23 वर्णों का छन्द है, जिसमें **सात भगण के पीछे यानि बाद दो गुरुओं का योग** होता है. भगण का रूप भानस है जिसके शब्द गुरु लघु लघु यानि ऽ। । होते हैं. इसे ऐसे भी समझा जा सकता है -- मत्तगयंद सवैया का एक पद (पंक्ति) = भानस भानस भानस भानस भानस भानस भानस गुरु गुरु
एक भानस = 3 वर्ण, तो सात भानस = 21 वर्ण और पीछे से दो गुरु गुरु वर्ण यानि कुल वर्णों की संख्या हुई, 21 + 2 = 23.
यानि, मत्तगयंद सवैया = भगण X 7 +गुरु+गुरु

मत्तगयंद सवैया में चार पद होते हैं और तुकांत होते हैं. जबतक कि किसी प्रयोजन विशेष के चलते रचनाकार ने कोई नवीन प्रयोग न किया हो.

एक उदाहरण -
सीस पगा न झगा तन में प्रभु, जानै को आहि बसै केहि ग्रामा।
धोति फटी-सि लटी दुपटी अरु, पाँयउ पानहि की नहिं सामा॥
द्वार खरो द्विज दुर्बल एक, रह्यौ चकि सौं वसुधा अभिरामा।
पूछत दीन दयाल को धाम, बतावत आपनो नाम सुदामा॥

पहला पद -
<u>सीस प (गुरु लघु लघु)</u> / <u>गा न झ (गुरु लघु लघु)</u> / <u>गा तन (गुरु लघु लघु)</u> / <u>में प्रभु, (गुरु लघु लघु)</u> /
<-------1-------------> <----------2--------------><--------3--------------><---------4-------------->

<u>जानै को (गुरु लघु लघु)</u> / <u>आहि ब (गुरु लघु लघु)</u> / <u>सै केहि (गुरु लघु लघु)</u> / <u>ग्रामा (गुरु गुरु)</u>
<-----------5------------><-----------6------------><-----------7-----------

><-------8------->

ध्यान से देखा जाय तो पाँचवे भगण में कुछ अस्पष्टता है. **जानैको** भगण न हो कर मगण (मातारा, ऽऽऽ) प्रतीत हो रहा है. किन्तु पद के वाचन-प्रवाह (पढ़ने की गति) के अनुसार शब्द **जानक** ही पढा जायेगा, न कि जानैको. इसी रह सातवें भगण की व्याख्या है. **सैकेहि** को **सैकहि** पढ़ा जायेगा.
इसी आलोक में उदाहरण में उद्धृत अन्य तीनों पदों को देखा जाय.
इस क्रम में, उद्धृत छंद में दूसरा पद काबिलेग़ौर है -- **धोति फटी-सि लटी दुपटी अरु, पाँयउ पानहि की नहिं सामा**
यहाँ **धोती** को **धोति**, **फटी-सी** को **फटी-सि** तथा **नहीं** को **नहिं** लिखा गया है. इसे शब्द अक्षरी में दोष की तरह न देख कर उच्चारण प्रवाह के अनुसार शब्द के अक्षर पर स्वराघात में परिवर्तन की तरह देखा जाना चाहिये. यही कारण है कि सवैये हिन्दी के आंचलिक रूप को आसानी से स्वीकार करते हैं, बनिस्पत हिन्दी के खड़े रूप के.

सुन्दरी सवैया [सगण X 8 + गुरु]

दुर्मिल सवैया के विषय में चर्चा कर चुके हैं जिसका सूत्र सगण X 8 होता है. सगण की इस आवृति या वर्ण वृत के अंत में एक गुरु के जोड़ दिये जाने से **सुन्दरी सवैया** का होना माना जाता है. इसे कई विद्वानों ने **माधवी सवैया** कहा है.
अतः, **सुन्दरी सवैया = सगण X 8 + गुरु**
यानि, सलगा सलगा सलगा सलगा सलगा सलगा सलगा सलगा + गुरु
या, ।। ऽ ।। ऽ ।। ऽ ।। ऽ ।। ऽ ।। ऽ ।। ऽ ।। ऽ + ऽ

सुन्दरी सवैया के उदाहरण हेतु महाकवि चच्चा विरचित एक कारुणिक छंद प्रस्तुत है -
बर बुद्धि बिरंचि ने भाल चचा, कुछऐसी लकीर खिंची बिरची है ।
कि सदैव विपत्ति बवंडर में, दुख अंधड़ में जनु होड़ मची है ॥

तिहुँ पे नित दानवी दीन दसा, सिर पै चढ़ि नड़्ग उलड़्ग नची है ।
फिर कौन कथा पगई जो गई, भगवान भला भगई तो बची है ॥

प्रथम पद विन्यास -
बर बुद् (लघु लघु गुरु) / धि बिरं (लघु लघु गुरु) / चि **ने** भा (लघु लघु गुरु) / ल चचा (लघु लघु गुरु) / कुछ ऐ (लघु लघु गुरु) /
<-----------1----------><-------------2-----------><------------3-------------><-------------4---------><-----------5------------>
सी लकी (लघु लघु गुरु) / र खिंची (लघु लघु गुरु) / बिरची (लघु लघु गुरु) / है (गुरु)
<------------6------------><-------------7------------><-----------8----------><---9--->
उपरोक्त विन्यास में स्पष्ट है कि **तीसरे और छठे सगण में क्रमशः ने और सी का गण विधान के अनुसार लघु रूप** लिया गया है.

वाम सवैया [जगण X 7 + यगण]

मुक्तहरा सवैया का विधान **आठ जगण की आवृति** है. इसके अंतिम यानि आठवें जगण के तीसरे लघु वर्ण को गुरु वर्ण कर दिया जाय तो उक्त जगण यगण (यानि लघु गुरु गुरु) में परिवर्तित हो जाता है. इस तरह शेष रहते हैं **सात जगण के अंत मे एक यगण का वृत. इस विन्यास को ही वाम सवैया कहते हैं.**

इस तरह **वाम सवैया = जगण (लघु गुरु लघु) X 7 + यगण (लघु गुरु गुरु)**
यानि, जगण (लघु गुरु लघु) जगण (लघु गुरु लघु) जगण (लघु गुरु लघु) जगण (लघु गुरु लघु) जगण (लघु गुरु लघु) जगण (लघु गुरु लघु) जगण (लघु गुरु लघु) यमाता (लघु गुरु गुरु)

या, **वाम सवैया के लिए यह भी कहा जा सकता है कि** मत्तगयंद सवैया **के आदि में लघु जोड़ देने से इस सवैया का होना माना जाता है.**

मत्तगयंद सवैया = भगण (गुरु लघु लघु) X 7 + गुरु गुरु

उपरोक्त सूत्र के अनुसार, मत्तगयंद के विन्यास के आदि में लघु जोड़ दिया जाय = । + (ऽ।। ऽ।। ऽ।। ऽ।। ऽ।। ऽ।। ऽ।। + ऽऽ) तो **वाम सवैया** का होना माना जाता है.

अतः वाम सवैया के लिहाज से उपरोक्त विन्यास होगा - (।ऽ। ।ऽ। ।ऽ। ।ऽ। ।ऽ। ।ऽ। ।ऽ। + ।ऽऽ)

उदाहरणार्थ छंद -

जु लोक यथा मति वेद पढ़ैं सह आगम औ दश आठ प्रमाने
बनै महि में शुक शारद शेष गणेश हा बुधि मन्त समाने
चढैं गज बाजि सु पीनास आदि जु वाहन राजन केर बखाने
लहैं भलि वाम अरू धन धाम तु काह भयो बिनु रामहिं जाने

इस छंद के पहले पद में वेद, आगम यानि वेदांत और दश आठ प्रमाण यानि अट्ठारह पुराण की चर्चा है. इसीतरह, तीसरे पद में हाथी, घोड़े पीनस राजाओं की सवारियाँ आदि की चर्चा है.

अब प्रथम पद विन्यास -

जु लोक (लघु गुरु लघु) / यथा म (लघु गुरु लघु) / ति वेद (लघु गुरु लघु) / पढ़ें स (लघु गुरु लघु) / ह आग (लघु गुरु लघु) /

<-------------1----------><-----------2------------><-----------3----------- ><----------4-----------><------------5------------>

म औ द (लघु गुरु लघु) / श आठ (लघु गुरु लघु) / प्रमाने (लघु गुरु गुरु)

<-------------6----------><------------7-----------><----------8---------->

चकोर सवैया [भगण X 7 + गुरु + लघु]

इससे पहले कि हम शीर्षक सवैया पर बात करें हम पुनः मदिरा सवैया का स्मरण करें जिसका विधान सात भगण प्लस एक गुरु का होता है. यानि मदिरा सवैया = भगण X 7 + गुरु

इसमें गुरु के बाद एक लघु लगा दिया जाय तो ? तो, वह एक अलग ही सवैया का कारण होगा, जिसे **चकोर सवैया** कहते हैं.
इस तरह **चकोर सवैया का विधान हुआ - भगण या भानस (गुरु लघु लघु . ऽ। ।) सात बार और फिर एक गुरु तथा लघु**
यानि, भगण भगण भगण भगण भगण भगण भगण + गुरु लघु
इसे सूत्र में लिखें तो -
चकोर सवैया = भगण X 7 + गुरु + लघु

उदाहरणार्थ इस छंद प्रस्तुत है -
भासत ग्वाल सखी गन में हरि राजत तारन में जिमि चंद ।
नित्य नयो रचि रास मुदा ब्रज में हरि खेलत आनँद कंद ॥
या छवि काज भये ब्रज वासि चकोर पुनीत लखै नँद नंद ।
धन्य वही नर नारि सराहत या छवि काटत जो भव फंद ॥

प्रथम पद का विन्यास -
भासत (गुरु लघु लघु) / ग्वाल स (गुरु लघु लघु) / खी गन (गुरु लघु लघु) / में हरि (गुरु लघु लघु) /
<-----------1-----------><-----------2-------------><-----------3-------------><-----------4------------->
राजत (गुरु लघु लघु) / तारन (गुरु लघु लघु) / में जिमि (गुरु लघु लघु) / चंद (गुरु लघु)
<-----------5---------><-----------6------------><-----------7-------------><-------8------->

इसके अलावे इस उपरोक्त छंद के तीसरे पद में प्रयुक्त **नँद नंद** पर मात्रिक प्रयोग देखते ही बनता है. यह अवश्य है कि नँद तथा नंद का अर्थ नन्द ही है. किन्तु छंद में प्रयुक्त गण के वर्ण को संतुष्ट करने के लिए आंचलिक शाब्दिकता का सहारा लेकर शब्द कौतुक उत्पन्न किया गया है. यानि, **नँद** में वर्ण **लघु लघु** हैं जबकि **नंद** में वर्ण का प्रारूप **गुरु लघु** है.

मुक्तहरा सवैया [जगण X 8]

हमने सुमुखि सवैया की जानकारी प्राप्त कर ली है. सुमुखि सवैया का विधान सात **जगण (लघु गुरु लघु) के पीछे लघु गुरु** का संयोग माना जाता है.

यानि,

सुमुखि सवैया = (जगण या लघु गुरु लघु) (जगण या लघु गुरु लघु) (जगण या लघु गुरु लघु) (जगण या लघु गुरु लघु) (जगण या लघु गुरु लघु) (जगण या लघु गुरु लघु) (जगण या लघु गुरु लघु) + लघु गुरु

इस वृत विन्यास के अंत में यदि एक लघु और जोड़ दिया जाए तो आठ जगण की आवृति का निर्माण होता है.

आठ जगण के इसी वृत को मुक्तहरा सवैया कहते हैं.

अतः, **मुक्तहरा सवैया = जगण या जभान या (लघु गुरु लघु) X 8**

अर्थात, मुक्तहरा सवैया = (जगण या लघु गुरु लघु) (जगण या लघु गुरु लघु) (जगण या लघु गुरु लघु) (जगण या लघु गुरु लघु) (जगण या लघु गुरु लघु) (जगण या लघु गुरु लघु) (जगण या लघु गुरु लघु) (जगण या लघु गुरु लघु)

उदाहराणार्थ छंद प्रस्तुत है -

जु आठहुँ याम भजैं शिव को नित छाँड़ि सबै छल छिद्र सुजान
सुहैं धन या जग माहिं लहैं फल जन्म लिये कर सन्त समान
प्रसन्न सदा शिव हों तुरतै जन पै सब भाषत वेद पुरान

करं नित भक्तन को भव मुक्त हरैं जन के सब क्लेश महान

प्रथम पद विन्यास -
जु आठ (लघु गुरु लघु) / हुँ याम (लघु गुरु लघु) / भजें शि (लघु गुरु लघु) / व को नि (लघु गुरु लघु) / त छाँड़ि (लघु गुरु लघु) /
<-------------1----------><-----------2------------><-----------3------------
><----------4--------------><------------5------------->
सबै छ (लघु गुरु लघु) / ल छिद्र (लघु गुरु लघु) / सुजान (लघु गुरु लघु)
<------------6---------><------------7------------><----------8---------->

अरविन्द सवैया [सगण X 8 + लघु]

वस्तुतः यह सवैया दुर्मिल सवैया का ही विस्तार सदृश है. अर्थात, आठ सगण के पश्चात एक लघु इस सवैया के होने का कारण है.
यानि, **अरविन्द सवैया = सगण X 8 + लघु** यानि, यह छंद कुल 25 वर्णों का वृत है.
यानि, सलगा सलगा सलगा सलगा सलगा सलगा सलगा सलगा + लघु
या, IIS IIS IIS IIS IIS IIS IIS IIS + लघु
यहाँ ध्यान से देखा जाय तो एक बात और स्पष्ट होती है, और वह है सुन्दरी सवैया तथा अरविन्द सवैया के मध्य का महीन अंतर.
दुर्मिल सवैया के अंत में एक लघु का संयोग अरविन्द सवैया के होने का कारण होता है जबकि,
दुर्मिल सवैया के अंत में ही एक गुरु का संयोग सुन्दरी सवैया के होने का कारण है.

उदाहरण हेतु भानुकवि विरचित एक छंद -
सबसों लघु आपुहिं जानिय जू यह धर्म सनातन जान सुजान
जबहीं सुमती अस आनि वसै उर सम्पति सर्व बिराजत आन

प्रभु व्याप रह्यौ सचराचर में तजि बैर सुभक्ति सजौ मतिमान
नित राम पदै अरविंदन को मकरंद पियो सुमिलिंद सान

तृतीय पद का विन्यास -
प्रभु व्या (ह्रस्व ह्रस्व दीर्घ) / प रह्यौ (ह्रस्व ह्रस्व दीर्घ) / सचरा (ह्रस्व ह्रस्व दीर्घ) / चर में (ह्रस्व ह्रस्व दीर्घ) /
<--------------1------------><----------2--------------><-----------3-------------><---------4--------------->
तजि बै (ह्रस्व ह्रस्व दीर्घ) / र सुभक् (ह्रस्व ह्रस्व दीर्घ) / ति सजौ (ह्रस्व ह्रस्व दीर्घ) / मतिमा (ह्रस्व ह्रस्व दीर्घ) / न (ह्रस्व)
<--------------5----------><-------------6-------------><--------------7-------------><-----------8-------------><----9----->

उपरोक्त विन्यास में ह्रस्व वस्तुतः लघु को तथा दीर्घ गुरु को निर्दिष्ट करते हैं.

पुनः उपरोक्त विन्यास में, दूसरे सगण पर ध्यान देना आवश्यक है जहाँ रह्यौ शब्द को लघु गुरु से बाँधा हुआ कहा गया है. यहाँ उच्चारण के अनुसार ह्य को एक दीर्घ की तरह स्वीकार किया गया है, न कि इसके संयुक्ताक्षर होने से इसके पहले का शब्द भी दीर्घ बन रहा है.

सुख सवैया [सगण X 8 + लघु + गुरु] और सुखी सवैया [सगण X 8 + लघु + लघु]

इस सवैये (वृत) के दो प्रारूप उपलब्ध हैं, एक **सुखी सवैया** कहलाता है तो दूसरा प्रारूप **सुख सवैया**. बहरहाल, पहले हम मूल विधान पर चर्चा करें, फिर इन दोनों प्रारूपों पर बातें करेंगे.

सुख सवैया हो या **सुखी सवैया**, दोनों दुर्मिल सवैया में हुए थोड़े परिवर्तन का परिणाम है.
हमें ज्ञात है कि **दुर्मिल सवैया = सगण X 8**

यदि **दुर्मिल सवैया के विन्यास के अंत में दो लघु संयुक्त हों जायँ तो उक्त सवैया को सुखी सवैया** कहते हैं.
अर्थात, **सुखी सवैया = सगण X 8 + लघु + लघु**
विन्यास - सगण सगण सगण सगण सगण सगण सगण सगण + लघु + लघु
उपरोक्त तथ्य की ताक़ीद **नारायण दास** ने हिन्दी छंदों पर अपनी विशद पुस्तक **हिन्दी छांदोलक्षण** में भी की है. उन्होंने इसका नामकरण **मालती सवैया** या **कुन्दलता सवैया** भी किया है.

उदाहरण के तौर पर **नारायण दास** ने भिखारीदास के दो पद उद्धृत किये हैं, जो इस छंद के अनुरूप हैं -
महिमा गुणवंत की दास बढ़ै बकसै जब रीझि के दाम जवाहिर
जिमि मालती सों अति नेह किये पर भौंर भयो रसिकाइ में ज़ाहिर

उपरोक्त पद्यांश के प्रथम पद का विन्यास -
महिमा (लघु लघु गुरु) / गुणवं (लघु लघु गुरु) / त **की** दा (लघु लघु गुरु) / स बढ़ै (लघु लघु गुरु) / बकसै (लघु लघु गुरु) /
<------------1-----------><----------2-----------><------------3-------------><-------------4---------><-----------5------------>
जब री (लघु लघु गुरु) / झि **के** दा (लघु लघु गुरु) / म जवा (लघु लघु गुरु) / हिर (लघु लघु)
<-----------6----------><--------------7-------------><-----------8------------><------9-------->

हमें सवैया पाठ के तथ्यों से यह ज्ञात ही है कि विन्यास में बोल्ड किये गये शब्द गुरु होने के बावज़ूद लघु रूप में उच्चारित क्यों हो रहे हैं.

जैसा कि हम ऊपर चर्चा कर चुके हैं, इस सवैया का **एक भेद और है. उस प्रारूप में अंतिम वर्ण गुरु** होता है. यह **सुख सवैया** कहलाता है.
संभवतः ऐसा पद या चरण के अंत में आने वाले लघु को गुरु पढ़ने की शास्त्रीय छंद छूट के कारण हो सकता है, अथवा, सायास (जानबझ कर) ऐसा रूप भेद किया गया हो. कारण चाहे जो रहे हों. **सुखी** और **सुख** दोनों प्रारूप प्रचलित हैं.

अतः, **सुख सवैया = सगण X 8 + लघु + गुरु**
विन्यास - सगण सगण सगण सगण सगण सगण सगण सगण + लघु + गुरु

भारतेन्दु हरिश्चंद्र द्वारा रचित छंद उदाहरणार्थ प्रस्तुत है -
कहो कौन मिलाप की बात कहैं कही औरन की तो कछू न पतीजिये
चित चाहे जहाँ बसिये मिलिये न कभू जिय आवै सोई सोई कीजिये
अब प्रान चले चहैं तासौं कहैं हरिचंद की सो बिनती सुनि लीजिये
भरि नैन हमें इक बेरहु तो अपुनो मुख मोहन जोहन दीजिये

हम यहाँ उपरोक्त छंद के द्वितीय पद का विन्यास करते हैं -
चित चा (लघु लघु गुरु) / **हे** जहाँ (लघु लघु गुरु) / बसिये (लघु लघु गुरु) / मिलिये (लघु लघु गुरु) / न कभू (लघु लघु गुरु) /
<------------1-----------><-----------2-----------><------------3-----------><-
------------4-----------><-----------5------------>
जिय आ (लघु लघु गुरु) / **वै सोई** (लघु लघु गुरु) / **सोई** की (लघु लघु गुरु) / जिये (लघु गुरु)
<------------6------------><------------7----------><------------8------------
><------9-------->

देखने योग्य है कि भारतेन्दु ने इस पद में **सातवें और आठवें सगण** को कि तरह से निभाया है. अवश्य ही यह कोई अनुकणीय उदाहरण प्रस्तुत नहीं करता. इसतरह के गुरु वर्णों को भले ही कितना ही प्रवाहपूर्वक क्यों न पढ़ा जाय, उनका 'लघु रूप उच्चारण' किसी तरह से उचित पाठ का उदाहरण नहीं हो सकता. बहरहाल, हम सवैये के विधान पर ही चर्चा को केन्द्रित रखें.

गंगोदक सवैया [रगण X 8]

रगण यानि राजभा या ऽIऽ या गुरु लघु गुरु होता है**. रगण की आठ आवृति गंगोदक सवैया** का कारण होती है.
यानि, रगण रगण रगण रगण रगण रगण रगण रगण .. अर्थात 24 वर्णों का वृत.
इसतरह, **गंगोदक सवैया का सूत्र = रगण X 8**

उदाहरणार्थ एक छंद प्रस्तुत है -
रे बसौ धाइ कै अंत कासी हि कै धाम निश्चिंत गंगोद के पान कै ।
कोटि बाधे कटैं पाप सारे हटैं शंभु शंभू रटैं नाथ जो मान कै ॥
जन्म बीता सबै चेत मीता अबै कीजिये का तबै काल ले आन कै ।
मुण्डमाला गरै सीस गंगा धरै आठ यामै हरै ध्याय ले गान कै ॥

प्रथम पद विन्यास
रे बसौ (गुरु लघु गुरु) / धाइ कै (गुरु लघु गुरु) / अंत का (गुरु लघु गुरु) / सी हि कै (गुरु लघु गुरु) /
<----------1---------><------------2-----------><---------3-------------><----
----------4----------->
धाम निश् (गुरु लघु गुरु) / चिंत गं (गुरु लघु गुरु) / गोद के (गुरु लघु गुरु) / पान कै (गुरु लघु गुरु)
<-----------5------------><------------6-----------><----------7-----------
><----------8-------------->

गंगोदक सवैया को **लक्षी सवैया** भी कहा जाता है.

मंदारमाला सवैया [गुरु + रगण X 7 // तगण X 7 + गुरु]

हमें गंगोदक सवैया के बारे में जानकारी हो चुकी है जिसका विधान रगण X 8 होता है.
इस वृत से एक रगण हटा कर इसके आदि में एक गुरु जोड़ दिया जाय तो मंदारमाला सवैया होना माना जाता है.
यानि, गुरु + रगण रगण रगण रगण रगण रगण रगण
या, ऽ + ऽ।ऽ ऽ।ऽ ऽ।ऽ ऽ।ऽ ऽ।ऽ ऽ।ऽ ऽ।ऽ

उपरोक्त विन्यास को ध्यान से देखा जाय तो तगण की सात आवृतियों के पश्चात एक गुरु का होना भी निश्चित होता है.
यानि, ऽऽ। ऽऽ। ऽऽ। ऽऽ। ऽऽ। ऽऽ। ऽऽ। + ऽ

अर्थात **मंदारमाला सवैया = गुरु + रगण X 7 = तगण X 7 + गुरु**

चूँकि, गणों की नियत आवृति को वृत कहते हैं अतः हर वृत का एक विशेष वाचन प्रवाह बन जाता है. अतः यति वाचन-प्रवाह में स्वयमेव स्थान ले लेती है. फिरभी, 12-10 की यति मान्य है.
उदाहरण हेतु भानु कवि कि के दो पद प्रस्तुत हैं -
मेरी कही मान ले मीत तू जन्म जावै वृथा आप को तार ले।
तेरी फलै कामना हीय की नाम मंदारमाला हियेधार ले॥

प्रथमपद का विन्यास (तगण के लिहाज से) -
मेरी क (गुरु गुरु लघु) / ही मान (गुरु गुरु लघु) / ले मीत (गुरु गुरु लघु) / तू जन्म (गुरु गुरु लघु) / जावै वृ (गुरु गुरु लघु) /

<-----------1-----------><------------2-----------><---------3--------------><-
-------------4----------><-----------5------------->
था आप (गुरु गुरु लघु) / को तार (गुरु गुरु लघु) / ले (गुरु)
<----------6------------><------------7-----------><---8---->

महाभुजंगप्रयात

यगणाश्रित (**यगण** पर आश्रित) सवैयों में **महाभुजंगप्रयात** या **भुजंगप्रयात सवैयों** को लिया जा रहा है. जिसमें यगण की आठ आवृतियाँ वृत का निर्माण करती हैं.

अर्थात, **महाभुजंगप्रयात सवैया = यगण X 8**
या, यमाता यमाता यमाता यमाता यमाता यमाता यमाता यमाता
यानि, ISS ISS ISS ISS ISS ISS ISS ISS

उदाहरण हेतु भिखारीदास रचित एक सवैये के दो पद लेते हैं -
तुहैं देखिबे की महाचाह बाढ़ी मिलापै विचारै सराहै स्मरै जू
रहे बैठि न्यारी घटा देखि कारी बिहारी बिहारी बिहारी ररै जू

प्रथम पद का विन्यास -
तुहैं दे (लघु गुरु गुरु) / खिबे की (लघु गुरु गुरु) / महाचा (लघु गुरु गुरु) / ह बाढ़ी (लघु गुरु गुरु) /
<-----------1----------><----------2--------------><--------3-------------><-
--------4--------------->
मिलापै (लघु गुरु गुरु) / विचारै (लघु गुरु गुरु) / सराहै (लघु गुरु गुरु) / स्मरै जू (लघु गुरु गुरु)
<-----------5----------><-----------6------------><-----------7----------><----
-------8------------>

कहना न होगा, उपरोक्त पद में यमाता (लघु गुरु गुरु) का शुद्ध प्रयोग हआ है.

कुछ विद्वानों द्वारा इस सवैये के लिए **भुजंग सवैया** संज्ञा का प्रयोग हुआ है.

'मत्त सवैया' या 'राधेश्यामी छंद' :

प्रायः ऐसा देखा गया है कि चार चरण से युक्त 'मत्त सवैया' छंद में प्रत्येक पंक्ति में ३२ मात्राएँ होती हैं जहाँ पर
१६ मात्राओं पर यति व् अंत गुरु से होता है | पंडित राधेश्याम ने इस लोकछंद पर आधारित राधेश्याम रामायण रची थी तब से इसे **'राधेश्यामी छंद'** भी कहा जाने लगा है!

कुल चार चरण गुरु अंतहि है, सब महिमा प्रभु की है गाई.
प्रति चरण जहाँ बत्तिस मात्रा, यति सोलह-सोलह पर भाई.
उपछंद समान सवैया का, पदपादाकुलक चरण जोड़े.
कर नमन सदा परमेश्वर को, क्षण भंगुर जीवन दिन थोड़े..
--अम्बरीष श्रीवास्तव

उदाहरण :
कर भुवन कला कर करे कला, सज मत्त सवैया अलबेला.
सत्संगति कर ले साधुन की, जग चार दिनों का है मेला.
यह मानुष देही दुर्लभ है, क्यों भूलि परा है संसारा.
"सब ठाठ पड़ा रह जाएगा, जब लाद चलेगा बंजारा"
--जगन्नाथ प्रसाद 'भानु' (छंद प्रभाकर से)

पहले तो नत मस्तक होकर-फल चार चढ़ाए चरणों में।
फिर अर्घ्यरूप में अश्रुचार चुपचाप गिराए चरणों में।।
बोले-"कर चुका विवाह तीन फिर भी फल उसका मिला नहीं।
है चौथापन आने वाला हृत्कमल अभी तक खिला नहीं।।
--पंडित राधेश्याम (राधेश्याम रामायण से)

पदपादाकुलक छंद

अब पदपादाकुलक छंद को यों समझा जाय कि इसके सभी पद के आदि में एक द्विकल यानि लघु-लघु या एक गुरु अवश्य होता है. उसके बाद की चौदह मात्राएँ चौकल में ही होती हैं. यदि त्रिकल बनता भी है तो एक और त्रिकल रख कर संतुलित कर लिया जाता है. लेकिन पद का प्रारम्भ त्रिकल यानि लघु गुरु, गुरु लघु या लघु-लघु-लघु (।ऽ, ऽ।, ।।।) से कत्तई नहीं हो सकता.

इस तरह, पदपादाकुलक एक विशिष्ट व्यवस्था की अपेक्षा करता है. इसी पदपादाकुलक की कुल मात्राओं का दूना चूँकि मत्त सवैया कहलाता है तो इसके पदों को पदपादाकुलक छंद के नियम मानने पड़ेंगे.

चौपई छंद से अंतर

पदपादाकुलक छंद के विन्यास की अपेक्षा चौपाई छंद में नहीं होती, अतः उसकी अर्धाली (चौपाई का सोलह मात्रिक एक भाग) द्विकल, त्रिकल या चौकल से प्रारम्भ हो सकता है. यह अवश्य है कि त्रिकल के बाद त्रिकल रख कर उसे संतुलित कर लिया जाता है.

आपको विदित हो कि, पदपादाकुलक के अलावे पादाकुलक, अरिल्ल, उपचित्रा, पज्झटिका, सिंह, चित्रा आदि-आदि छंदों की तुलना चौपाई छंद से की जा सकती है. और ये छंद किसी न किसी रूप में लघु या गुरु की अलग-अलग उपस्थिति के कारण विशिष्ट बन जाते हैं. किन्तु चौपाई के विन्यास में ऐसी कोई विशिष्ट व्यवस्था नहीं होती, बशर्ते, पद का अंत गुरु लघु (ऽ।) से न हो.

घनाक्षरी –

-सौरभ पाण्डेय

घनाक्षरी या **कवित्त** को **मुक्तक** भी कहते हैं. इसके सार्थक कारण हैं.
इस छन्द के पदों में वर्णों की संख्या तो नियत हुआ करती हैं, किन्तु, छन्द के सभी पद वर्णक्रम या मात्राओं की गणना से मुक्त हुआ करते हैं. यानि अन्य किसी वर्णिक छन्द की तरह इसके गण (वर्णों का नियत समुच्चय) सधे हुए नहीं होते कि गणों की कोई व्यवस्था बने. अर्थात सगण या भगण या ऐसे ही**गणों की पदों में आवृतियाँ नहीं बनती.** उदाहरण के लिए सवैया को लीजिये.
देखा जाय तो यही वर्णक्रम मुक्तता छन्द को विशेष बनाती है. तदनुरूप, छन्दकारों का दायित्व भी बढ़ जाता है कि वे रचनाकर्म के क्रम में सचेत रहें. अन्यथा वाचन में प्रवाहभंग या लयभंग की स्थिति अनायास ही बन जाती है.
इसी कारण पदों में प्रयुक्त शब्दों के कलों पर विशेष ध्यान रखा जाता है ताकि पदों के वाचन के क्रम में लयभंगता की स्थिति न बनने पाये.
सम कलों वाले शब्दों के बाद सम कल के शब्दों का आना तथा विषम कलों के शब्द के बाद विषम कलों के शब्दों का आना वस्तुतः लयभंगता के दोष को समाप्त करने में सहायक होता है.
वर्णों की गणना के समय एक व्यंजन या व्यंजन के साथ संयुक्त हुए स्वर को एक वर्ण माना जाता है. संयुक्ताक्षर को एक ही वर्ण मानने की परम्परा रही है.
उदाहरण,
शस्य-श्यामला सघन, रंग-रूप से मुखर देवलोक की नदी है आज रुग्ण दाहसे
लोभ मोह स्वार्थ मद पोर-पोर घाव बन रोम-रोम रीसते हैं, हूकती है आह से

यहाँ 'शस्य' दो वर्णों का शब्द हुआ. उसी तरह 'श्यामला' तीन वर्णों का शब्द है. साथ ही, उपरोक्त पदों में पहले पद के माध्यम से यह भी देखा गया कि 'शस्य' त्रिकल है तो उसके ठीक बाद 'श्यामला' ऐसा शब्द है जो पंचकल है और मात्रा भार के अनुसार रगण (ऽ।ऽ, गुरु-लघु-गुरु) शब्द है. अतः 'शस्य' के त्रिकल, जिसका कि

मात्रा-भार गुरु-लघु है, के ठीक बाद श्याम+ला शब्द, जो कि त्रिकल+द्विकल बनाता है, का आना त्रिकल के बाद त्रिकल शब्द की सटीक व्यवस्था बना देता है. और वाचन में लयभंगता नहीं होती.
उपरोक्त व्यवस्था को घनाक्षरी के सभी पदों में चरणवत निभाना है.

छन्द शास्त्र के नियमानुसार इस छन्द के कुल नौ भेद पाये जाते हैं. किन्तु, मुख्य घनाक्षरियाँ चार हैं.
यथा, **मनहरण घनाक्षरी, जलहरण घनाक्षरी, रूप घनाक्षरी तथा देव घनाक्षरी.**

मनहरण घनाक्षरी - चार पदों के इस छन्द में प्रत्येक पद में कुल वर्णों की संख्या ३१ होती है. सभी पदों में नियमानुकूल तुकान्तता हुआ करती है. पदान्त में गुरु का होना अनिवार्य है. लघु-गुरु का कोई क्रम नियत नहीं है. परन्तु, वाचन को सहज रखने के लिए पदान्त को लघु-गुरु से करने की परिपाटी रही है.
विशेष परिपाटी जिसके प्रचलन से इस छन्द को वस्तुतः नियत किया जाता है, उसके अनुसार प्रत्येक पद चार चरणों में विभक्त होता है तथा प्रत्येक चरण में वर्णों की संख्या क्रमशः ८, ८, ८, ७ की यति के अनुसार हो. तथा, पदांत लघु गुरु से हो. एक तथ्य पर हम अवश्य दृढ़ रहें कि मगण (मातारा, गुरु-गुरु-गुरु, ऽऽऽ, २ २ २) से पदान्त न हो. अन्यथा वाचन के क्रम में लय भंगता अवश्य बनेगी.
कहीं-कहीं चरणों के वर्ण की गणना के अनुसार आंतरिक व्यवस्था ८, ७, ९, ७ या ऐसी ही कुछ हो सकती है. ऐसा होना कोई वैधानिक दोष नहीं है. परन्तु ध्यान से परखा जाय तो आंतरिक व्यवस्था चाहे जो हो, शाब्दिक कलों का निर्वहन सहज ढंग से हुआ है, तो छन्द वाचन में या पद-गायन में कोई असुविधा नहीं होती. और छन्द निर्दोष माना जाता है.

छन्दशास्त्र के कई विद्वान इसी कारण मनहरण घनाक्षरी के पदों की यति १६, १५ पर साधते हैं. परन्तु, ऐसा करना भी पद को कम्पार्टमेण्टलाइज करने की तरह नहीं होता. यानि, यह भी देखा गया है कि कई बार १६-१५ की यति भी १७-१४

या १५-१६ की व्यवस्था में हुआ करती है. उदाहरण के लिए एक घनाक्षरी के दो और पद लिये जाते हैं, जो कि मनहरण घनाक्षरी के विशिष्ट रूप में है.

हम कृतघ्न पुत्र हैं या दानवी प्रभाव है, स्वार्थ औ प्रमाद में ज्यों लिप्त हैं वो क्या कहे

ममत्व की हो गोद या सुरम्यता कारुण्य की, नकारते रहे सदा मूढ़ता को क्या कहे

उपरोक्त पदों में १६-१५ की बनती है. यानि शब्दों की व्यवस्था ऐसी है कि वाचन में प्रवाह तनिक भंग नहीं होता.

शब्द व्यवस्था को साधने के लिए एक और तथ्य पर ध्यान देना उचित होगा - सम-विषम-विषम, या, विषम-सम-विषम जैसी व्यवस्था में नियत हुए शब्दों के प्रयोग पदों में लयभंगता की स्थिति उत्पन्न कर देता है. जैसे,

’**ममत्व की हो गोद या**’ को ’**गोद या ममत्व की हो**’ किया जाय तो चरण में समान वर्ण होने के बावज़ूद लयभंगता बन रही दीख रही है.

कारण कि, ’गोद’ त्रिकल (विषम) के बाद ’या’ जैसा द्विकल (सम) और ’ममत्व’ के कारण पुनः त्रिकल से प्रारम्भ हो रहे शब्द का आना है. अतः इसे नकारने के लिए ’ममत्व की हो गोद या’ जैसी व्यवस्था में शब्द को साधना होता है.

फिर, ’ममत्व की हो’ वाक्यांश होने से ’ममत्व’ के ’मत्व’, जोकि त्रिकल शब्द है, के बाद ’की हो’ के आने से चौकल आना हो जाता है. अर्थात, त्रिकल के बाद चौकल आ रहा है. ऐसी शाब्दिक व्यवस्था सर्वथा त्याज्य है. कहने का तात्पर्य यह है कि हम पदों में चाहे जो शाब्दिक व्यवस्था बनायें, पर शब्द-कल तथा यति के प्रभाव तथा पद-प्रवाह सहज रहें.

मनहरण घनाक्षरी के उदहारण प्रस्तुत हैं,

१.

शस्य-श्यामला सघन, रंग-रूप से मुखर देवलोक की नदी है आज रुग्ण दाह से
लोभ मोह स्वार्थ मद पोर-पोर घाव बन रोम-रोम रीसते हैं, हूकती है आह से

जो कपिल की आग के विरुद्ध सौम्य थी बही अस्त-पस्त-लस्त आज दानवी उछाह से
उत्स है जो सभ्यता व उच्च संस्कार की वो सुरनदी की धार आज रिक्त है प्रवाह से (इकड़ियाँ जेबी से)

२.
नीतियाँ बनीं यहाँ कि तंत्र जो चला रहा वो श्रेष्ठ भी दिखे भले परन्तु लोक-छात्र हो
तंत्र की कमान जन-जनार्दनों के हाथ हो, त्याग दे वो राजनीति जो लगे कुपात्र हो
भूमि-जन-संविधान, विन्दु हैं ये देशमान, संप्रभू विचार में न ह्रास लेश मात्र हो
किन्तु सत्य है यही सुधार हो सतत यहाँ, ताकि राष्ट्र का समर्थ शुभ्र सौम्य गात्र हो (स्वप्रयास से)

-- सौरभ

मनहरण घनाक्षरी छंद/ कवित्त -

=संजीव'सलिल'

मनहरण घनाक्षरी छंद एक वर्णिक छंद है. इसमें मात्राओं की नहीं, वर्णों अर्थात अक्षरों की गणना की जाती है. ८-८-८-७ अक्षरों पर यति या विराम रखने का विधान है. चरण (पंक्ति) के अंत में लघु-गुरु हो. इस छंद में भाषा के प्रवाह और गति पर विशेष ध्यान दें. स्व. ओमप्रकाश आदित्य ने इस छंद में प्रभावी हास्य रचनाएँ की हैं.

इस छंद का नामकरण 'घन' शब्द पर है जिसके हिंदी में ४ अर्थ १. मेघ/बादल, २. सघन/गहन, ३. बड़ा हथौड़ा, तथा ४. किसी संख्या का उसी में ३ बार गुणा (क्यूब) हैं. इस छंद में चारों अर्थ प्रासंगिक हैं. घनाक्षरी में शब्द प्रवाह इस तरह होता है मेघ गर्जन की तरह निरंतरता की प्रतीति हो. घनाक्षरी में शब्दों की बुनावट सघन होती है जैसे एक को ठेलकर दूसरा शब्द आने की जल्दी में हो. घनाक्षरी पाठक / श्रोता के मन पर प्रहार सा कर पूर्व के मनोभावों को हटाकर अपना प्रभाव स्थापित कर अपने अनुकूल बना लेनेवाला छंद है.

घनाक्षरी में ८ वर्णों की ३ बार आवृत्ति है. ८-८-८-७ की बंदिश कई बार शब्द संयोजन को कठिन बना देती है. किसी भाव विशेष को अभिव्यक्त करने में कठिनाई होने पर कवि १६-१५ की बंदिश अपनाते रहे हैं. इसमें आधुनिक और प्राचीन जैसा कुछ नहीं है. यह कवि के चयन पर निर्भर है. १६-१५ करने पर ८ अक्षरी चरणांश की ३ आवृत्तियाँ नहीं हो पातीं.

मेरे मत में इस विषय पर भ्रम या किसी एक को चुनने जैसी कोई स्थिति नहीं है. कवि शिल्पगत शुद्धता को प्राथमिकता देना चाहेगा तो शब्द-चयन की सीमा में भाव की अभिव्यक्ति करनी होगी जो समय और श्रम-साध्य है. कवि अपने भावों को प्रधानता देना चाहे और उसे ८-८-८-७ की शब्द सीमा में न कर सके तो वह १६-१५ की छूट लेता है.

सोचने का बिंदु यह है कि यदि १६-१५ में भी भाव अभिव्यक्ति में बाधा हो तो क्या हर पंक्ति में १६ + १५=३१ अक्षर होने और १६ के बाद यति (विराम) न होने पर भी उसे घनाक्षरी कहें? यदि हाँ तो फिर छन्द में बंदिश का अर्थ ही कुछ नहीं होगा.

फिर छन्दबद्ध और छन्दमुक्त रचना में क्या अंतर शेष रहेगा. यदि नहीं तो फिर ८-८-८ की त्रिपदी में छूट क्यों?

उदाहरण हर तरह के अनेकों हैं. उदाहरण देने से समस्या नहीं सुलझेगी. हमें नियम को वरीयता देनी चाहिए. पाठक और कवि दोनों रचनाओं को पढ़कर समझ सकते हैं कि बहुधा कवि भाव को प्रमुख मानते हुए और शिल्प को गौड़ मानते हुए या आलस्य या शब्दाभाव या नियम की जानकारी के अभाव में त्रुटिपूर्ण रचना प्रचलित कर देता है जिसे थोडा सा प्रयास करने पर सही शिल्प में ढाला जा सकता है.

अतः, मनहरण घनाक्षरी छंद का शुद्ध रूप तो ८-८-८-७ ही है. ८+८, ८+७ अर्थात १६-१५, या ३१-३१-३१-३१ को शिल्पगत त्रुटियुक्त घनाक्षरी ही माना जा सकता है. नियम तो नियम होते हैं. नियम-भंग महाकवि करे या नवोदित कवि दोष ही कहलायेगा. किन्हीं महाकवियों के या बहुत लोकप्रिय या बहुत अधिक संख्या में उदाहरण देकर गलत को सही नहीं कहा जा सकता. शेष रचना कर्म में नियम न मानने पर कोई दंड तो होता नहीं है सो हर रचनाकार अपना निर्णय लेने में स्वतंत्र है.

घनाक्षरी रचना विधान :

आठ-आठ-आठ-सात, पर यति रखकर,
मनहर घनाक्षरी, छन्द कवि रचिए.
लघु-गुरु रखकर, चरण के आखिर में,
'सलिल'-प्रवाह-गति, वेग भी परखिये..
अश्व-पदचाप सम, मेघ-जलधार सम,
गति अवरोध न हो, यह भी निरखिए.
करतल ध्वनि कर, प्रमुदित श्रोतागण-
'एक बार और' कहें, सुनिए-हरषिए..

वर्षा-वर्णन :

उमड़-घुमड़कर, गरज-बरसकर,
जल-थल समकर, मेघ प्रमुदित है.
मचल-मचलकर, हुलस-हुलसकर,

पुलक-पुलककर, मोर नरतित है..
कलकल,छलछल, उछल-उछलकर,
कूल-तट तोड़ निज, नाद प्रवहित है.
टर-टर, टर-टर, टेर पाठ हेर रहे,
दादुर 'सलिल' संग, स्वागतरत है..

भारत गान :
भारत के, भारती के, चारण हैं, भाट हम,
नित गीत गा-गाकर आरती उतारेंगे.
श्वास-आस, तन-मन, जान भी निसारकर,
माटी शीश धरकर, जन्म-जन्म वारेंगे..
सुंदर है स्वर्ग से भी, पावन है, भावन है,
शत्रुओं को घेर घाट, मौत के उतारेंगे-
कंकर भी शंकर है, दिक्-नभ अम्बर है,
सागर-'सलिल' पग, नित्य ही पखारेंगे..

हास्य घनाक्षरी
सत्ता जो मिली है तो, जनता को लूट खाओ,
मोह होता है बहुत, घूस मिले धन का |
नातों को भुनाओ सदा, वादों को भुलाओ सदा,
चाल चल लूट लेना, धन जन-जन का |
घूरना लगे है भला, लुगाई गरीब की को,
फागुन लगे है भला, साली-समधन का |
विजया भवानी भली, साकी रात-रानी भली,
चौर्य कर्म भी भला है, नयन-अंजन का |

घनाक्षरी के प्रकार :

=सुरेश चौधरी

मै यहाँ पर कुछ घनाक्षरी छंद लिखने के नियम साझा कर रहा हूँ इन्हें समझने के लिए मैंने कुछ रचनाकारों की कृतियाँ उदाहरण के रूप में ली हैं जिनसे नियम समझने में सहायता होगी. उदाहरण में नियम लागू करने के लिए कंही कहीं पर मै केवल दो चरण ही लिख रहा हूँ वैसे घनाक्षरी प्रायः चार चरण की होती है .

परिभाषा : *घनाक्षरी वर्णवृत्ति का मुक्तक छंद है इसमें ३० से लेकर ३३ वर्ण तक होतें हैं , वर्णिक छंदों में आधे अक्षर की गणना नहीं होती .*

१ : मनहरण घनाक्षरी_ (३१ वर्ण)

नियम : मनहरण घनाक्षरी में ८-८-८-७ वर्ण पर यति होती है चरण के अंत में गुरू होता है. सुविधा हेतु कई रचनाकार १६-१५ पर यति भी लेते हैं पर न लें तो उचित है.

उदाहरण :

देस केरि दसा देखि,जिउ जरा जात है, लोकतंत्री मुलुक मा यो विस्वासघात है,
मइकूराम भूखन मरे जरे कण्डा बारि के, कइसे बनै रोटी आटा कच्चै चबात हैं,
पातिउ बीनै नाई देत खेत तार बाँधे हैं, ईसुर धूरि धूरि मइहा सब जने बतात हैं,
ओट ओटि लेत हैं पाछे कोउ देखत नाई, गुत्थी के जीवन मा या अन्धेरी रात है,

२ : रूप घनाक्षरी__ (३२ वर्ण)

नियम : ८,८,८,८ वर्ण पर यति या १६,१६ वर्णों पर . एक चरण में ३२ वर्ण होते हैं. अंत में २-१ रहता है.

उदाहरण :

नीतियाँ बनीं यहाँ कि तंत्र जो चला रहा,

वो श्रेष्ठ भी दिखे भले, परन्तु लोक-छात्र हो
तंत्र की कमान जन-जनार्दनों के हाथ हो,
त्याग दे वो राजनीति जो लगे कुपात्र हो
भूमि-जन-संविधान, विन्दु हैं ये देशमान,
संप्रभू विचार में न ह्रास लेश मात्र हो
किन्तु सत्य है यही सुधार हो सतत यहाँ,
ताकि राष्ट्र का समर्थ शुभ्र सौम्य गात्र हो

३ : जलहरण घनाक्षरी_ (३२ वर्ण)

नियम : ८,८,८,८ पर या १६,१६ वर्णों पर प्रत्येक चरण में यति होती है चरणान्त में दो लघु वर्ण होते हैं.

उदहारण:

रीझि गये दृग मेरे या उस सिंगार पर, ललित लिलार पर चारु चिकुरारी पर
अमल कपोल पर कमल बदन पर , तरल तरैय्यन की रुचिर रवारी पर.
दास पग पग दूनो देह गति दग दग, जगमग है रही कपूर धूरि सारी पर .
जैसी छबि मेरे चित चढ़ि आई प्यारी आज, तैसियै तू चढ़ि आई बनिकै अटारी पर?

(भिखारी दास)

४ : जनहरण घनाक्षरी (३१ वर्ण)

नियम : तीस वर्ण लघु एक वर्ण गुरू अंत में

उदाहरण:

विना हनुमत क्रिपा ,मिलें नहीं राम जी, राम भक्त हनुमान चरणों में ध्यान धर।

रिद्धि–सिद्धि दाता,नव-निधि के प्रदाता प्रभु, मातु जानकी से मिले ऐसे वरदानी वर
।
राम ओ लखन से मिलाये सुग्रीव तुम , दौनों पक्ष के ही दिये सन्कट उबार कर।
सन्कट हरण हरें, सन्कट सकल जग, श्याम अरदास करें,कर दोऊ जोरि कर ॥

५ : डमरू घनाक्षरी (३२ वर्ण)

नियम : ३२ लघु वर्ण। ८,८,८,८ पर यति प्रत्येक चरण में . इसमें सभी वर्ण एक मात्रा के होते हैं या ये कहें कि कोई भी मात्राएँ नहीं होती.

उदाहरण :

सरस, सरल बन, महक कमल सम, अलस, कपट तज जनम सफल कर।
सत पथ पर चल, तन-मन बल रख, सजल, सहज रह, इकपल मत डर।
दमक-दमककर, चहक-चहककर, भगवत जपकर, उड़ नभ तक नर।
जगत कनक सम जग-मग कर अब, वर जन-जनपर, उपवन घर-घर॥
(कुमार गौरव अजीतेन्दु)

६: विजया घनाक्षरी (३२ वर्ण)

नियम: ८,८,८,८ पर प्रत्येक चरण में यति अंत में लघु गुरू या नगण (पद सानुप्रास)
उदाहरण :
बजाई कान्ह बाँसुरी,तीनो लोक बस करी, बाँसुरी है रस भरी,छतीसों रागिनी भरी.
कान ज्यों भनक परी,सुधि बुधि सब हरी, मै हो गयी हूँ बावरी,कैसे धीर कोई धरी..
(ओंकार नाथ दुखिया)

७ : कृपाण घनाक्षरी (३२ वर्ण)

नियम : प्रत्येक चरण में ८,८,८,८ पर यति अंत में १ गुरू १ लघु (पद सनुप्रास) प्रत्येक यति पर अन्त्यानुप्रास की भांति अनुप्रास इसे पद सनुप्रास कहते हैं,

उदाहरण :

डायर की जान चाल, रानी झाँसी थी बेहाल, नैन हुये लाल लाल, रक्त में आया उबाल.

सेन को लिया सम्हाल, युद्ध की जला मशाल, ले के कर करवाल,अश्व चढ़ी ले के ढाल

(ओंकार नाथ दुखिया)

८ : हरिहरण घनाक्षरी (३२ वर्ण)

नियम : प्रत्येक चरण में ८,८,८,८ वर्णों पर यति चरणान्त में दो लघु (पद सनुप्रास)

उदाहरण:

कर करतार कर, कर यक तार कर, द्वार पे पसार कर, स्वर ए उचार कर.

छोंड घर बार कर, आया हेर हार कर, अब न अबार कर, दृष्टि एक बार कर.

(ओंकार नाथ दुखिया)

९ : सूर घनाक्षरी_ (३० वर्ण)

नियम : इस घनाक्षरी में ८,८,८,६ पर यति होती है अंत में लघु या गुरू कुछ भी रह सकता है .

उदाहरण :

परसि परमानंद , सीचि के कामना कंद, करहिं प्रगट प्रीति, प्रेम के प्रवाल.

बचन रचन हास, समन सुख निवास, करहि फलहिं फल,अभय रसाल...
(सूरदास)

मुकरियाँ या कह-मुकरियाँ : इतिहास और विधान

---सौरभ पाण्डेय

कथ्य व जानकारी

जैसा कि नाम से प्रतीत होता है, **कह-मुकरियाँ** या **मुकरियाँ** का सीधा सा अर्थ होता है कही हुई बातों से मुकर जाना. और इस बंद में होता भी यही है. ये चार पंक्तियों का बंद होती हैं, जिसमें पहली तीन पंक्तियाँ किसी संदर्भ या वर्णन को प्रस्तुत करती हैं, परन्तु स्पष्ट कुछ भी नहीं होता. चौथी पंक्ति दो वाक्य-भागों में विभक्त हुआ करती हैं. पहला वाक्य-भाग उस वर्णन या संदर्भ या इंगित को बूझ जाने के क्रम में अपेक्षित प्रश्न-सा होता है, जबकि दूसरा वाक्य-भाग वर्णनकर्ता का प्रत्युत्तर होता है जो पहले वाक्य-भाग में बूझ गयी संज्ञा से एकदम से अलग हुआ करता है. यानि किसी और संज्ञा को ही उत्तर के रूप में बतलाता है. इस लिहाज से मुकरियाँ एक तरह से अन्योक्ति हैं.

आदरणीय योगराज प्रभाकर के शब्दों में -

एक बहुत ही पुरातन और लुप्तप्राय: काव्य विधा है "कह-मुकरी" ! हज़रत अमीर खुसरो द्वारा विकसित इस विधा पर भारतेंदु हरिश्चंद्र ने भी स्तरीय काव्य-सृजन किया है. मगर बरसों से इस विधा पर कोई सार्थक काम नहीं हुआ है. "कह-मुकरी" अर्थात 'कह कर मुकर जाना' !

वास्तव में इस विधा में दो सखियों के बीच का संवाद निहित होता है, जहाँ एक सखी अपने प्रियतम को याद करते हुए कुछ कहती है, जिसपर दूसरी सखी बूझती हुई पूछती है कि क्या वह अपने साजन की बात कर रही है तो पहली सखी बड़ी चालाकी से इनकार कर (अपने इशारों से मुकर कर) किसी अन्य सामान्य सी चीज़ की तरफ इशारा कर देती है.

ध्यातव्य है, कि साजन के वर्णित गुणों का बुझवायी हुई सामान्य या अन्य चीज़ के गुण में लगभग साम्यता होती है. तभी तो काव्य-कौतुक उत्पन्न होता है. और, दूसरी सखी को पहली सखी के उत्तर से संतुष्ट हो जाना पड़ता है यानि पाठक इस काव्य-वार्तालाप का मज़ा लेते हैं.

आदरणीय योगराज प्रभाकर की कुछ कह-मुकरियाँ उदाहरण स्वरूप प्रस्तुत हैं

इस बिन तो वन उपवन सूना,
सच बोलूँ तो सावन सूना,
सूनी सांझ है सूनी भोर,
ए सखि साजन ? ना सखि मोर !

देख बदरिया कारी कारी,
वा की चाल हुई मतवारी,
हो न जाए ये बरजोर,
ए सखि साजन ? ना सखि मोर !

ऐसा ना हो, वो ना आये,
घड़ी मिलन कीबीती जाये,
सोचूँ, देखूँ शून्य की ओर,
ए सखि साजन ? ना सखि मोर !

मादक स्वर में ज्योंहिं पुकारे,
सजनी भूले कारज सारे ,
उठे हिया में अजब हिलोर,
ऐ सखि साजन ? न सखि मोर !

सारा गुलशन खिल जाएगा,
कुछ भी हो पर वो आएगा,
जब आए बादल घनघोर,
ऐ सखि साजन ? न सखि मोर !

कह-मुकरियों का इतिहास

मुकरियों या कह-मुकरियों का प्रारम्भ, पहेलियों की तरह ही, अमीर खसरो से माना जाता है. उसी परंपरा को आगे बढाते हुए **भारतेन्दु हरिश्चन्द्रजी ने अपने**

समय में इनपर बहुत काम किया. उन्होंने इनके माध्यम से हास्य, तीखे व्यंग्य, दर्शन आदि के साथ-साथ वर्त्तमान सामाजिक-राजनैतिक घटनाओं पर भी लिख कर बेहतर प्रयोग किये थे.
भारतेन्दु जी की कुछ मुकरियाँ जो सुलभ हो पायीं हैं उन्हें प्रस्तुत कर रहा हूँ.

भीतर भीतर सब रस चूसै।
हँसि हँसि कै तन मन धन मूसै।
जाहिर बातन में अति तेज।
क्यों सखि साजन ? नहिं अँगरेज

सब गुरुजन को बुरो बतावै ।
अपनी खिचड़ी अलग पकावै ।
भीतर तत्व नहिं, झूठी तेजी ।
क्यों सखि साजन ? नहिं अँगरेजी

तीन बुलाए तेरह आवैं।
निज निज बिपता रोइ सुनावैं।
आँखौ फूटी भरा न पेट।
क्यों सखि साजन ? नहिं ग्रैजुएट !

धन लेकर कछु काम न आवै।
ऊँची नीची राह दिखावै।
समय पड़े पर सीधै गुंगी।
क्यों सखि साजन ? नहिं सखि चुंगी !

मुँह जब लागै तब नहिं छूटै।
जाति मान धरम धन लूटै।
पागल करि मोहिं करे खराब।
क्यों सखि साजन ? नहिं शराब !

मतलब ही की बोलै बात।
राखै सदा काम की घात।
डोले पहिने सुंदर समला।
क्यों सखि साजन ? नहिं सखि अमला !

सीटी देकर पास बुलावै।
रुपया ले तो निकट बिठावै।
ले भागै मोहिं खेलहिं खेल।
क्यों सखि साजन ? नहिं सखि रेल !

सुंदर बानी कहि समुझावैं।
बिधवागन सों नेह बढ़ावैं।
दयानिधान परम गुन-आगर।
क्यों सखि साजन ? नहिं विद्यासागर !

(ईश्वरचंद्र विद्यासागर - बंगाल के उद्भट्ट विद्वान, शिक्षाविद और समाज-सुधारक)

रूप दिखावत सरबस लूटै।
फंदे मैं जो पड़ै न छूटै।
कपट कटारी जिय मैं हुलिस।
क्यों सखि साजन ? नहिं सखि पुलिस !

एक गरभ मैं सौ सौ पूत।
जनमावै ऐसा मजबूत।
करै खटाखट काम सयाना।
का सखि साजन ? नहिं छापाखाना !

नई नई नित तान सुनावै ।
अपने जाल मैं जगत फँसावै ।
नित नित हमैं करै बल-सून ।
क्यों सखि साजन ? नहिं कानून !

सतएँ अठएँ मों घर आवै।
तरह तरह की बात सुनावै।
घर बैठे ही जोड़ै तार।
क्यों सखि सजन ? नहिं अखबार

लंगर छोड़ि खड़ा हो झूमै।
उलटी गति प्रति कूलहि चूमै।
देस देस डोलै सजि साज।
क्यों सखि साजन ? नहीं जहाज !

शिल्प व विधान

यह अवश्य है कि कोई रचना और उसके बंद पहले आते हैं उसके बाद बन गयी परिपाटियों को शिल्पगत अनुशासन मिलता है. अमीर खुसरो या भारतेन्दु आदि ने कथ्य और भाव-संप्रेषण पर अधिक ज़ोर दिया. कारण कि ऐसी प्रस्तुतियों का कोई विधान सम्मत इतिहास था ही नहीं. किन्तु, इस विधा में उपलब्ध प्रस्तुतियों के सजग वाचन से इसके शिल्प का अनुमान तो होता ही है. उस आधार पर कुछ बातें अवश्य साझा करना चाहूँगा.

एक बात और, ऐसे कई रचनाकार हैं जो हिन्दी के अलावे अन्य भाषाओं में भी कह-मुकरियों पर काम कर रहे हैं. यह स्वागतयोग्य है. लेकिन अधिकांश रचनाकारों के साथ दिक्कत यही है कि वे शिल्प के प्रति एकदम से निर्लिप्त हैं. इसकारण उनकी प्रस्तुतियाँ क्षणिक कौतुक का कारण भले बन जायें, विधागत रचना का मान पाने से वंचित रह जाती हैं.

खैर, उपरोक्त सभी मुकरियों के बंद को ध्यान से देखा जाय तो दो बातें स्पष्ट होती हैं --

प्रथम तीन पद या वर्णन-पंक्तियों के माध्यम से साजन या प्रियतम या पति के विभिन्न रूप परिलक्षित होते हैं, चौथी पंक्ति का प्रथम वाक्य-भाग ऐसा ही बूझ लेने को कहता

हुआ प्रश्न भी करता है. परन्तु उसी पंक्ति का दूसरा वाक्य-भाग न सिर्फ़ उस बूझने का खण्डन करता है, अपितु कुछ और ही उत्तर देता है जोकि कवि का वास्तविक इशारा है.

दूसरी बात शिल्प के स्तर पर दिखती है.

शब्दों में मात्रिक व्यवस्था के साथ-साथ प्रथम दो पंक्तियाँ सोलह मात्राओं की होती हैं. यानि, प्रथम दो पंक्तियाँ गेयता को निभाती हुई शाब्दिकतः सोलह मात्राओं का निर्वहन करती हैं. तीसरी पंक्ति पन्द्रह या सोलह या सत्तरह मात्राओं की हो सकती है. कारण कि, तीसरी पंक्ति वस्तुतः बुझवायी हुई वस्तु या संज्ञा पर निर्भर करती है. फिर, चौथी पंक्ति दो भागों में विभक्त हो जाती है. तथा चौथी पंक्ति के दूसरे वाक्य-भाग में आये निर्णायक उत्तर से भ्रम या संदेह का निवारण होता है.

कह-मुकरियों की प्रकृति

इस हिसाब से *कह-मुकरियाँ या मुकरियाँ पहेलियों के समकक्ष नहीं रखी जा सकतीं. कारण कि, पहेलियों का उत्तर पद्य-बंद का अन्योन्यश्रयाय भाग नहीं होता, बल्कि पुछल्ले की तरह संलग्न हुआ करता है.* जबकि यहाँ उत्तर पद्य-बंद का ही हिस्सा है.

इसी तरह *कबीर की उलटबासियों को भी कह-मुकरियों के दर्ज़े में नहीं रखा जा सकता जिनकी पूरी प्रकृति ही रहस्यमय है*. उलटबासियों को ध्यान से देखा जाय तो ऐसा दीखता भी है. मुझे तो ऐसा प्रतीत होता है कि उलटबासियाँ दर्शन-शास्त्र के मीमांसाओं (विशेष कर पूर्व-मीमांसा) से प्रभावित हैं और उनका इंगित भी कई-कई बार स्पष्ट नहीं होता.

विश्वास है, मुकरियों या कह-मुकरियों के रचयिताओं को वर्णित उपरोक्त विन्दुओं से रचना-कर्म के क्रम में आवश्यक लाभ मिल सकेगा.

हिंदी छंद विधान के कुछ अन्य प्रमुख छंद

-सुरेश चौधरी (विभिन्न श्रोत से मिली जानकारी अनुसारअधिकांश भाग ओबीओ ऑनलाइन से लिया गया है सौरभ पाण्डेय जी को आभार सहित)

रोला छंद :

रोला छंद एक मात्रिक छंद ही है. **रोला छंद के चार पद और आठ चरण होते हैं.**लेकिन इसका मात्रिक विधान दोहे के विधान का करीब-करीब विपरीत होता है. यानि मात्राओं के अनुसार चरणों की कुल मात्रा 11-13 की होती है.

यानि, दोहा का सम चरण रोला छंद का विषम चरण की तरह व्यवहार करता है. और उसके विन्यास और अन्य नियम तदनुरूप ही रहते हैं.

किन्तु, *रोला का सम चरण दोहा के विषम चरण की तरह व्यवहार नहीं करता.*

प्राचीन छंद-विद्वानों के अनुसार रोले के भी कई और प्रारूप हैं तथा तदनुरूप उनके चरणों की मात्रिकता. लेकिन हम यहाँ इस छंद की मूलभूत और सर्वमान्य अवधारणा को ही प्रमुखता से स्वीकार है .

यहाँ प्रस्तुत उपरोक्त नियमों को फिलहाल रोला के आधारभूत नियमों की तरह लिया जाय.

रोला छंद के चरणों के विन्यास के मूलभूत नियम -

1. रोला के विषम चरण का संयोजन या विन्यास दोहा के सम चरण की तरह ही होता है,

यानि 4, 4, 3 या 3, 3, 2, 3 तथा चरणांत गुरु लघु या ऽ। या 21

2. रोला के सम चरण का संयोजन 3, 2, 4, 4 या 3, 2, 3, 3, 2 होता है. रोला के सम चरण का अंत दो गुरुओं (ऽऽ या 22) से या दो लघुओं और एक गुरु (।।ऽ या 112) से या एक गुरु और दो लघुओं (ऽ।। या 211) से होता है. *साथही, यह भी*

ध्यातव्य है कि रोला का सम चरण ऐसे शब्द या शब्द-समूह से प्रारम्भ हो जो प्रारम्भिक त्रिकल का निर्माण करें.

रोला छंद के उदाहरण -

नीलाम्बर परिधान, हरित पट पर सुन्दर है.
सूर्य-चन्द्र युग-मुकुट, मेखला रत्नाकर है.
नदियाँ प्रेम-प्रवाह, फूल तारा-मंडल हैं
बंदीजन खगवृन्द, शेष-फन सिंहासन है.......(मैथिली शरण गुप्त)

ये मेरा खरगोश बड़ा ही प्यारा-प्यारा
गुलथुल गोल-मटोल, सभी को लगता न्यारा
खेले मेरे साथ नित्यदिन छुपम-छुपाई
*चोर-सिपाही, दौड़ और पकड़म-पकड़ाई........(*कुमार गौरव अजीतेन्दु)

कुण्डलिया छंद

कुण्डलिया एक विशिष्ट छंद है. यह वस्तुतः दो छंदों का युग्म रूप है. जिसमें पहला छंद दोहा, तो दूसरा छंद रोला होता है. यानि एक दोहा के दो पदों के बाद एक रोला के चार पद. यानि, कुण्डलिया छः पक्तियों या पदों का छंद है.

दोहा और रोला के विशिष्ट नियम साझा हो चुके हैं. इसके आगे, इनके संयुक्त को प्रारूप को कुण्डलिया छंद बनने के लिए थोड़ी और विशिष्टता अपनानी पड़ती है.
दोहा के पहले चरण (विषम चरण) का पहला शब्द या पहला शब्दांश या पहला शब्द-समूह रोला के आखिरी चरण (सम चरण) का शब्द या शब्दांश या शब्द समूह क्रमशः समान होता है.
दोहा का दूसरा सम चरण रोला का पहला विषम चरण होता है. अर्थात, दोहा का दूसरा सम चरण पुनः रोला वाले भाग के पहले चरण की तरह उद्धृत होता है यानि,

दोहा के दूसरे सम चरण का वाक्य रोला के पहले विषम चरण का वाक्य हुबहू होते हैं.

बाकी नियमों के लिए दोहा अपने मूल नियमों से सधा होता है तो रोला भी अपने मूल नियमों से बँधा होता है. इसे अधिक बेहतर, यों समझ सकते हैं.

कखगघ xxxx xxx xx, xxxx xxx xxx |
xxx xxx xx xxx xx,चछजझ टठडढ तथद |___.... *दोहा*
चछजझ टठडढ तथद, xxx xx xxxx xxxx |
xxxx xxxx xxx, xxx xx xxxx xxxx |
xxxx xxxx xxx, xxx xx xxxx xxxx |
xxxx xxxx xxx, xxx xx xxxx कखगघ |___.....रोला

यहाँ दोहे का **कखगघ** और रोले का **कखगघ** समान शब्द या शब्दांश या शब्द-समूह होते हैं. यानि, ध्यातव्य है कि यदि दोहे का **कख** ही स्वीकारा गया है तो रोला का आखिरी शब्द **गघकख** हो जायेगा. या दोहा का पहला शब्द-समूह **कखगघ xx**लिया गया है तो रोला का आखिरी शब्द-समूह **कखगघ xx** होगा. चूँकि, इस छंद में पहले और आखिरी शब्द या शब्दांश या शब्द-समूह की क्रमशः समानता हुआ करती है, अतः यह प्रक्रम एक शब्द-वृत बनाता हुआ प्रतीत होता है, या, यह किसी साँप को कुण्डली मार कर बैठे होने का आभास देता है. यानि, जिस शब्द से प्रारम्भ उसी शब्द से अंत. इसी कारण, इस छंद का नाम 'कुण्डलिया' पड़ा है.

कुण्डलिया छंद के अन्य प्रारूप भी होते हैं, जहाँ रोला वाले भाग में कवियों द्वारा यति-लोप की छूट ली जाती है. या, रोला के चरण विन्यास में आंतरिक परिवर्तन कर कवियों द्वारा कौतुक उत्पन्न करने की चेष्टा की जाती है. लेकिन हम कुण्डलिया के मूलभूत और शाश्वत नियमों का ही अनुपालन करेंगे. ताकि हम कुण्डलिया के शास्त्रीय रूप के अभ्यासी हों.

"छः चरणों से युक्त कुंडलिया के प्रत्येक चरण में चौबीस मात्राएँ होती हैं यह छंद एक दोहा (प्रत्येक में १३+११ मात्रा) व एक रोला (प्रत्येक में ११+१३ मात्रा) के संयोग से निर्मित होता है |

कुंडलिया छंद में दूसरे चरण का उत्तरार्ध तीसरे चरण का पूर्वार्ध होता है|जिस शब्द या शब्द-समूह से यह प्रारंभ होता है उसी शब्द या शब्द-समूह से इसका समापन भी किया जाता है चूँकि रोले का समापन दीर्घ से होता है अतः कुंडलिया के प्रारंभिक शब्द के अंत में में दीर्घ इस प्रकार आना चाहिए कि उसकी गेयता अप्रभावित रहे| (उदाहरण के लिए जैसे कुंडलिया के प्रारंभिक शब्द चयन में 'सरहद' शब्द के बजाय सीमा शब्द अधिक उपयुक्त है) वैसे तो इसके रोले के अंत में गुरु ही आना चाहिए तथापि कर्णा २२ या गुरु लघु गुरु २१२ या लघु लघु गुरु ११२ अथवा लघु लघु लघु लघु ११११ आदि भी स्वीकार कर लिए गए हैं | रोला में 11 वी मात्रा लघु तथा उससे ठीक पहले गुरु होना आवश्यक है | रोले में यति 11वी मात्रा तथा पादान्त पर होती है| कुंडलिया के रोले के तीसरे चरण में कवियों द्वारा अपना नाम डालने की परंपरा रही है|"

कुण्डलिया में प्रयुक्त दोहा और रोला के पदों के शब्द-संयोजन का विन्यास हम पुनः देखते हैं-

1. दोहे का आदि चरण यानि विषम चरण विषम शब्दों से यानि त्रिकल से प्रारम्भ हो तो संयोजन 3, 3, 2, 3, 2 होगा और चरणांत रगण (ऽ।ऽ) या नगण (।।।) होगा.

2. दोहे का आदि चरण यानि विषम चरण सम शब्दों से यानि द्विकल या चौकल से प्रारम्भ हो तो संयोजन 4, 4, 3, 2 होगा और चरणांत रगण (ऽ।ऽ) या नगण (।।।) होगा.

3. दोहे के सम चरण का संयोजन 4, 4, 3 या 3, 3, 2, 3 होता है.

4. रोला के विषम चरण का संयोजन या विन्यास दोहा के सम चरण की तरह ही होता है, यानि 4, 4, 3 या 3, 3, 2, 3

5. रोला के सम चरण का संयोजन 3, 2, 4, 4 या 3, 2, 3, 3, 2 होता है.

उदाहरणार्थ कुछ कुण्डलिया छंद –

बिना विचारे जो करे सो पाछे पछिताय
काम बिगारे आपनो जग में होत हँसाय
जग में होत हँसाय चित्त में चैन न पावै
खान पान, सम्मान, राग-रंग मनहिं न भावै।
कह गिरधर कविराय दु:ख कछु टरहिं न टारे
खटकत है जिय माहिं कियो जो बिना विचारे.... . .. .(गिरधर)

दौड़ पड़े हैं काटने , दिखलायें औकात |
भाव भंगिमा देखिये, लगें असुर साक्षात ||
लगें असुर साक्षात, कहें क्या इन्हें विधाता,
खाएं जन को नोंच, डकैतों से रख नाता,
कहें इंदु कविराय , श्वान बन कहीं खड़े हैं,
कहीं यही खुदगर्ज , काटने दौड़ पड़े हैं ||-- सुरेश चौधरी

केवल नदिया ही नहीं, और न जल की धार।
गंगा माँ है, देवि है, है जीवन- आधार।
है जीवन- आधार, सभी को सुख से भरती।
जो भी आता पास, विविधि विधि मंगल करती।
'ठकुरेला' कविराय, तारता है गंगा-जल।
गंगा अमृत - राशि, नहीं यह नदिया केवल. .. .. (त्रिलोक सिंह ठकुरेला)

चौपई छंद

चौपई छंद 16 मात्राओं के चरण का छंद होता है. *चौपई के चरणान्त से एक लघु निकाल दिया जाय तो चरण की कुल मात्रा 15 रह जाती है और चौपाई छंद का नाम बदल कर चौपई हो जाता है.* इस तरह **चौपई का चरणांत गुरु-लघु** हो जाता है. यही इसकी मूल पहचान है. अर्थात्, **चौपई 15 मात्राओं के चार चरणों का सम मात्रिक छंद है.** इस छंद का एक और नाम **जयकरी** या **जयकारी** छंद भी है. हमें मालूम है कि **चौपाई की कुल 16 मात्राओं के एक चरण का विन्यास निम्नलिखित होता है.**

1. चार चौकल
2. दो चौकल + एक अठकल
3. दो अठकल

उपरोक्त विन्यास में से अंत का एक लघु हटा दिया जाय तो उसका विन्यास यों बनता है. यह चौपई छंद का विन्यास होगा -

1. तीन चौकल + गुरु-लघु
2. एक अठकल + एक चौकल + गुरु-लघु

छंद मर्मज्ञ नारायण दास ने चौपई छंद की परिभाषा को यों निर्धारित करते हैं -

चौपाई में एक घटाय । अंत पौन चौपई कहाय ॥

<--------चरण-------->।<----------चरण----------->

<------------------------पद--------------------------->

उपरोक्त पद के सभी शब्दों का विन्यास किया जाय तो दोनों चरणों अलग-अलग 'समकलों' की तथा चरणांत के गुरु-लघु की स्थिति स्पष्ट जायेगी.

चौपा (चौकल) + ई में (चौकल) + एक घ (चौकल) + टाय (गुरु-लघु) = 15 मात्राएँ

अंत पौन चौ (अठकल) + पई क (चौकल) + गुरु-लघु = 15 मात्राएँ

चौपई छंद को छंद-मर्मज्ञ जगन्नाथ प्रसाद 'भानुकवि' कुछ यों परिभाषित करते हैं -

तिथि कल पौन चौपई माहिं । अंत गुरु लघु जहाँ सुहाहिं ॥
यहै कहत सब वेद पुरान । शरणागत वत्सल भगवान ॥

चौपई छंद के व्यावहारिक उदाहरण -

पड़ी अचानक नदी अपार । घोड़ा कैसे उतरे पार ॥
राणा ने सोचा इस पार । तबतक चेतक था उसपार ॥ (श्याम नारायण पाण्डेय)

चौपई छंद के सम्बन्ध में एक तथ्य यह भी सर्वमान्य है कि **चौपई छंद बाल-साहित्य के लिए बहुत उपयोगी छंद है.** क्योंकि ऐसे में गेयता अत्यंत सधी होती है.

हाथीजी की लम्बी नाक । सिंहराज की बैठी धाक ॥
भालू ने पिटवाया ढाक । ताक धिना-धिन धिन-धिन ताक ॥
बन्दर खाता काला जाम । खट्टा लगता कच्चा आम ॥
लिये सुमिरनी आठो जाम । तोता जपता सीता - राम ॥ (नारायण दास)

वीर छंद या आल्हा छंद

वीर छंद दो पदों के चार चरणों में रचा जाता है जिसमें यति १६-१५ मात्रा पर नियत होती है. छंद में विषम चरण का अंत गुरु (ऽ) या लघुलघु (।।) या लघु लघु गुरु (।।ऽ) या गुरु लघु लघु (ऽ ।।) से तथा सम चरण का अंत गुरु लघु (ऽ।) से होना अनिवार्य है. इसे आल्हा छंद या मात्रिक सवैया भी कहते हैं. कथ्य अकसर ओज भरे होते हैं.
इस छंद को **आल्हा छंद** या **मात्रिक सवैया** भी कहा जाता है.

धातव्य है कि इस छंद का 'यथा नाम तथा गुण' की तरह इसके कथ्य अकसर ओज भरे होते हैं और सुनने वाले के मन में उत्साह और उत्तेजना पैदा करते हैं. इस हिसाब से अतिश्योक्ति पूर्ण अभिव्यंजनाएँ इस छंद का मौलिक गुण हो जाता है. जनश्रुति भी इस छंद की विधा को यों रेखांकित करती है.

-

आल्हा मात्रिक छन्द, सवैया, सोलह-पन्द्रह यति अनिवार्य।
गुरु-लघु चरण अन्त में रखिये, सिर्फ वीरता हो स्वीकार्य।
अलंकार अतिशयताकारक, करे राइ को तुरत पहाड़।
ज्यों मिमयाती बकरी सोचे, गुँजा रही वन लगा दहाड़।

उदाहरण:

बारह बरिस ल कुक्कुर जीऐं, औ तेरह लौ जिये सियार,
बरिस अठारह छत्री जीयें, आगे जीवन को धिक्कार.

महारानी लक्ष्मी बाई का चित्रण करती पंक्तियाँ -

कर में गह करवाल घूमती, रानी बनी शक्ति साकार.
सिंहवाहिनी, शत्रुघातिनी सी करती थी अरि संहार.
अश्ववाहिनी बाँध पीठ पै, पुत्र दौड़ती चारों ओर.
अंग्रेजों के छक्के छूटे, दुश्मन का कुछ, चला न जोर..

बुंदेलखंड की अतिप्रसिद्ध काव्य-कृति जगनिक रचित 'आल्ह-खण्ड' से कुछ पद प्रस्तुत हैं. अतिश्योक्ति का सुन्दर उदाहरण इन पंक्तियों में देखा जा सकता है, यथा, *राग-रागिनी ऊदल गावैं, पक्के महल दरारा खाँय.*

पहिल बचनियाँ है माता की, बेटा बाघ मारि घर लाउ.
आजु बाघ कल बैरी मारिउ, मोर छतिया की दाह बताउ.
बिन अहेर के हम ना जावैं, चाहे कोटिन करो उपाय.
जिसका बेटा कायर निकले, माता बैठि-बैठि पछताय.

टँगी खुपड़िया बाप-चचा की, मांडूगढ़ बरगद की डार.
आधी रतिया की बेला में, खोपडी कहे पुकार-पुकार.
कहवां आल्हा कहवां मलखै, कहवां ऊदल लडैते लाल.
बचि कै आना मांडूगढ़ में, राज बघेल जिये कै काल.

एक तो सुघर लड़कैया के, दूसरे देवी कै वरदान.
नैन सनीचर है ऊदल कै, औ बेह्फैया बसै लिलार.
महुवर बाजि रही आँगन मां, युवती देखि-देखि ठगि जांय.
राग-रागिनी ऊदल गावैं, पक्के महल दरारा खाँय.

सावन चिरैया ना घर छोडे, ना बनिजार बनीजी जाय.
टप-टप बूँद पडी खपड़न पर, दया न काहूँ ठांव देखाय.
आल्हा चलिगे ऊदल चलिगे, जइसे राम-लखन चलि जायँ.
राजा के डर कोइ न बोले, नैना डभकि-डभकि रहि जायँ.

हरिगीतिका:

हरिगीतिका चार चरण वाला एक सम मात्रिक छंद है इसके प्रत्येक चरण में १६ व १२ के विराम से २८ मात्रायें होती हैं तथा अंत में लघु गुरू आना अनिवार्य है | अधिकतर पर यह छंद ईश-वंदना में प्रयोग किया जाता है |

मम मातृभूमिः भारतं धनधान्यपूर्णं स्यात् सदा।

नग्नो न क्षुधितो कोऽपि स्यादिह वर्धतां सुख-सन्ततिः ।
स्युर्ज्ञानिनो गुणशालिनो ह्युपकार-निरता मानवः,
अपकारकर्ता कोऽपि न स्याद् दुष्टवृत्तिर्दांवः ॥

हरिगीतिका के चारों पदों में से कम से कम दो-दो पदों में तुक मिलना चाहिए | यदि चारों में हो तो और भी अच्छा है !

'हरिगीतिका' छंद का सोदाहरण आंतरिक विन्यास:

11212 11212 11, 212 11212
हरिगी**ति**का **हरि**गी**ति**का **हरि**, गी**ति**का **हरि**गी**ति**का
11212 11212 11, 212 11212
हरिगी**ति**का **हरि**गी**ति**का **हरि**, गी**ति**का **हरि**गी**ति**का
11212 11212 11, 212 11212
हरिगी**ति**का **हरि**गी**ति**का **हरि**, गी**ति**का **हरि**गी**ति**का
11212 11212 11, 212 11212
हरिगी**ति**का **हरि**गी**ति**का **हरि**, गी**ति**का **हरि**गी**ति**का

लघु वर्ण से प्रारम्भ होने वाली उपरोक्त हरिगीतिका को यदि ध्यान से देखें तो इसकी प्रत्येक पंक्ति में **पहला, दूसरा, चौथा**, **छठा, सातवाँ, नौवां, ग्यारहवां, बारहवां व तेरहवां, चौदहवां, सोलहवां, सत्रहवाँ व उन्नीसवाँ** वर्ण लघु है |

आसानी के लिये इसे निम्न प्रकार से भी गाया जा सकता है

ललला**ल**ला **लल**ला**ल**ला **लल,** ला**ल**ला **लल**ला**ल**ला

गुरुवर्ण से प्रारंभ होने वाली हरिगीतिका का सोदाहरण आंतरिक विन्यास

३, ७, ११, व १५वां लघुवर्ण (प्रत्येक पंक्ति में)
श्रीगी**ति**का श्रीगी**ति**का श्री, गी**ति**का श्रीगी**ति**का
श्रीगी**ति**का श्रीगी**ति**का श्री, गी**ति**का श्रीगी**ति**का
श्रीगी**ति**का श्रीगी**ति**का श्री, गी**ति**का श्रीगी**ति**का
श्रीगी**ति**का श्रीगी**ति**का श्री, गी**ति**का श्रीगी**ति**का

इससे यह स्वतः ही स्पष्ट हो रहा है कि गुरुवर्ण से प्रारम्भ होने वाली उपरोक्त हरिगीतिका की प्रत्येक पंक्ति में **तीसरा, सातवाँ** , **ग्यारहवां** व **पन्द्रहवां** वर्ण लघु

है परन्तु यदि उपरोक्त दोनों प्रकार के छंदों को मिश्रित करके हरिगीतिका रची जाय तो यह क्रम परिवर्तित हो जायेगा |
और अधिक आसानी के लिये इसे निम्न प्रकार से भी गाया जा सकता है
लाला**ल**ला लाला**ल**ला ला, ला**ल**ला लाला**ल**ला

'हरिगीतिका' छंद के अन्य उदाहरण:

(1)

2 21 21 121 1111, 111 11 11 212
श्री राम चंद्र कृपालु भजमन, हरण भव भय दारुणम् |
1121 211 21 1111, 21 11 2212
नवकंज लोचन कंज मुख कर, कंज पद कन्जारुणम ||
221 1111 111 11, 11, 21 211 212
कंदर्प अगणित अमित छवि नव, नील नीरज सुन्दरम |
1122 211 111 11 11, 21 111 1212
पट्पीत मानहु तडित रूचि शुचि, नौमि जनक सुतावरम ||

(2)

११ २१ ११२ ११ १२११, २ १२ ११ २१ २
प्रभु गोद जिसकी वह यशोमति, दे रहे हरि मान हैं|
२२१ २२ २१११ ११, ११ १११ २२१ २
गोपाल बैठे आधुनिक रथ, पर सहित सम्मान हैं |
११२ १११ ११ २१ २११ ११ १२२ २१ २
मुरली अधर धर श्याम सुन्दर, जब लगाते तान हैं |
११११ १११ ११ २१२ २ ११ १२ ११२१ २
सुनकर मधुर धुन भावना में, बह रहे रसखान हैं ||--आलोक सीतापुरी

(3)

११ २१२ २ २१ २११, २१ २११ २ १२
यह श्रावणी का नेह बंधन, पर्व सबको भा रहा,
११२१ ११२ ११ १२ ११, २१ २११ २ १२
रसधार धरती पर बहा मधु , मास सावन जा रहा|
१११ १२ ११ २१ २२, २१२ ११ २ १२
प्रमुदित सभी जन वृक्ष झूमें, बांसुरी रस छा रहा,
२२ १२ २ २१ २२, ११ १२२ २ १२
रक्षा सभी को आज बाँधो, मन हमारा गा रहा||

विशेष :
उर्दू बहर से हरिगीतिका का मेल
जिस पंक्ति के आदि में दो लघु हों वहाँ ....
मुतफ़ायलुन् मुतफ़ायलुन् मुतफ़ायलुन् मुतफ़ायलुन्
जिस पंक्ति के आदि में गुरु हो वहाँ ....
मुस्तफ्यलुन् मुस्तफ्यलुन् मुस्तफ्यलुन् मुस्तफ्यलुन्

ताटंक छंद

ताटंक छन्द अर्द्धमात्रिक छन्द है. इस छन्द में चार पद होते हैं, जिनमें प्रति पद 30 मात्राएँ होती हैं.
प्रत्येक पद में दो चरण होते हैं जिनकी यति 16-14 निर्धारित होती है. अर्थात विषम चरण 16 मात्राओं का और सम चरण 14 मात्राओं का होता है. दो-दो पदों की तुकान्तता का नियम है. प्रथम चरण यानि विषम चरण के अन्त को लेकर कोई विशेष आग्रह नहीं है. किन्तु, पदान्त तीन गुरुओं से होना अनिवार्य है. इसका अर्थ यह हुआ कि सम चरण का अन्त तीन गुरु से ही होना चाहिये. महाराष्ट्र की प्रसिद्ध लावणी नृत्य के साथ गाये जाने वाले लोकगीत इसी छन्द में निबद्ध होते हैं. इन गीतों के पदान्त दो लघुओं के बाद दो गुरुओं से भी होता है. या, कई बारतो ऐसी कोई शर्त निभायी ही नहीं जाती. अर्थात लावणी के लोक-गीत कुकुभ या ताटंक छन्द की ही अन्य प्रारूप की तरह हैं. इसका कुल अर्थ यह हुआ कि कुकुभ छन्द तथा ताटंक

छन्द में बड़ा ही महीन अन्तर है. चार पदों एवं 16-14 की यति का वह छन्द जिसका **पदान्त दो गुरुओं से हो कुकुभ छन्द** कहलाता है. जबकि चार पदों एवं 16-14 की यति का वह छन्द जिसका **पदान्त तीन गुरुओं से हो ताटंक छन्द** कहलाता है.

ताटंक छन्द का एक उदाहरण -
आये हैं लड़ने चुनाव जो, सब्ज़ बाग़ दिखलायें क्यों?
झूठे वादे करते नेता, किंचित नहीं निभायें क्यों?
सत्ता पा घपले-घोटाले, करें नहीं शर्मायें क्यों?
न्यायालय से दंडित हों, खुद को निर्दोष बतायें क्यों? .. (आचार्य संजीव वर्मा 'सलिल')

शक्ति छन्द

चार पदों तथा दो-दो पदान्तता वाले **शक्ति छन्द** में प्रति पद कुल अट्ठारह मात्राएँ होती हैं. छन्द परम्परा के अनुसार -
१. इस छन्द में पद का प्रारम्भ लघु से होना अनिवार्य है.
२. प्रत्येक पद में पहली, छठी, ग्यारहवीं तथा सोलहवीं मात्राएँ अवश्य लघु होती है.
३. पदान्त सगण (सलगा या ।।ऽ या ११२ या लघु-लघु-गुरु) या रगण (राजभा या ऽ।ऽ या २१२ या गुरु-लघु-गुरु) या नगण (नसल या ।।। या १११ या लघु-लघु-लघु) से होता है.
४. पदों में गेयता को सहज और सप्रवाह रखने केलिए लघु के अलावा गुरु अथवा दीर्घ अक्षरो का होना अथवा द्विकलों का होना महत्त्वपूर्ण होता है. अन्यथा पदों में आवश्यक लघुओं के अलावा आये लघु अक्षर यदि नियत न समायोजित किये गये तो लयभंग की स्थिति बन जाती है.

अर्थात, शक्ति छन्द के लिए उर्दू बहर के अनुसार प्रत्येक पद को **१२२ १२२**

१२२ १२ के भार में साधा जाय तो प्रयास सहज होता है.

शक्ति छन्द का उदाहरण -

सहज भाव से तुम अचानक मिले
लगा.. पुष्प तन में हजारों खिले
लगी तन-बदन से सिहरती हुई
सुगंधित हवा फूल-कलियाँ छुई

नहीं अंत-प्रारम्भ था बात का
पुलकता रहा हर सिरा रात का
सितारे सँजोये मुई रात भी
लगी सज-सँवरने मिले हम कभी

छंद 'कामरूप'

समक्ष महाभागवत प्रजाति का **छंद 'कामरूप'** है | यह 'बैताल' छंद नाम से भी जाना जाता है | 'मदन' छंदया रूपमाला पर अभ्यास करने वाले छन्दकारों के लिए इसे रचना अत्यंत सहज होगा |

छंद 'कामरूप'

(चार चरण, प्रत्येक में ९,७,१० मात्राओं पर यति, चरणान्त गुरु-लघु से)
छब्बीस मात्रा, प्रति चरण है, क्या गज़ब की धार.
है चार चरणीं, अंत गुरु लघु, शिल्प ही आधार.
नौ सात पर हो, यति सुशोभित, बाँटता यह प्यार.
दस शेष मात्रा, प्रति चरण ही, छंदमय अभिसार.
----अम्बरीष श्रीवास्तव

उदाहारण :

दे दन दना दन, मार चाबुक, लाल मिर्ची डारि.
ली लूट इज्जत, अब मरेगा, मातु-मातु पुकारि.

जा मार दीजै, उर अधम वह, कह रही है नारि.
ले हाथ फंदा, दंड फाँसी, माँगती सुकुमारि..

छंद त्रिभंगी की तरह थोड़े से प्रयास से इसके प्रत्येक चरण में नियमानुसार आई प्रत्येक यति पर इसे समतुकांत करके इसके सौंदर्य में श्रीवृद्धि भी की जा सकती है यथा .....

दे दन दना दन, मार दन दन, लाल मिर्ची डारि.
ली लूट इज्जत, झेल हुज्जत, मातु-मातु पुकारि.
आ मार इसको, उर अधम जो, कह रही है नारि.
ले हाथ रस्सी, दंड फाँसी, माँगती सुकुमारि..
--अम्बरीष श्रीवास्तव

इसी प्रकार से आदरणीय आलोक सीतापुरी जी द्वारा रचित छंद देखें ....
मांगें युवतियाँ, ठोंक छतियाँ, न्याय दे सरकार.
जो पुरुष कामी, नारि गामी, बदचलन बदकार,
ये लाज लूटे, भाग फूटे, देव इसको मार.
फाँसी चढ़ा दो, सर उड़ा दो, हो तभी प्रतिकार..
--आलोक सीतापुरी

सार छंद/ छन्न पकैया

सार छंद एक अत्यंत सरल, गीतात्मक एवं लोकप्रिय मात्रिक छंद है.
हर पद के विषम या प्रथम चरण की कुल मात्रा १६ तथा सम या दूसरे चरण की कुल मात्रा १२ होती है. अर्थात, पदों की १६-१२ पर यति होती है.
पदों के दोनों चरणान्त गुरु-गुरु (ऽऽ, २२) या गुरु-लघु-लघु (ऽ।।, २११) या लघु-लघु-गुरु (।।ऽ, ११२) या लघु-लघु-लघु-लघु (।।।।, ११११) से होते हैं.

किन्तु गेयता के हिसाब से गुरु-गुरु से हुआ चरणान्त अत्युत्तम माना जाता है लेकिन ऐसी कोई अनिवार्यता नहीं हुआ करती.
अलबत्ता यह अवश्य है, कि पदों के किसी चरणान्त में तगण (ऽऽ।, २२१), रगण (ऽ।ऽ, २१२), जगण (।ऽ।, १२१) का निर्माण न हो.

उदाहरण -
कोयल दीदी ! कोयल दीदी ! मन बसंत बौराया ।
सुरभित अलसित मधुमय मौसम, रसिक हृदय को भाया ॥
कोयल दीदी ! कोयल दीदी ! वन बसंत ले आयी ।
कूं कूं उसकी प्यारी बोली, हर जन-मन को भायी ॥ (श्री विंध्येश्वरी प्रसाद त्रिपाठी 'विनय')

इसी छंद का एक और प्रारूप है जो कभी लोक-समाज में अत्यंत लोकप्रिय हुआ करता था.
किन्तु अन्यान्य लोकप्रिय छंदों की तरह रचनाकारों के रचनाकर्म और उनके काव्य-व्यवहार का हिस्सा बना न रह सका. *सार छंद के इस प्रारूप को 'छन्न पकैया' के नाम से जानते हैं.*

सार छंद के प्रथम चरण में 'छन्न-पकैया छन्न-पकैया' लिखा जाता है और आगे छंद के सारे नियम पूर्ववत निभाये जाते हैं. 'छन्न पकैया छन्न पकैया' एक तरह से टेक हुआ करती है जो उस छंद की कहन के प्रति श्रोता-पाठक का ध्यान आकर्षित करती हुई एक माहौल बनाती है और छंद के विषय हल्के-हल्के में, या कहिये बात की बात में, कई दफ़े गहरी बातें साझा कर जाते हैं.
छन्न पकैया छन्न पकैया, बजे ऐश का बाजा,
भूखी मरती जाये परजा, मौज उडाये राजा |
छन्न पकैया छन्न पकैया, सब वोटों की गोटी,
भूखे नंगे दल्ले भी अब ,खायें दारु बोटी |
छन्न पकैया छन्न पकैया, देख रहे हो कक्का,

जितने कि बाहुबली यहाँ पर, टिकट सभी का पक्का |
छन्न पकैया छन्न पकैया, हर जुबान ये बातें
मस्ती मस्ती दिन हैं सारे, नशा नशा सी रातें |
छन्न पकैया छन्न पकैया, डर के पतझड़ भागे
सारी धरती ही मुझको तो, दुल्हन जैसी लागे |
छन्न पकैया छन्न पकैया, बात बनी है तगड़ी
बूढे अमलतास के सर पर, पीली पीली पगड़ी | (श्री योगराज प्रभाकरजी)

कुकुभ छन्द

कुकुभ छन्द अर्द्धमात्रिक छन्द है. इस छन्द में चार पद होते हैं तथा प्रति पद 30 मात्राएँ होती हैं.

प्रत्येक पद में दो चरण होते हैं जिनकी यति 16-14 निर्धारित होती है. अर्थात विषम चरण 16 मात्राओं का और सम चरण 14 मात्राओं का होता है. दो-दो पदों की तुकान्तता का नियम है. प्रथम चरण यानि विषम चरण के अन्त को लेकर कोई विशेष आग्रह नहीं है. किन्तु, पदान्त दो गुरुओं से होना अनिवार्य है. इसका अर्थ यह हुआ कि सम चरण का अन्त दो गुरु से ही होना चाहिये. महाराष्ट्र के प्रसिद्ध लावणी नृत्य के साथ गाये जाने वाले लोकगीत इसी छन्द में निबद्ध होते हैं. इन गीतों के पदान्त दो लघुओं के बाद दो गुरुओं से होता है. अर्थात ये कुकुभ छन्द के ही प्रारूप हैं.

कुकुभ छंद का उदहारण:

मानव मूल्य गिरे नित नीचे, भ्रष्टाचार उठा ऊँचा !
अपनी-अपनी डफली सबकी, अपना-अपना है कूंचा !!
किससे कहें वेदना मन की, अब कैसे भाग्य जगायें!
अन्धकार के जंगल में हम,अब कैसे आग लगायें !! (राजबुन्देली)

'रूपमाला रूपसी है, रास करता छंद'. :मदन-छंद या रूप माला
मदन छन्द या रूपमाला

एक अर्द्धसममात्रिक छन्द, जिसके प्रत्येक चरण में 14 और 10 के विश्राम से 24 मात्राएँ और पदान्त गुरु-लघु से होता है. इसको मदन छन्द भी कहते हैं. यह चार पदों का छन्द है, जिसमें दो-दो पदों पर तुकान्तता बनती है.
रूपमाला छंद के माध्यम इसे परिभाषित करने का एक प्रयास किया है ....
है मदन यह छंद इसका, रूपमाला नाम.
पंक्ति प्रति चौबीस मात्रा, गेयता अभिराम.
यति चतुर्दश पंक्ति में हो, शेष दस ही शेष,
अंत गुरु-लघु या पताका, रस रहे अवशेष.. **--**अम्बरीष श्रीवास्तव

यद्यपि रोला भी २४ मात्रा का छंद हैं तथापि यति व गेयता में वह इससे भिन्न है ....आइये देखते हैं रूप माला छंद की कुछ छटाएं .....

रावरे मुख के बिलोकत ही भए दुख दूरि।
सुप्रलाप नहीं रहे उर मध्य आनँद पूरि।
देह पावन हो गयो पदपद्म को पय पाइ
पूजतै भयो वश पूजित आशु हो मनुराइ।   —केशव

रत्न दिसि कल रूपमाला, साजिये सानंद|
राम ही के शरण में रह, पाइए आनंद|
जात हौं वन वादिहीं गल, बाँधि के बहुत तंत्र|
धाम ही किन जपत कामद, राम नाम सुमंत्र||--जगन्नाथ प्रसाद 'भानु'

झनक-झन झांझर झनकती, छेड़ एक मल्हार.
खन खनन कंगन खनकते, सावनी मनुहार.
फहर-फर-फर आज आँचल, प्रीत का इज़हार.

बावरा मन थिरक चँचल, साजना अभिसार..

धड़कनें मदहोश पागल , नयन छलके प्यार .
बोल कुछ बोलें नहीं लब , मौन सब व्यवहार..
शान्ति, चिर-स्थायित्व, खुशियाँ, प्रीत के उपहार..
झूमता जब प्रेम अँगना , बह चले रसधार.. --डॉ० प्राची सिंह

छम छमा छम छम बरसते, शब्द सजते खूब.
खिलखिलाते भाव बहते, शब्द के अनुरूप.
छंद गुनगुन कह रहे हैं, आ मिलो अब मीत.
झूमते तरुवर मगन सुन, श्रावणी संगीत.. –-सीमा अग्रवाल

गर बचाना चाहते हम आज यह संसार।
है जरूरी पेड़ पौधों, से करें सब प्यार॥
पेड़ ही तो हैं बनाते, मेघमय आकाश।
पेड़ वर्षा ला बुझाते, इस धरा की प्यास॥ --संजय मिश्र 'हबीब'

पड़ रहीं रिम-झिम फुहारें, गा रहे मल्हार |
आम की डाली पे झूला, झूलते नर नार |
प्रीत की चलती हवाएं, बढ़ रहा है प्यार |
है हरी हर ओर वसुधा, झूमता संसार || --संदीप कुमार पटेल 'दीप'

चाँदनी का चित्त चंचल, चन्द्रमा चितचोर
मुग्ध नयनों से निहारे, मन मुदित मनमोर.
ताकता संसार सारा, देख मन में खोट.
पास सावन की घटायें, चल छिपें उस ओट..
था कुपित कुंदन दिवाकर, जल रहा संसार .
विवश वसुधा छेड़ बैठी, राग मेघ-मल्हार.

मस्त अम्बर मुग्ध धरती, मीत से मनुहार.
घन-घनन घनघोर घुमड़े, तृप्ति दे रसधार..

बढ़ रही हैं धड़कनें रह,-रह उठें ये गात.
कर रहीं सखियाँ ठिठोली, झूमते तरु पात.
झूलते सम्मुख सजन हैं, दे हृदय आवाज़.
कांपता कोमल कलेजा, आ रही जो लाज.

*21 22 11 122,=**14** 21 2 11 21 =**10** कुल **24***
दूर होगी हर समस्या, सोंच लें यदि ठीक.
रूफ वाटर हार्वेस्टिंग, आज की तकनीक.
तैरती जो मछलियाँ तो, हर जलाशय गेह.
कीजिये निर्भय सभी को, हो सभी से स्नेह. --अम्बरीष श्रीवास्तव

यदि हम उपरोक्त सभी मदन/रूपमाला छंदों की बंदिश पर ध्यान दें तो यह तथ्य उभर कर आता है कि इसकी बंदिश निम्न प्रकार से है ....

'राजभा'गा 'राजभा'गा, 'राजभा'गा राज

212 2 2122 2122 21

अर्थात रगण+गुरु x ३ + पताका(गुरूलघु)

***'बह्र-ए-रमल* मुसम्मन महजूफ' से रूपमाला में साम्य :**

यह बंदिश इस प्रकार से भी हो सकती है

फाइलातुन फाइलातुन फाइलातुन फाइ

212 2 2122 2122 21

अब *बह्र-ए-रमल* मुसम्मन महजूफ की बंदिश देखिये

फाइलातुन फाइलातुन फाइलातुन फाइलुन

212 2 2122 2122 212

यदि अंत के फाइलुन के 'लुन' को हटा दिया जाय तो यह *बह्र-ए-रमल* मुसम्मन महजूफ से लगभग मिलता जुलता छंद है ....
अर्थात ....
फाइलातुन फाइलातुन फाइलातुन फाइलुन
212 2 2122 2122 212 -- *बह्र-ए-रमल* मुसम्मन महजूफ
फाइलातुन फाइलातुन फाइलातुन फाइ - ~~लुन~~
212 2 2122 2122 21 - ~~2~~ --रूपमाला

गीतिका छंद

इस छंद के नाम पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है. कारण कि, इसीसे मिलते-जुलते नाम का एक और छंद **हरिगीतिका** भी एक सुप्रसिद्ध छंद है.
हम यहाँ गीतिका छंद पर चर्चा कर रहे हैं.

गीतिका चार पदों का एक सम-मात्रिक छंद है. प्रति पंक्ति 26 मात्राएँ होती हैं तथा प्रत्येक पद 14-12 अथवा 12-14 मात्राओं की यति के अनुसार होते हैं. पदांत में लघु-गुरु होना अनिवार्य है.
इसके हर पद की **तीसरी, दसवीं, सतरहवीं और चौबीसवीं मात्राएँ लघु हों** तो छन्द की गेयता सर्वाधिक सरस होती है. किन्तु, मूल शास्त्र के अनुसार इस तथ्य को विन्दुवत नहीं कहा गया है. ऐसे कई उदाहरण मिलेंगे जिनमें तीसरी तथा चौबीसवीं मात्राएँ लघु हों भी तो दसवीं और या सतरहवीं मात्राएँ लघु न हो कर पूर्ववर्ती अक्षर में समाहित हो कर गुरु हो गयी हैं. किन्तु, ऐसे प्रयोग बहुत प्रचलित नहीं हुए. न ही ऐसे उदाहरण आसानी से मिलते हैं.

चूँकि, हम छन्दों के बसिक स्वरूप पर बात कर रहे हैं तो क्यों न इस मंतव्य को मूल नियम की तरह अपनाया जाये. ताकि छन्द पर होने वाला अभ्यास सरस तो हो ही सार्थक भी हो.

अतः हम इस छन्द के *प्रत्येक पद में तीसरी, दसवीं, सतरहवीं तथा चौबीसवीं मत्राओं को लघु रखने का ही प्रयास करें.*

यह निर्विवाद है कि छन्द के अंत में रगण = राजभा = गुरु लघु गुरु (ऽ।ऽ) छन्द को अधिक श्रुति मधुर बना देता है.

इस हिसाब से, इस छन्द के पद का मात्रिक विन्यास ऐसे भी किया जा सकता है -
2122 2122 2122 212 या
ला ल लाला / ला ल लाला / ला ल लाला / लालला

निम्नलिखित उदाहरण द्रष्टव्य है जिसमे बोल्ड किये अक्षर नियमानुसार लघु मात्रिक हैं तथा यति 14-12 पर है -
हे प्रभो आनंददाता ज्ञान हमको दीजिये.
शीघ्र सारे दुर्गुणों से दूर हमको कीजिये.
लीजिये हमको चरण में हम सदाचारी बनें.
ब्रह्मचारी धर्मरक्षक वीर व्रतधारी बनें... (राम नरेश त्रिपाठी)

12-14 पर यति भी मान्य है, जैसे -
राम ही की भक्ति में, अपनी भलाई जानिये. (भानु प्रसाद)

इस छन्द को **चंचरी** या **चर्चरी** भी कहते हैं. कई विद्वानों ने चंचरी या चर्चरी के लिए विशेष वर्णवृत भी बनाया है जो निम्नलिखित है -
रगण सगण जगण जगण भगण रगण
इसे संकेतों में निरुपित करें तो -
212 112 121 121 211 212 .. इस विन्यास को ध्यान से देखा जाय तो ऊपर उद्धृत विन्यास ही बनता है. भले, इस विन्यास में कई गुरु विखण्डित हो कर लघु-लघु बन गये हैं.

हम दोनों विन्यासों को एकसाथ प्रस्तुत करते हैं -
गीतिका का विन्यास - 2122 / 2122 / 2122 / 212 और
चंचरी या चर्चरी का विन्यास -21211 / 21211 / 21211 / 212 ..
यानि दोनों विन्यासों में यही अंतर है कि गीतिका के विन्यास के कुछेक गुरु चंचरी के विन्यास में दो लघुओं में बदल गये हैं. जो पढ़ने के क्रम में वर्णों या अक्षर पर बराबर वज़न के कारण दिक्कत पैदा नहीं करते. जैसे, **हम** दो लघुओं यानि **ह** तथा **म** के बावज़ूद **हम** स्वराघात के कारण दीर्घ या गुरु की तरह उच्चारित होता है.
इसीतरह, **कमल** को **क+मल** की तरह उच्चारित किया जाता है. इन तथ्यों को शब्दों के ’कलों’ को समझने के क्रम में बेहतर समझा जा सकता है.
इस तरह स्पष्ट है कि **चंचरी** या **चर्चरी** ही गीतिका है.

उल्लाला छन्द

हम दोहा के नियमों को अच्छी तरह से देख-समझ चुके हैं जोकि अर्द्धसममात्रिक छन्द है. इसके विषम चरण में 13 मात्राएँ होती हैं जबकि इसके सम चरण की कुल मात्रा 11 होती है.
हम इस छन्द के विषम चरण पर ध्यान रखें. जिसके कुल शब्दों की मात्रा 13 होती है. दोहा के विषम चरण को यदि दो पदों के हिसाब से चार बार लिखा जाय, यानि **दो पदों में चार चरण हों और सभी तेरह मात्रिक हों तो वह छंद उल्लाला कहलाता है.**
लेकिन, पद्य साहित्य में उल्लाला छन्द के दो प्रकार मान्य हैं.
एक, जिसके चारों चरण सममात्रिक होते हैं. यानि उनके प्रति चरण दोहा छन्द के विन्यास की तरह 13 मात्राएँ होती हैं.
दो, जिसके प्रत्येक पद की यति 15-13 पर होती है. यानि छन्द का यह दूसरा प्रकार अर्द्धसम मात्रिक छन्द होता है. दूसरे प्रकार के उल्लाला छन्द में तुकान्तता सम पदों में बनती है. हम पहले प्रकार पर ही ध्यान केन्द्रित करेंगे. क्यों कि दूसरे प्रकार में विषम चरण के प्रारम्भ में एक गुरु या दो लघु का शब्द जोड़ दिया जाता

है ताकि विषम चरण पन्द्रह मात्राओं का हो जाय. बाकी सारा विधान तेरह मात्रिक वाले चरणों की तरह ही होता है.

अब पहले या मुख्य प्रकार के छन्द के मुख्य विन्दु निम्नांकित हैं -
क) दोहा छन्द के विषम चरण की तरह ही चारों चरणों का विन्यास होता है.
ख) अर्थात, सभी चरणों में 4-4-3-2 या 3-3-2-3-2 का विन्यास मान्य है. अधिक विस्तार के लिए दोहा छन्द में देखें.
ग) चरणान्त **रगण** (ऽ।ऽ या 212 या गुरु-लघु-गुरु) या **नगण** (।।। या 111 या लघु-लघु-लघु) से होना अति शुद्ध है.
घ) तुकान्तता विषम-सम चरण में मान्य है तो सम-सम चरण की तुकांतता भी मान्य है.
उदाहरणार्थ,
सम चरण तुकान्तता -
प्रेम नेम हित चतुरई, जे न बिचारत नेकु मन
सपनेहुँ न विलम्बियै, छिन तिग हिग आनन्द घन (घनान्द)

विषम-सम चरण तुकान्तता -

उर्ध्व ब्रह्म के गर्भ में, संभव के संदर्भ में
वृत्ति चराचर व्यापती, काल-क्षितिज तक मापती ('इकड़ियाँ जेबी से' से)

दूसरे प्रकार के उल्लाला छन्द का उदाहरण जिसके पद 15-13 की यति पर होती है. यानि विषम चरण में 15 मात्राएँ तथा सम चरण में 13 मात्राएँ होती हैं.
इस प्रकार के उल्लाला में तुकान्तता सम चरणों पर ही स्वीकार्य है -

कै शोणित कलित कपाल यह, किल कपालिका काल को
यह ललित लाल केधौं लसत, दिग्भामिनि के भाल को

अति अमल ज्योति नारायणी, कहि केशव बुड़ि जाहि बरु
भृगुनन्द सँभारु कुठार मैं, कियौ सराअन युक्त शरु (केशवदास)

उपरोक्त पदों को ध्यान से देखा जाय तो प्रत्येक विषम चरण के प्रारम्भ में एक गुरु या दो लघु हैं, जिनके बाद का शाब्दिक विन्यास तेरह मात्राओं की तरह ही है. उसी अनुरूप पाठ का प्रवाह भी है.
इसकारण, विषम चरण में पहले दो मात्राओं के बाद स्वयं एक यति बन जाती है और आगे का पाठ दोहा के विषम चरण की तरह ही होता चला जाता है.
उल्लाला छन्द का एक और नाम चंद्रमणि भी है.

एक महत्त्वपूर्ण तथ्य यह है कि उल्लाला छन्द का व्यवहार **छप्पय छन्द** में ही अक्सर होता है. विस्तृत जानकारी हम छप्पय छन्द के क्रम में देखेंगे.

पुनश्च: छंदशास्त्र के अनुसार उल्लाला अथवा चन्द्रमणि छंद में 13 मात्रायें ही होती हैं और यह मात्रिक छंद है। इस छंद के अंत में गुरु-लघु का कोई विधान नहीं होता, केवल 11वीं मात्रा के लघु होने का विधान होता है। इसी प्रकार दूसरा छंद अर्द्धसम मात्रिक है, जिसका नाम 'उल्लाल' है और इसमें 15,13 मात्राओं का विधान होता है। इसे कई बार उल्लाला कह दिया जाता है, जो उचित नहीं है। दोनों ही भिन्न छंद हैं। मेरी जानकारी के अनुसार यह तथ्य है, जो छंद प्रभाकर एवं छंदोर्णव के अनुसार है।..विश्वजीत सपन

त्रिभंगी छंद

संजीव 'सलिल'

त्रिभंगी 32 मात्राओं का छंद है जिसके हर पद की गति तीन बार भंग होकर चार चरणों (भागों) में विभाजित हो जाती है। प्राकृत पैन्गलम के अनुसार:

पढमं दह रहणं, अट्ठ विरहणं, पुणु वसु रहणं, रस रहणं।
अन्ते गुरु सोहइ, महिअल मोहइ, सिद्ध सराहइ, वर तरुणं।
जइ पलइ पओहर, किमइ मणोहर, हरइ कलेवर, तासु कई।
तिब्भन्गी छंदं, सुक्खाणंदं, भणइ फणिन्दो, विमल मई।

(संकेत: अष्ट वसु = 8, रस = 6)

सारांश: प्रथम यति 10 मात्रा पर, दूसरी 8 मात्रा पर, तीसरी 8 मात्रा पर तथा चौथी 6 मात्रा पर हो। हर पदांत में गुरु हो तथा जगण (ISI लघु गुरु लघु) कहीं न हो।

केशवदास की छंद माला में वर्णित लक्षण:

विरमहु दस पर, आठ पर, वसु पर, पुनि रस रेख।
करहु त्रिभंगी छंद कहँ, जगन हीन इहि वेष।।

(संकेत: अष्ट वसु = 8, रस = 6)

भानुकवि के छंद-प्रभाकर के अनुसार:

दस बसु बसु संगी, जन रसरंगी, छंद त्रिभंगी, गंत भलो।
सब संत सुजाना, जाहि बखाना, सोइ पुराना, पन्थ चलो।
मोहन बनवारी, गिरवरधरी, कुञ्जबिहारी, पग परिये।
सब घट घट वासी मंगल रासी, रासविलासी उर धरिये।

(संकेत: बसु = 8, जन = जगण नहीं, गंत = गुरु से अंत)

सुर काज संवारन, अधम उघारन, दैत्य विदारन, टेक धरे।
प्रगटे गोकुल में, हरि छिन छिन में, नन्द हिये में, मोद भरे।
सूत्र: धिन ताक धिना धिन, ताक धिना धिन, ताक धिना धिन, ताक धिना।

नाचत जसुदा को, लखिमनि छाको, तजत न ताको, एक छिना।

उक्त में आभ्यंतर यतियों पर अन्त्यानुप्रास इंगित नहीं है किन्तु जैन कवि राजमल्ल ने 8 चौकल, अंत गुरु, 10-8-8-6 पर विरति, चरण में 3 यमक (तुक) तथा जगण निषेध इंगित कर पूर्ण परिभाषा दी है।

गुजराती छंद शास्त्री दलपत शास्त्री कृत दलपत पिंगल में 10-8-8-6 पर यति, अंत में गुरु, तथा यति पर तुक (जति पर अनुप्रासा, धरिए खासा)का निर्देश दिया है।

सारतः: त्रिभंगी छंद के लक्षण निम्न हैं:

1. त्रिभंगी 32 मात्राओं का (मात्रिक) छंद है।

2. त्रिभंगी समपाद छंद है।

3. त्रिभंगी के हर चरणान्त (चौथे चरण के अंत) में गुरु आवश्यक है। इसे 2 लघु से बदलना नहीं चाहिए।

4. त्रिभंगी के प्रत्येक चरण में 10-8-8-6 पर यति (विराम) आवश्यक है। मात्रा बाँट 8 चौकल अर्थात 8 बार चार-चार मात्रा के शब्द प्रावधानित हैं जिन्हें 2+4+4, 4+4, 4+4, 4+2 के अनुसार विभाजित किया जाता है। इस तरह 2 + 7x 4 + 2 = 32 सभी पदों में होती है।

5. त्रिभंगी के चौकल 7 मानें या 8 जगण का प्रयोग सभी में वर्जित है।

6. त्रिभंगी के हर पद में पहले दो चरणों के अंत में समान तुक हो किन्तु यह बंधन विविध पदों पर नहीं है।

7. त्रिभंगी के तीसरे चरण के अंत में लघु या गुरु कोई भी मात्रा हो सकती है किन्तु कुशल कवियों ने सभी पदों के तीसरे चरण की मात्रा एक सी रखी है।

8. त्रिभंगी के किसी भी मात्रिक गण में विषमकला नहीं है। सम कला के मात्रिक गण होने से मात्रिक मैत्री का नियम पालनीय है।

9. त्रिभंगी के प्रथम दो पदों के चौथे चरणों के अंत में समान तुक हो। इसी तरह अंतिम दो पदों के चौथे चरणों के अंत में सामान तुक हो। चारों पदों के अंत में समान तुक होने या न होने का उल्लेख कहीं नहीं मिला।

उदाहरण:

1. महाकवि तुलसीदास रचित इस उदाहरण में तीसरे चरण की 8 मात्राएँ अगले शब्द के प्रथम अक्षर पर पूर्ण होती हैं, यह आदर्श स्थिति नहीं है किन्तु मान्य है।

धीरज मन कीन्हा, प्रभु मन चीन्हा, रघुपति कृपा भगति पाई।
पदकमल परागा, रस अनुरागा, मम मन मधुप करै पाना।
सोई पद पंकज, जेहि पूजत अज, मम सिर धरेउ कृपाल हरी।
जो अति मन भावा, सो बरु पावा, गै पतिलोक अनन्द भरी।

2. तुलसी की ही निम्न पंक्तियों में हर पद का हर चरण आपने में पूर्ण है।

परसत पदपावन, सोक नसावन, प्रगट भई तप, पुंज सही।
देखत रघुनायक, जन सुख दायक, सनमुख हुइ कर, जोरि रही।
अति प्रेम अधीरा, पुलक सरीरा, मुख नहिं आवै, वचन कही।
अतिशय बड़भागी, चरनन लागी, जुगल नयन जल, धार बही।

यहाँ पहले 2 पदों में तीसरे चरण के अंत में 'प' तथा 'र' लघु (समान) हैं किन्तु अंतिम 2 पदों में तीसरे चरण के अंत में क्रमशः गुरु तथा लघु हैं।

3.महाकवि केशवदास की राम चन्द्रिका से एक त्रिभंगी छंद का आनंद लें:

सम सब घर सोभैं, मुनिमन लोभैं, रिपुगण छोभैं, देखि सबै।
बहु दुंदुभि बाजैं, जनु घन गाजैं, दिग्गज लाजैं, सुनत जबैं।
जहँ तहँ श्रुति पढ़हीं, बिघन न बढ़हीं, जै जस मढ़हीं, सकल दिसा।
सबही सब विधि छम, बसत यथाक्रम, देव पुरी सम, दिवस निसा।

यहाँ पहले 2 पदों में तीसरे चरण के अंत में 'भैं' तथा 'जैं' गुरु (समान) हैं किन्तु अंतिम 2 पदों में तीसरे चरण के अंत में क्रमशः गुरु तथा लघु हैं।

4. श्री गंगाप्रसाद बरसैंया कृत छंद क्षीरधि से तुलसी रचित त्रिभंगी छंद उद्धृत है:

रसराज रसायन, तुलसी गायन, श्री रामायण, मंजु लसी।
शारद शुचि सेवक, हंस बने बक, जन कर मन हुलसी हुलसी।
रघुवर रस सागर, भर लघु गागर, पाप सनी मति, गइ धुल सी।
कुंजी रामायण, के पारायण, से गइ मुक्ति राह खुल सी।

टीप: चौथे पद में तीसरे-चौथे चरण की मात्राएँ 14 हैं किन्तु उन्हें पृथक नहीं किया जा सकता चूंकि 'राह' को 'र'+'आह' नहीं लिखा जा सकता। यह आदर्श स्थिति नहीं है। इससे बचा जाना चाहिए। इसी तरह 'गई' को 'गइ' लिखना अवधी में सही है किन्तु हिंदी में दोष माना जाएगा।

अनुष्टुप छंद

यह संस्कृत भाषा का एक अत्यंत ही प्रसिद्ध वार्णिक छंद है. **श्रीमद्भग्वद्गीता, श्रीसुक्तम, गायत्री कवचम्**, **विष्णु सहस्रनाम** आदि-आदि की रचना इसी छंद में हुई है.

इस छंद के चार चरण होते हैं, प्रत्येक चरण में आठ-आठ वर्ण होते हैं, घनक्षरी की प्रथम पंक्ति के दोनों चरणों की तरह. किन्तु एक विशेष विन्यास होता है --

छंद के **विषम चरण में पाँचवाँ, छठा और सातवाँ वर्ण क्रमशः लघु, गुरू, गुरू** होता है, जबकि सम का **पाँचवाँ, छठा और सातवाँ वर्ण क्रमशः लघु, गुरू, लघु** होता है.

एक बात और, वैसे तो दोनों चरणों के **आठवें वर्ण को लेकर कोई विशेष संकेत नहीं किया गया है.** किन्तु संस्कृत भाषा में इस छंद के पाठ के समय दोनों चरणों के आठवें वर्ण पर विशेष स्वर-बल दिया जाता है. यह उस वर्ण के गुरू होने का आभास देता है, भले ही आठवाँ वर्ण किसी दीर्घ स्वर से संयुक्त न हो, अथवा मात्र एक अक्षर भर क्यों न हो (अकारांत अक्षर). चूँकि, **हिन्दी में ह्रस्व स्वर युक्त अक्षर या अकारांत अक्षर को लघु गिना जाता है**. अतः, पाठ के आधार पर **आठवें वर्ण को हिन्दी पद्य में गुरू** का रूप माना जा रहा है.

इस लिहाज से हिन्दी पद्य में **अनुष्टुप छंद** के चरण निम्न विस्तार में होंगे --
विषम चरण - वर्ण क्रमांक पाँचवाँ, छठा, सातवाँ, आठवाँ क्रमशः लघु, गुरू, गुरू, गुरू
सम चरण - वर्ण क्रमांक पाँचवाँ, छठा, सातवाँ, आठवाँ क्रमशः लघु, गुरू, लघु, गुरू

श्रीमद्भग्वद्गीता का ही एक विशिष्ट श्लोक का उदाहरण दे रहा हूँ, तीसरे अध्याय से तीसरा श्लोक -

लोकेऽस्मिन **द्विधा नि**ष्ठा पुरा प्रोक्ता **मयान**घ
ज्ञानयोगे**न सांख्या**नां कर्म योगे**न योगि**नां ॥

प्रथम पंक्ति के सम चरण में **मयानघ** संधि-शब्द अत्यंत सटीक उदाहरण है, जहाँ '**घ**' पर पाठ के क्रम में स्वर-बल दिया जाता है किन्तु, इस '**घ**' से कोई दीर्घ स्वर नहीं जुड़ा है.

अन्य उदाहरण -

तेरा दिल बसेरा हो, घरौंदा प्यार-भाव का
धर्म सर्वसमाही हो, कर्म धारे विशालता

न भेद नौनिहालों में, भेद मानें पढ़े-लिखे
''पन्थ है जरिया ही तो, धर्म तथ्य उभारता''

गूढ़ बातें नहीं हैं ये, किन्तु बेशक जानिये --
होंगे राम अजानों में, दिखे कान्हा सलीम का

बने यों जिंदग़ी आसां, होगा संयत आदमी
हर मंदिर शोभेगा, ईश के दरबार सा

चप्पा-चप्पा भरोसे से, आप्लावित रहे सदा
तभी समाज में व्यापे, आत्मीयता, उदारता

प्रमाणिका, पञ्च चामर, अनंग शेखर छंद

यह सम मात्रिक वार्णिक छंद है , यह छंद अत्यधिक जोशीला छंद है, इस छंद की लय ही इस प्रकार की है कि गायन में अपने आप एक लय का निर्माण होता है, यह

छंद मेरा सबसे पसदीदा छंद है, इसमें लघु गुरु वर्णों का क्रम रहता है लघु गुरु की आठ आवृति अथार्थ कुल १२ मात्राएँ हो तो इसे प्रमाणिका कहते हैं जैसे
नमामि भक्त वत्सलं/ कृपालु शील कोमलं

चले प्रचंड आंधियाँ
लहू सनी पहाड़ियाँ
रुको नहीं बढे चलो
अजेय हो चले चलो

२.
न हार में न जीत में
घमंड हो न प्रीत में
लगे रहो स्व-गीत में
गिरो नहीं कु-रीत में ...सुरेश चौधरी

जब ये लघु गुरु की आवृति बढ़ कर १६ वर्णों की हो जाय अथार्थ कुल २४ मात्रायें तो इसे पञ्च चामर कहते हैं , जैसे

हिमाद्रि त्रुंग सृंग से प्रबुद्ध शुद्ध भारती ....

नवोदितों रुको नहीं झुको नहीं प्रबंध है
उमंग है तरंग है रचो स्वछंद छंद है
सुनो बढ़ो बढ़ो लिखो लिखो अनंग छंद ये
श्रृंगार बोलता मृणाल सा तुरंग छंद ये .....सुरेश चौधरी

जटा वने प्रवाह गंग धार कंठ धावते
निनाद डम्म डम्म गजिते प्रचंड वाद्यते
सुकंठ लम्ब लम्बिते कराल काल सर्पिते

शिवे अनंग तांडवं करे दया महाचिते ....सुरेश चौधरी
जब लघु गुरु की अवारुतियाँ बढ़ कर बत्तीस हो जाय अथार्थ कुल ४८ मात्राएँ तो यह अनंग शेखर हो जाता है जैसे

जटाटवीगलज्जलप्रवाहपावितस्थले गलेऽवलम्ब्य लम्बितां भुजङ्गतुङ्गमालिकाम् |
डमड्डमड्डमड्डमन्निनादवड्डमर्वयं चकार चण्ड्ताण्डवं तनोतु नः शिवः शिवम् |

इन छंदों में प्रत्येक चरण के बाद तुक होती है सामान्यतः यह चार चरणों का छंद होता है पर दो चरण भी मान्य हैं |

रूपमाला / मद / मदन / मदनावतारी छंद

विधा :
तीन दो दो, तीन दो दो, तीन दो दो ताल
रूपमाला छंद की है यही उत्तम चाल - नारायण दास, हिंदी छन्दोलक्षण
छंद-लक्षण: जाति अवतारी, अर्ध सम मात्रिक छंद, प्रति पंक्ति मात्रा २४ मात्रा, यति चौदह-दस, पदांत गुरु-लघु (तगण, जगण), दो-दो पदों की तुकांतता।
मात्रा बाँट - २१२२ / २१२२ / २१२२ / २१, २१ के स्थान पर १११ भी मान्य।
तीसरी, दसवीं, सत्रहवीं मात्रा यथा संभव लघु।

रत्न दिसि कल रूपमाला, साजिए सानंद।
रामही के शरण में रहि, पाइये आनंद।।
जातु हौ वन वादिही गल, बांधिके बहु तंत्र ।
धामहीं किन जपत कामद, रामनाम सुमंत्र।। भानु

स्पर्श करने लगी लज्जा, ललित कर्ण कपोल।
खिला पुलक कदम्ब सा था, भरा गदगद बोल।। -जय शंकर प्रसाद, कामायनी

गीतिका विधा

: **ओम नीरव**

गीतिका एक लोकप्रिय काव्य विधा है। इसके मुख्य लक्षण निम्नवत हैं –

हिन्दी भाषा और हिन्दी व्याकरण गीतिका की भाषा हिन्दी हैं जिसमें अन्य भाषाओं के प्रचलित शब्दो का स्वल्प एवं सुरुचिपूर्ण प्रयोग किया जा सकता है किन्तु व्याकरण शुद्ध हिन्दी की ही प्रयोग की जाएगी। उदाहरण के लिए हिन्दी प्रधान गीतिका में 'सवाल' शब्द का यथावश्यक प्रयोग तो कर सकते है लेकिन इसका बहुवचन हिन्दी व्याकरण के अनुसार 'सवालों' होगा, 'सवालात' नहीं। **मापनी या आधार छन्द** गीतिका की पंक्तियों को पद कहते हैं। गीतिका के सभी पद एक ही लय में होते हैं। इस लय को निर्धारित करने के लिए 'आधार छन्द' या 'मापनी' का प्रयोग किया जाता है। जैसे -आधार छन्द – विधाता (जिसकी मापनी निम्नवत है)
मापनी – 1222 1222 1222 1222
समान्त और पदान्त पूरी गीतिका में तुकान्त एक सामान रहता है। तुकान्त में दो खंड होते है -- अंत का जो शब्द या शब्द-समूह सभी पदों में समान होता है उसे पदान्त कहते हैं तथा उसके पहले के शब्दों में जो अंतिम अंश सामान रहता है उसे समान्त कहते हैं। कुछ गीतिकाओं में पदान्त नहीं होता है , ऐसी गीतिकाओं को **'अपदान्त गीतिका'** कहते हैं !

मुखड़ा

गीतिका के प्रथम दो पद तुकान्त होते हैं , इन पदों से बने युग्म को मुखड़ा कहते हैं। मुखड़ा के द्वारा ही गीतिका के समान्त और पदान्त निर्धारित होते हैं। कतिपय गीतिकाओं में एक से अधिक मुखड़े भी हो सकते हैं , तब दूसरे मुखड़े को 'रूप मुखड़ा' कहते हैं।

न्यूनतम पाँच युग्म गीतिका के दो-दो पदों को मिलाकर युग्म बनते हैं। पहले युग्म के दोनों पद तुकान्त होते हैं जिसे मुखड़ा कहते हैं और अन्य सभी युग्मों में पहला

पद अतुकान्त होता है जिसे 'पूर्व पद' कहते हैं और दूसरा पद तुकान्त होता है जिसे 'पूरक पद' कहते हैं। गीतिका में कम से कम **पाँच युग्म होना अनिवार्य है।** गीतिका में अधिकतम युग्मों की संख्या का कोई प्रतिबंध नहीं है, तथापि ग्यारह से अधिक युग्म होने पर गीतिका का मूल स्वरूप और प्रभाव प्रायः नष्ट होने लगता है। युग्म की अभिव्यक्ति अपने में स्वतंत्र होनी चाहिए अर्थात युग्म को अपने अर्थ के लिए किसी अन्य का मुखापेक्षी नहीं होना चाहिए। अंतिम युग्म में यदि रचनाकार का नाम आता है तो उसे 'मनका' कहते हैं।

विशेष कहन

युग्म के कथ्य को इसप्रकार व्यक्त किया जाता है कि युग्म पूरा होने पर पाठक या श्रोता के हृदय मे एक चमत्कारी विस्फोटक प्रभाव उत्पन्न होता है जिससे उसके मुँह से स्वतः 'वाह' निकल जाता है। इस विशेष कहन को अन्योक्ति, वक्रोक्ति या व्यंग्योक्ति के रूप में भी देखा जा सकता है। इस विशेष कहन को 'गीतिकाभास' उर्दू में 'ग़ज़लियत') भी कह सकते हैं।

उदाहरण

क्षम्य कुछ भी नहीं, बात सच मानिए।
भोग ही है क्षमा , तात सच मानिए।

भाग्य तो है क्रिया की सहज प्रति-क्रिया,
हैं नियति-कर्म सहजात सच मानिए।

है कला एक बचकर निकलना सखे,
व्यर्थ ही घात-प्रतिघात, सच मानिए।
घूमते हैं समय की परिधि पर सभी,
कुछ नहीं पूर्व-पश्चात, सच मानिए।

वह अभागा गिरा मूल से , भूल पर -

कर सका जो न दृगपात सच मानिए।

सत्य का बिम्ब ही देखते हैं सभी,
आजतक सत्य अज्ञात ,सच मानिए।

- ओम नीरव

विन्दुवत व्याख्या

(1) इस गीतिका में हिन्दी भाषा और हिन्दी व्याकरण का प्रयोग किया गया है।

(2) आधार छन्द – वाचिक स्त्रग्विणी (मूल स्त्रग्विणी मे रगण अर्थात 212 या गालगा की चार आवृत्तियों के साथ 12 वर्ण होते हैं और किसी गुरु के स्थान पर दो लघु प्रयोग करने छूट नहीं होती है किन्तु जब इस छूट का प्रयोग किया जाता है तो इसे 'वाचिक स्त्रग्विणी कहते हैं)। यहाँ पर वाचिक भार के साथ वाचिक मापनी का उल्लेख किया जा रहा है।

मापनी – 212 212 212 212
गालगा गालगा गालगा गालगा
इसे मुखड़े के मात्रा-कलन मे निम्नप्रकार देखा जा सकता है –

क्षम्य कुछ/ भी नहीं/, बात सच/ मानिए।
212/ 212/ 212/ 212/
भोग ही/ है क्षमा/ , तात सच/ मानिए।
212/ 212/ 212/ 212/

(3) पूरी गीतिका का तुकान्त है - 'आत सच मानिए' , जिसके दो खंड हैं , समान्त - 'आत' और पदान्त - 'सच मानिए' । इसे गीतिका के युग्मों में निम्नप्रकार देखा जा सकता है –

बात सच मानिए = ब् + आत सच मानिए
तात सच मानिए = त् + आत सच मानिए
जात सच मानिए = ज् + आत सच मानिए

घात सच मानिए = घ् + आत सच मानिए
चात सच मानिए = च् + आत सच मानिए
पात सच मानिए = प् + आत सच मानिए
ज्ञात सच मानिए = ग्य् + आत सच मानिए

(4) मुखड़ा निम्नप्रकार है -

क्षम्य कुछ भी नहीं, बात सच मानिए।
भोग ही है क्षमा, तात सच मानिए।

इसके दोनों पद तुकान्त हैं और इन्हीं पदों से तुकान्त 'आत सच मानिए' का निर्धारण होता है जिसका पूरी गीतिका में विधिवत निर्वाह हुआ है।

(5) न्यूनतम पाँच युग्म के प्रतिबंध का निर्वाह करते हुये इस गीतिका मे छः युग्म हैं । प्रत्येक युग्म का पूर्व पद अतुकान्त तथा पूरक पद तुकान्त है। प्रत्येक युग्म की अभिव्यक्ति स्वतंत्र है। अंतिम युग्म में रचनाकार का उपनाम न आने से यह मनका की कोटि में नहीं आता है।

(6) विशिष्ट कहन की बात का निर्णय पाठक स्वयं करके देखें , जिस युग्म में वह विशेष कहन न हो उसे गीतिका का युग्म नहीं मानना चाहिए या फिर दुर्बल युग्म मानना चाहिए।

गीतका और उर्दू ग़ज़ल में समानताएं

दोनों की पंक्ति (1)लय में होना अनिवार्य है। गीतिका या ग़ज़ल की लयात्मक पंक्ति को हिन्दी में 'पद' और उर्दू में 'मिसरा' कहते हैं।
दोनों में प्रारम्भ से अंत तक (2)समान्त और पदान्त एक जैसे अर्थात अपरिवर्तित रहते हैं। उर्दू में समान्त को 'काफिया' और पदान्त को 'रदीफ़' कहते हैं।
(3)दोनों में प्रथम युग्म अर्थात मुखड़ा के दोनों पद तुकांत होते हैं। उर्दू में युग्म को 'शेर' और मुखड़ा को 'मतला' कहते हैं।

दोनों में कुल मिलाकर (4)न्यूनतम पाँच युग्म होना अनिवार्य है। दोनों में मुखड़ा को छोडकर अन्य युग्मों के पूर्वपद अतुकान्त और पू (मिसरा ऊला)रक पद मिसरा) तुकान्त होता है। दोनों में (सानीयुग्म की अभिव्यक्ति स्वतंत्र होनी चाहिए। दोनों के अंतिम युग्म में रचनाकार का उपनाम आने पर उसे विशेष नाम से जाना जाता है जिसे हिन्दी में मनका और उर्दू में मक्ता कहते हैं।

दोनों के युग्मों में (5)'विशेष कहन' अनिवार्य होती है। इसे हिन्दी में 'गीतिकाभास' और उर्दू में 'ग़ज़लियत' कह सकते हैं।

गीतका और उर्दू ग़ज़ल में भिन्नताएँ

गीतिका गीतिका की लय किसी सनातनी छंद या लौकिक (1)छन्द अथवा मापनी पर आधारित हो सकती है जबकि ग़ज़ल की लय केवल मापनी पर ही (बहर) 2) आधारित होती है।) गीतिका में केवल व्यावहारिक हिन्दी भाषा और हिन्दी व्याकरण ही मान्य है जबकि ग़ज़ल में सामान्यतः उर्दू भाषा और उर्दू व्याकरण मान्य होती है।

(3) 'गीतिका' में हिंदी शब्दों का प्रयोग प्रमुखता से अपेक्षित है और साथ ही इतर भाषाओँ जैसे उर्दू , अंग्रेजी आदि के लोक प्रचलित शब्दों का सुरुचिपूर्ण प्रयोग भी स्वीकार्य है किन्तु ऐसे शब्दों पर व्याकरण हिन्दी की ही लागू होगी।

(4) गीतिका में मात्राभार की गणना , संधि - समास , तुकांतता या समान्तता आदि का निर्धारण सामान्यतः हिंदी व्याकरण के अनुसार ही मान्य है, जबकि ग़ज़ल में इन बातों का निर्धारण उर्दू व्याकरण और उर्दू उच्चारण के आधार पर होता है।

(5) 'गीतिका' में अग्रलिखित बातें हिन्दी भाषा-व्याकरण के अनुरूप न होने के कारण मान्य नहीं हैं -

क - अकार-योग (अलिफ़-वस्ल) जैसे 'हम अपना' को 'हमपना' पढ़ना ,

ख - पुच्छ-लोप (पद के अंतिम लघु का लोप) जैसे 'पद के अंत में आने पर 'कबीर' को 12 मात्राभार में 'कबीर्' या 'कबी' जैसा पढना ,

ग - समान्ताभास (ईता-दोष) जैसे 'चलना' और 'बचना' में समान्त दोषपूर्ण मानना आदि

जबकि ग़ज़ल में ये बातें मान्य हैं।

(6) गीतिका के शिल्प विधान की चर्चा में स्वरकों - लगा, लगागा, गालगागा, ललगालगा आदि अथवा लगा, यमाता, राजभागा, सलगालगा आदि का प्रयोग होगा जबकि ग़ज़ल में इनके स्थान पर रुक्नों - फअल, मुफैलुन, फ़ाइलातुन, मुतफाइलुन आदि का प्रयोग होता है।

संक्षेप में कहा जा सकता है कि गीतिका के रूप में केवल वही ग़ज़ल मान्य है (क) जिसमें व्यावहारिक हिन्दी भाषा की प्रधानता हो (ख) हिन्दी व्याकरण की अनिवार्यता हो और (ग) प्रचलित मापनियों के साथ हिन्दी छन्दों का समादर हो।

--------और अब

अंत में जाते जाते हम चर्चा कर लें दो विधाओं की जो भारतीय छंद विधा तो नहीं पर भारतीय काव्य में रच बस गयी हैं, एक तो ग़ज़ल विधा दूसरी हाइकू विधा, इन विधाओं का विस्तृत विवरण तो नहीं पर इतनी जानकारी हम ले लें जिनसे इन विधाओं को हम जान लें पहचान लें और प्रारंभिक ज्ञान प्राप्त कर लें :

ग़ज़ल का गठन

भाग-१ .ग़ज़ल प्रारंभिक जानकारी

ग़ज़ल शब्द का जन्म जैसा की कहा जाता है की अरबी के गजाला शब्द से हुआ है जिसका अर्थ है हिरण, जिस प्रकार हिरण कुलांचे भरता है उसी प्रकार ग़ज़ल के शब्द कुलांचे भरते हैं एक निशिचित लय में, किसी नज़्म,काव्य,या कविता को ग़ज़ल तब कहते है जब वह परंपरागत विधान में रची गयी हो, अथार्थ ग़ज़ल के शिल्प में उसका गठन हुआ हो, ग़ज़ल का शिल्प क्या है इसको जानने के पूर्व हम कुछ मौलिक बातें जानना चाहेंगे | ग़ज़ल के रूप विधान में मतला, मक्ता, रदीफ, काफिया, शेर, मिसरा, बहर इत्यादि का उल्लेख स्पष्टः होता है. ग़ज़ल के प्रत्येक चरण को मिसरा कहते है, और दो मिसरे अर्थात दो चरण मिलकर एक शेर की रचना करते हैं. दूसरे शब्दों में दो पंक्तियों का जोड़ा शेर कहलाता है. शेर की पहली पंक्ति को मिसरा-ए-उला' यानी ऊपर वाला, तथा दूसरी पंक्ति को मिसरा-ए-सानी'(सानी का शाव्दिक अर्थ है दूसरा) कहा जाता है. ग़ज़ल का प्रथम शेर मतला और अन्तिम शेर मक्ता कहलाता है. ग़ज़ल में कभी कभी सानी मतला भी हो सकता है अर्थात उस ग़ज़ल में दो मतले होते हैं पर ऐसा बहुत ही कम देखने को मिलता है, दुसरे मतले के शेर में दोनों मिसरों में मतले की भांति काफिया, रदीफ का निर्वाह किया गया होना चाहिए| मतले के दनो मिसरों, तत्पश्चात् प्रत्यके शेर व मक्ते के दूसरे मिसरे में सबसे अंत में रदी फ से पूर्व काफिया स्थित होता है. ग़ज़ल के मक्ते में तखल्लुस अर्थात रचयिता कवि का उपनाम होता है. यह बात ध्यान देने योग्य है की ज्यूँ मुक्तक स्वछन्द होते हैं दोहे स्वछन्द होते हैं उसी प्रकार ग़ज़ल के प्रत्येक शेर स्वच्छंद होते हैं अथार्थ किसी भी शेर का अन्य शेर से कोई भी सम्बन्ध नहीं होता |

मतले के दोनों चरणों के अंत में पदांत होता है पदांत के पूर्व तुकांत होता है जिसे रदीफ़ और काफिया कहते हैं कभी कभी किसी किसी ग़ज़ल में रदीफ़ नहीं होता सीधे काफिया (तुकांत) ही होता है, अथार्थ यूँ कहा सकते हैं मतले के बारे में

मतला:

मिसरा-ये-उला = प्रथम पंक्ति का भाव किसी निश्चित तय लय में + काफिया+रदीफ़
मिसरा-ये-सानी= द्वितीय पंक्ति का भाव (लय में) + काफिया+रदीफ़

शेर:
मिसरा-ये-उला= अलग अलग भाव उपरोक्त लय में ही,
मिसरा-ये-सानी= उपरोक्त पंक्ति का समापन भाव उसी लय में +काफिया+रदीफ़
यहाँ एक बात ध्यान देने योग्य है की रदीफ़ में आये शब्द का मिसरा-ये-उला में होना वर्जित है अन्यथा उसे तकाबुले रदीफ़ का दोष माना जाता है |

मक्ता : मकते का शेर भी इन अन्य शेरों की तरह होता है, बस इसमें शायर अपना उपनाम लिखता है पहली पंक्ति में ही लिखने का चलन है पर कभी कभी दूसरी में भी लिखते हैं, इस शेर में अकसर ग़ज़ल का कथ्य भी होता है :
अतः मक्ता"
मिसरा-ये-उला= अलग अलग भाव उपरोक्त लय में ही, + तखल्लुस
मिसरा-ये-सानी= उपरोक्त पंक्ति का समापन भाव उसी लय में +काफिया+रदीफ़

ग़ज़ल में कम से कम ५ शेर ओने चाहिए, अधिकतम के लिए कई विवाद हैं किसी ने १९ तो किसी ने २७ शेर तक कहा है कुंअर बेचैन के अनुसार "ग़ज़ल में शेरों की संख्या विषम अर्थात दो की संख्या से न कटने वाल होनी चाहिए. जैसे -5,7,9,11 आदि,. आजकल के शायर इस रूढ़ि को भी तोड़ रहे हैं. उनका कहना है कि संख्या की कोई पाबन्दी ग़ज़ल में नहीं होनी चाहिये, दुष्यंत के बहुचर्चित ग़ज़ल संग्रह साये में धूप' में संकलित 52 ग़ज़लों में से 22 ग़ज़लों में शेर सम संख्या में हैं. शेरों की संख्या विषम होने की परम्परागत धारणा को नये ग़ज़लकारों ने नकार दिया है. शेरों की संख्या सम होने से ग़ज़ल की प्रभावोत्पादकता में कोई कमी नहीं आती, किन्तु ग़ज़ल में पांच शेर अवश्य होना चाहिये अन्यथा वह भाव सम्पूर्णता भी दृष्टि से अधूरी सी प्रतीत होती है.

श्री राम नरेश त्रिपाठी ने शेर के सम्बन्ध में अपने विचार व्यक्त करते हुए लिखा है "यह अरबी भाषा का शब्द है. इसका शाब्दिक अर्थ केश या बाल हैं. जिस प्रकार किसी तरूणी की सुन्दरता का शब्द है. जिस प्रकार किसी तरूणी की सुन्दरता की अभिवृद्धि में केश सहायक होते हैं वैसे ही किसी ग़ज़ल रूपी सुन्दी के लिये शेर उसके केश सदृश हैं. इन्हें ग़ज़ल की आधारित इकाई भी कह सकते हैं जिनके सहारे ग़ज़ल रूपी इमारत खड़ी की जा सकती है.

प्रत्येक शेर में दो मिसरे होते हैं और इन मिसरों को तीन भागो में इस प्रकार विभाजित किया जा सकता है-

मिसरा-ए-उला - सदर/ हश्व/ अरूज

मिसरा-ए-सानी - इब्तिदा/ हश्व/ जरब या इजज

ग़ज़ल लेखन में पहले शेर की दूसरी पंक्ति लिखी जाती है, तत्पश्चात पहली पंक्ति , अतः दूसरी पंक्ति के पहले भाग को इब्तिदा कहते हैं जिसका अर्थ हुआ प्रारम्भ. हश्व का तात्पर्य है अनावश्क या खानापूर्ति के लिये.

भाग-२ मतला और मक्ता

मतला अरबी भाषा का पुल्लिंग शब्द है. जिसका आशय है-उदयस्थल, ग़ज़ल का पहला शेर, अर्थात् ग़ज़ल के पहले दो मिसरों के संयोग को मतला कहते हैं. इसकी प्रत्येक पंक्ति में काफिया वा रदीफ दोनों मिलते हैं. ग़ज़ल के अन्य किसी शेर में ऐसा संयोग नहीं मिलता. उनकी द्वितीय पंक्ति में ही काफिया व रदीफ होते हैं. मतले के बाद यदि सानी मतलला हो तो उसमें भी मतले की तरह काफिया, रदीफ का निर्वाह होता है. गालिब की इसग़ज़ल यह पूर्णतः स्पष्ट हो जायेगा-

कहते हो न देंगे हम दिल अगर पड़ा पाया.
दिल कहां कि गुम कीजे हमने मुद्दआ पाया. |1|
इश्क से तबीयत ने जीस्त का मजा पाया.

दर्द की दबा पाई, दर्दे-लादवा पाया.|२|
गुंचा फिर लगा खिलने आज हमने अपना दिल
खूं किया हुआ देखा, गुम किया हुआ पाया.|३|
हाले-दिल नहीं मालुम लेकिन इस कदर पाया.
हमने बारहा ढूंढ़ा, तुमने बारहा पाया.|४|

इस ग़ज़ल में पाया शब्द रदीफ़ हुआ क्योंकि यह प्रत्येक शेर में अंत में है जैसा की ऊपर बताया गया , रदीफ़ के पहले हर शेर में आ की मात्रा काफिया हुई क्योंकि प्रत्येक शेर के अंत में आ की मात्रा के बाद ही पाया है, इस शेर में प्रथम दो शेर में मिसरा-ये-उला और मिसराये-सानी दोनों में काफिया और रदीफ़ है अतः दोनों शेर मतला के हुए पहल मतला दूसरा सानी मतला मक्ता अरबी भाषा का शब्द है. जिसका अर्थ है-कटा हुआ, विच्छिन्न यह ग़ज़ल का अखिरी शेर होता है. अरबी, फारसी व उर्दू परम्परा के अधिकांश शायरों ने इस तथ्य की पहचान कराने के लिये, कि यहां ग़ज़ल पूर्ण होती है और इसके पश्चात अन्य कोई शेर नहीं है. मक्ते में अपने उपनाम (तखल्लुस) का प्रयोग किया है. यों आज भी कुछ-शायर इस परम्परा का औपचारिक निर्वाह कर रहे हैं. अर्थाथतः यदि मक्ते में तखल्लुस का प्रयोग न किया जाये तो मक्ते की पहचान कर पाना बेहद कठिन होगा क्योंकि शेरों को उत्कृष्ता की दृष्टि से बढते हुए क्रम में रखा जाता है, इस कारण मक्ते को ग़ज़ल का सर्वश्रेष्ठ शेर बनाने का हर संभव प्रयास ग़ज़लकारों ने किया है. किन्तु ग़ज़ल में बाद का कोई भी अच्छा शेर मक्ता होने का सूचक नहीं है क्योंकि उसके बाद और अच्छा शेर हो सकता है. तखल्लुस के प्रयोग का महत्व इसी कारण है कि वह ग़ज़ल की अंतिम कड़ी होने की सूचना देता है. उदाहरणार्थ-

कहानी दर्द की कल पर उठा रखो तांबा’
थकी हुई है बहुत रात सो गई होगी.

यहां ग़ज़ल के अन्तिम शेर की पहली पंक्ति में तांबा’ कवि का उपनाम है, यथपि ग़ज़लकार उसे द्वितीय पंक्ति में भी रख सकता था. प्रारम्भ में उपनाम प्रयोग करने के संभवतः तीन उद्देश्य रहे होंगे-

1-ग़ज़ल के रचयिता कवि से परिचय कराना.

2-ग़ज़ल समाप्ति की सूचना देना.

3-ग़ज़लकार की शायरी के स्तर को स्पष्ट करना. चूंकि मक्ते में तखल्लुस का उपयोग शायर के लिये कठिन चुनौती होता था.
पूर्ववर्ती शायर मक्ते में अपने तखल्लुस का प्रयोग इस ढंग से करते थे कि वह शेर का एक आवश्यक भाग प्रतीत होता था. ये तीन शेर देंखे-

१. *"पूछते हैं वो कि गालिब कौन है*
कोई बतलाओं कि हम बतलाएं क्या?-गालिब

२. *कोई नामो-निशां पूछे तो ए कासिद बता देना*
तखल्लुस दाग है वो आशिकों के दिल में रहते हैं.-दाग

3.बातों बातों में किसी ने कह दिया मुझको अजीज'
उम्र भर की मुश्किलें पल भर में आसां हो गई"-अजीज

उपर्युक्त तीनों शेरों में शायरों का अपने तखल्लुस का प्रयोग आनुषंगिक व सार्थक है. यह विशेषता आजकल देखने में नहीं आती.

भाग-3 क़ाफ़िया और रदीफ

काफिया अरबी भाषा का पुल्लिंग शब्द है जिसके अर्थ हैं "पीछे चलने वाला, पे दर पे (लगातार) आने वाला, इल्मे अरूज में रदीफ से पहले का लफ्ज" हिन्दी में इसे अंत्यानुप्रास या तुक तथा अंग्रेजी में राइम' कहा जा सकता है. ग़ज़ल की शास्त्रीय संरचना में काफिया शब्द का प्रयोग शब्दों के उस समूह के लिये किया जाता है, जो मतले के दोनों मिसरों तत्पश्चात् प्रत्येक शेर के दूसरे मिसरे में रदीफ से पूर्व नियत स्थान पर आते हैं व समान ध्वनि से उच्चारित किये जाते हैं. उदाहरण के लिये यह ग़ज़ल दृष्यव्य है-

क्या जाने कब कहां से चुराई मेरी ग़ज़ल
उस शोख ने मुझो को सुनाई मेरी ग़ज़ल.

पूछो जो मैंने उससे कि है कौन खुशनसीब
आंखों से मुस्कुरा के लगाई मेरी ग़ज़ल.
एक एक लफ्ज बन के उड़ा धुंआ धुंआ
उसने जो गुनगुना के सुनाई मेरी ग़ज़ल.
हर एक शख्स मेरी ग़ज़ल गुन गुनाए है
राही तेरी जुबां पे न आई मेरी ग़ज़ल == सैयदराही

यहां पर चुराई, सुनाई, लगाई, सुनाई, आई काफिये के शब्द हैं, जो मतले के दोनों मिसरों तत्पशचात् प्रत्येक शेर से दूसरे मिसरे में रदीफ से पूर्व अपनी सुनिश्चत जगह पर स्थित हैं. यह सभी शब्द हम काफिया कहलायेंगे क्योंकि यह एक ही काफिये के अन्तर्गत आते हैं. हम काफिया के अन्तिम एक या एक से अधिक अक्षर समान होते हैं किन्तु यह आवश्यक भी नहीं है. क्योंकि काफिये में व्यंजन से अधिक स्वर की समानता पर बल दिया जाता है. काफिया मात्र स्वर पर भी आधारित हो सकता है जिसमंे आ,ई, ऊ, ए, औ स्वर का निर्वाह किया गया हो जैसे-

दर्द सीने से उठा आंख से आंसू निकले
रात आई तो ग़ज़ल कहने के पहलू निकले
दिल का हर दर्द यूं शेरों में उभर आया है
जैसे मुरझाए हुए फूल से खुशबू निकले
जब भी बिछड़ा है कोई शख्स तेरा ध्यान आया
हर नये गम से तेरी याद के पहलू निकले
अश्क उमड़े तो सुलगने लगीं पलकें राशिद'
खुश्क पत्तों को जलाते हुए जुगनू निकले == मुमताज राशिद

यहां काफिया ऊ' स्वर पर आधारित है. वास्तव में काफिया जो भी हो उसे ग़ज़ल के मतले में स्पष्ट कर देना चाहिए क्योंकि मतले के बाद काफिया बदलने को दस्ताद शायरों ने अनुचित माना है.

अरबी फारसी में काफिये के नौ हर्फ (अक्षर) निश्चित है जो इस प्रकार है- (1) तासीस (2) दुखैल (3) कैद (4) रिद्फ (5) रवी (6) वस्ल (7) मजीद (8) खुरूज (9) नायरा.

वास्तव में काफ़िये का असली हर्फ रवी है. पहले चार रवी से पूर्व आते हैं और हरूफे असली कहलाते हैं तथा बाद में चार हर्फ रवी के बाद आते हैं और हरूये वसली कहलाते हैं. काफिये में रवी का होना बहुत आवश्यक है बाकी आठ हर्फ में से कुछ भी हो सकते हैं और नहीं भी. इन नौ हर्फों से संबंधित सभी कायदे कानून अरबी-फारसी भाषा व लिपि पर आधारित हैं जिन्हें ज्यों का त्यों हिन्दी भाषा में लागू नहीं किया जा सकता है. (यों जिज्ञासुओं के लिए इनकी जानकारी इस अहयाय के अंत में पृथक से दी गई है) ग़ज़ल के प्रत्येक शेर में काफिये के बाद आने वाला शब्द या शब्द समूह रदीफ कहलाता है और यह पूरी ग़ज़ल मंे अपरिवर्तित रहता है. जिस तरफ से आए थे किधर चले. ख्वाजा मीरदर्द यहां पर चले' शब्द को ग़ज़ल में आदि से अंत तक काफिये के पश्चात् दोहराया गया है. अतः चले इस ग़ज़ल की रदीफ कहलायेगी. रदीफ एक शब्द की भी हो सकती है और एक से अधिक शब्दों की भी.. लम्बी रदीफों का प्रयोग, उर्दू शायरी के मध्य युग की विशेषता रही है. या परम्परा में अब भी ऐसी ग़ज़लें कही जा रही है. रदीफ ग़ज़ल का अनिवार्य अंग नहीं है. बिना रदीफ की गज़लें भी कहीं गई हैं इन्हें गैर मुरदिद्फ ग़ज़ल कहा जा सकता है. उदाहरण के लिए देखें मीर साहब की एक ग़ज़ल :

मौसम से निकले शाखों से पत्ते हरे-हरे
पौधे चमन में फूलों से देखे भरे-भरे
आगे किस के क्या करें दस्ते तमअ दराज
वह हाथ सो गया है सिरहाने धरे-धरे
मरता था मैं तो बाज रखा मरने से मुझे
यह कहके कोई ऐसा करे है अरे-अरे
गुलशन में आग लग रही थी रंग-गुल से मीर'
बुल बुल पुकारी देख के साहब परे-परे

यहां दोहरा काफिया है परन्तु रदीफ अनुपस्थित है. रदीफ से शेर में वजन व ग़ज़ल की प्रभावोत्पादकता में वृद्धि होती है. इससे इंकार नहीं किया जा सकता, यह मतले की दोनों पंक्तियों तथा प्रत्येक शेर की दूसरी पंक्ति में काफिये के बाद ही प्रयुक्त होती है.

भाग-४ बहर

बहर अरबी भाषा का पुल्लिंग शब्द है, हिन्दी में इसके लिए छंद तथा अंग्रेजी भाषा में मीटर शब्द पर्यायबाची है. ग़ज़ल के मिसरे जिस वजन पर आधारित होते हैं उसे ही बहर कहते हैं. जैसे हिन्दी एवं संस्कृत की छंदोबद्ध कविता में विभिन्न छंदों का प्रयोग किया जाता है वैसे ही ग़ज़लें भी विभिन्न बहरों में कही जाती हैं, बहर में वर्ण, मात्रा, लय, गति, यति का ध्यान रखा जाता है. बहर वर्ण और मात्रा मेसे सजी निश्चित क्रम में लिखी एक लय का नाम है और लय स्वयं में ही एक संयत व्यवस्था है, जिसका जन्म स्वरों के आरोह-अवरोह से होता है. उच्चारण की मंदता एवं तीव्रता तथा इन दोनों का विशेष क्रम ही लय की उत्पत्ति का प्रमुख साधन है. बहर की पाबंदी के कारण ही ग़ज़ल में संगीतात्मकता का गुण आ जाता है जिसके फलस्वरूप उसे अच्छे ढंग से गाया जा सकता है जिससे कि गति का क्रम ठीक बना रहे. यति का विधान भी किया गया है. पंक्ति पढ़ते समय सांस के टूटने के क्रम के अनुसार स्थान स्थान पर विश्राम लेना पड़ता है इसी विश्राम को यति कहते है. इस प्रकार गति और यति के संयोग से तथा इस संयोग को दृष्टि में रखकर बहरों का निर्माण हुआ है. बहर का पालन करने में मात्राओं की गिनती तो होती है साथ ही यति का विचार भी होता है. जिससे वज़न के नीचे वज़न आता है. जैसे वर्णिक छंदों में गुण वर्ण के नीचे गुरू, लघु के नीचे लघु आते हैं. ग़ज़ल में यद्यपि ऐसा नहीं होता फिर भी ग़ज़ल के अन्तःलय को साकार करने के लिये उसके समान मात्राओं के वर्ण समुदायों पर यति अवश्य आती है| ग़ज़ल की बहरों का मूल उद्गम अरवी भाषा में मिलता है हिन्दी भाषा में यह ग़ज़ल विधा के साथ साथ क्रमशः फारसी, उर्दू से होती हुई सामने आयीं. अल्लास अखलाक साहब देहलवी ने अपनी पुस्तक फनए-शायरी में बहरों

का विस्तृत वर्णन किया है. इस आधार पर ग़ज़ल की मूल बहरों का निम्न तालिका द्वारा समझा जा सकता है. इनमें से आठ मूल बहरें तथा शेष 12 मिश्रित बहरे हैं जिन्हें मूल बहरों के रूकनों के सम्मिश्रण से तैयार किया गया है. ये इस प्रकार हैं,

मूल बहरें-

इन बहरों को जानने के पूर्व हम इन रुक्न को जानें, जैसे हिंदी छंद विधा में गण होते हैं वैसे ही उर्दू में उन्हें रुक्न कहते हैं ये निश्चित क्रम में अक्षरों का गठन है जो लघु गुरु के द्वारा रचित है,

क्रम	नाम	रुक्न	संख्या	अविष्कारक	रुक्न का गठन
१	**हज़ज़**	मुफैलुन	८ बार	खालिल बिन अहमद	१-२-२-२
२	**रज़ज़**	मुस्त्फ़इलुन	८ बार	खालिल बिन अहमद	२-२-१-२
3	**रमल**	फाइलातुम	८ बार	खालिल बिन अहमद	२-१-२-२

४	**मुतकारिब**	फऊलून	८ बार	खालिल बिन अहमद	१-२-२
५	**कामिल**	मुतफ़ाइलुन	८ बार	खालिल बिन अहमद	१-१-२-१-२
६	**वाफिर**	मफैलातुन	८ बार	खालिल बिन अहमद	१-२-१-१-२
७	**मुतदारिक**	फ़ाइलून	८ बार	अबुल हसन	२-१-२
८	**मुक्तज़िब**	मफउलात	८ बार	-	२-२-२-१

[कक] उप रुक्न (अधिस्वरक) :-

जब मूल रुक्न (मूल स्वरक) के मात्राक्रम में कुछ परिवर्तन (ज़ेहाफ़) कर नया मात्राक्रम बनाया जाता है तो उसे उप रुक्न (अधिस्वरक) कहते हैं जैसे

मूल स्वरक	मात्राक्रम	अधिस्वरक	मात्राक्रम

मुफैलुन	१-२-२	**फैलुन**	२-२
मुफैलून	१-२-२	**फअल**	१-२
मुफाईलून	१-२-२-२	**मुफायलून**	१-२-१-२
मुफाईलून	१-२-२-२	**मुफाईलू**	१-२-२-१
फाइलातुन	२-१-२-२	**फयलातुन**	१-१-२-२

(ब) मिश्रित बहरें-

क्रम	नाम	अरकान	आविष्कारक
१	**मुनसिरह**	मुस्तफइलुन मफऊलात मुस्तफइलुन मफऊलात	खलीलबिन अहमद
२	**मुजारिअ**	मुफाइलुन, फाइलातुन मुफाइलुन फाइलातुम	खलीलबिन अहमद
3	**सरीअ**	मुस्तफाइलुन मुस्तफइलुन मफऊलात	खलीलबिन अहमद
४	**खफीफ**	फाइलातुन मुस्तफाइलुन फाइलुन	खलीलबिन अहमद
५	**मुज्तस**	मुस्तफइलुन फाइलातुन मफऊलात फाइलातुन	खलीलबिन अहमद
६	**मुक्तजब**	मफऊलात मुस्तफइलुन मफऊलात मुस्तफइलुन	खलीलबिन अहमद
७	**तवील**	फइलुन मुफाइलुन फइलुन मुफाइलुन	खलीलबिन अहमद
८	**मदीद**	फाइलातुन फाइलुन फाइलातुन फाइलुन	खलीलबिन अहमद
९	**बसीत**	मुस्तफाइलुन फाइलुन मुस्तफाइलुन फाइलुन	खलीलबिन अहमद

१०	**जदीद**	फाइलातुन फाइलातुन मुस्तफाइलुन	बजर चमहर
११	**करीब**	मुफाइलुन मुफाइलुन फाइलातुन	युसूफ नेशापुरी
१२	**मुशालातुन**	फाइलातुन फाइलातुन मुफाइलुन	अज्ञात

(1) मूल बहरों के सामने दिये रूक्न एक शेर में आठ बार अर्थात एक मिसरे में चार बार आयेंगे. जैसे हजज बहर का वजन होग. एक मिसरे में-मुफाइलुन मुफाइलुन मुफाइलुन मुफाइलुन

(2) मिश्रित बहरों के सामने दिये हुए अर्कान एक शेर में दो बार अर्थात एक मिसरे में एक बार आयेंगे जैसे मनसिरह बहर में एक मिसरे का वजन होगा-मुस्तफाइलुन मफऊलात मुस्तफाइलुन मफऊलात.

(3) मूल बहरों में वाफिर तथा मिश्रित बहरों में तवील, मबीद व बसीत विशेषतः अरबी भाषा के लिये थीं. इसी प्रकार जदीद, करीब, मुशाकुल मिश्रित बहरें खास तौर से फारसी के लिये रहीं.

इन प्रारम्भिक बीस बहरों में से अरबी के लिये विशेषतः निर्मित चार बहरों को छोड़कर शेष फारसी में प्रचलित हुई. इन बहरों में रूक्न की आधुनिकता बढ़ते-बढते 35-36 तथा बाद में छियात्तर तक जा पहुंची. चूंकि यह संख्या बृद्धि रूक्न के मूल स्वरूप में परिवर्तित रूप की वजह से अर्कान भिन्न होने के कारण संभव हुई अतः इन बहरों को परिवर्तित बहरें नाम दिया जा सकता है. (रूक्न के स्वरूप में परिवर्तन की प्रकिक्रया जेहाफ व इस प्रक्रिया से निर्मित बहरों की मुजाहिफ बहरें कहा गया है). उपर्युक्त उन्नीस बहरों के अतिरिक्त, परिवर्तित बहरें जो कि प्रारम्भ में 57 थीं.

भाग -५ गेयता

अरबी शायरी में प्रशस्ति में गाये जाने बाले कसीदों के प्रारम्भिक अंश को ग़ज़ल

कहा गया है इस प्रकार ग़ज़ल का उद्गम श्रोत यदि एक और कसीदा है तो दूसरी और गायन भी |

ग़ज़ल अपने शैशब काल से ही विरह गीत के रूप में उभर कर सामने आई व गाई जाती रही तथा राजदरबारों में मनोरंजन के साधन रूप में इसका उपयोग होता रहा. ग़ज़ल के मूल स्वभाव के अनुरूप चूंकि इसमें प्रिय के मिलन या विछोह की मार्मिक घटनायें अंकित होती हैं, अतः इनका प्रभाव गाये जाने से जितना अधिक हो सकता है उतना सहज ढंग से कहने में नहीं. इस कारण भी गैयता ग़ज़ल के लिये आवश्यक मानी गई. गेयता के लिए लय की उचित योजना बहुत जरूरी है इसीलिये अरबी फारसी की बहरें जो मात्राओं या वर्णों पर आश्रित होने के बजाय लयखण्डों पर आधारित हैं अधिक अनुकूल है. इन लय खण्डों में स्वर के उतार चढ़ाव की विशेष व्यवस्था विधमान रहती है, जिससे उच्चारण में असुविधा न हो और ग़ज़ल गैयता बनी रही. ग़ज़ल का प्रत्येक मिसरा एक निश्चित क्रम बद्ध लय पर निर्मित होता है. भाषा की सरलता, भावों की कोमलता व कर्ण-प्रिय शब्दों का चयन ग़ज़ल को गेय बनाता है. गेयता ग़ज़ल का स्वभाव भी है और उसकी आत्मा भी. निश्चित ही गेयता से ग़ज़ल की प्रभावोत्पादकता में वृद्धि होती है.

ग़ज़ल में गेयता मुख्य होने के कारन यहाँ वज़न में कभी कभी छुट भी ली जाती रही है, मात्राओं को गिराने का भी प्रचालन है जो की हिंदी छंद शास्त्र में नहीं है, दूसरी बात गेयता के लिए ग़ज़लों में दीर्घ को दो लघु में भी लिया जाता रहा है, जो की गायकी में जंच सके, एक मुख्य बात जो हिंदी छंद की मात्राओं की गणना और उर्दू की वज़न की गणना में है वह यह है की उर्दू में जैसा बोलते हैं या उच्चारण करते हैं वैसा ही मात्राक्रम गिनाते भी हैं जबकि हिंदी में जैसा लिखते हैं वैसे ही मात्रा को गिनते हैं, उदहारण स्वरुप दोस्ती में हिंदी में २-२ गिनी जायगी जबकि उर्दू में २-१-२ गिनी जायगी क्योंकि इसका उच्चारण दो-स-ती होता है |

ग़ज़ल रचना में शिल्प संबंधी सारी कसरत केवल ग़ज़ल को गेय बनाने के लिए ही है, चाहे वह बहर का निर्वाह हो या काफिये का अनुशासन, शब्द को कोमल बनाकर प्रयोग करने की प्रवृत्ति तथा हस्व ध्वनि को दीर्घ या दीर्घ ध्वनि को हस्व के रूप में ऊच्चारित करने की विवशता का मूल कारण भी यही है. ग़ज़ल मूलतः गेय काव्य है

और इन सभी प्रयत्नों का एक मात्र उद्देश्य ग़ज़ल की गेयता प्रदान करना है. ग़ज़ल के संदर्भ में गेयता के महत्व को किसी भी युग में नकारा नहीं गया. गेयता ग़ज़ल का प्राण तत्व समझी जाती है. अरबी फारसी और उर्दू ग़ज़ल परम्परा में ग़ज़ल को गेय बनाने के लिये उच्चारण के समय शब्दों में कुछ तब्दीलियां की जाती रही है. जैसे मेरा तेरा को मिरा, तिरा तथा निगाह व गुनाह आदि को क्रमशः निगह, गुनह कहना. ए स्वर को अ या इ, औ को उ (जैसे कोहरा को कुहरा) कहने का कारण लय को स्थायित्व प्रदान करना है. जिससे कि ग़ज़ल में गेयता के गुण को अक्षुण्ण रखा जा सके|

ग़ज़ल को जानें –

===सतपाल ख्याल

ग़ज़ल क्या है, **अरूज** क्या है ये सब बाद में पहले हम **"शब्द"** पर चर्चा करेंगे कि शब्द क्या है? शब्द एक ध्वनि है, एक आवाज़ है, शब्द का अपना एक आकार होता है, जब हम उसे लिखते हैं , लेकिन जब हम बोलते हैं वो एक ध्वनि मे बदल जाता है, तो शब्द का आकार भी है और शब्द निरकार भी है और इसी लिए शब्द को परमात्मा भी कहा गया जो निराकार भी है और हर आकार भी उसका है. तो शब्द साकार भी है और निराकार भी. हमारा सारा काव्य शब्द से बना है और शब्द से जो ध्वनि पैदा होती है उस से बना है संगीत अत: हम यह कह सकते हैं कि काव्य से संगीत और संगीत से काव्य पैदा हुआ, दोनों एक दुसरे के पूरक हैं. काव्य के बिना संगीत और संगीत के बिना काव्य के कल्पना नही कर सकते. और हम काव्य को ऐसे भी परिभाषित कर सकते हैं कि वो शब्द जिन्हें हम संगीत मे ढाल सकें वो काव्य है तो ग़ज़ल को भी हम ऐसे ही परिभाषित कर सकते हैं कि काव्य की वो विधा जिसे हम संगीत मे ढाल सकते हैं वो गजल है. ग़ज़ल का शाब्दिक अर्थ चाहे कुछ भी हो अन्य विधाओं कि तरह ये भी काव्य की एक विधा है .हमारा सारा काव्य, हमारे मंत्र, हमारे वेद सब लयबद्ध हैं सबका आधार छंद है.

अब संगीत तो सात सुरों पर टिका है लेकिन शब्द या काव्य का क्या आधार है ? इसी प्रश्न का उत्तर हम खोजेंगे.

हिंदी काव्य शास्त्र का आधार तो पिंगल या छंद शास्त्र है लेकिन ग़ज़ल क्योंकि सबसे पहले फ़ारसी में कही गई इसलिए इसका छंद शास्त्र को इल्मे-अरुज कहते हैं. एक बात आप पल्ले बाँध लें कि बिना बहर के ग़ज़ल आज़ाद नज़्म होती है ग़ज़ल कतई नहीं और आज़ाद नज़्म का काव्य में कोई वजूद नहीं है. हम शुरु करते हैं वज़्न से. सबसे पहले हमें शब्द का वज़्न करना आना चहिए. उसके लिए हम पहले शब्द को तोड़ेंगे, हम शब्द को उस अधार पर तोड़ेंगे जिस आधार पर हम उसका उच्चारण करते हैं. शब्द की सबसे छोटी इकाई होती है वर्ण. तो शब्दों को हम वर्णों मे तोड़ेंगे. वर्ण वह ध्वनि हैं जो किसी शब्द को बोलने में एक समय मे हमारे मुँह से निकलती

है और ध्वनियाँ केवल दो ही तरह की होती हैं या तो लघु (छोटी) या दीर्घ (बड़ी). अब हम कुछ शब्दों को तोड़कर देखते है और समझते हैं, जैसे:

"आकाश"

ये तीन वर्णो से मिलकर बना है.

आ+ का+श.

आ: ये एक बड़ी आवाज़ है.

का: ये एक बड़ी आवाज़ है

श: ये एक छोटी आवाज़ है.

और नज़र(न+ज़र)

न: ये एक छोटी आवाज़ है

ज़र: ये एक बड़ी आवाज़ है.

छंद शास्त्र मे इन लंबी आवाज़ों को गुरु और छोटी आवाजों को लघु कहते है और लंबी आवाज के लिए "s" और छोटी आवाज़ के लिए "l" का इस्तेमाल करते हैं. इन्हीं आवाजों के समूह से हिंदी में गण बने. फ़ारसी में लंबी आवाज़ या गुरु को मुतहर्रिक और छोटी या लघु को साकिन कहते हैं .इसी आधार पर हिंदी में गण बने और इसी आधार पर फ़ारसी मे अरकान बने.यहाँ हम लघु और गुरु को दर्शने के लिए 1 और 2 का इस्तेमाल करेंगे.जैसे:

सितारों के आगे जहाँ और भी हैं.

पहले इसे वर्णों मे तोड़ेंगे. यहाँ उसी अधार पर इन्हें तोड़ा गया जैसे उच्चारण किया जाता है.

सि+ता+रों के आ+गे ज+हाँ औ+र भी हैं.अब छोटी और बड़ी आवाज़ों के आधार पर या आप कहें कि गुरु और लघु के आधार पर हम इन्हें चिह्नित कर लेंगे. गुरु के लिए "2 " और लघु के लिए " 1" का इस्तेमाल करेंगे.

जैसे:

सि+ता+रों के आ+गे य+हाँ औ+र भी हैं.

(1+2+2 1 + 2+2 1+2+2 +1 2 + 2)

अब हम इस एक-दो के समूहों को अगर ऐसे लिखें.

122 122 122 122

तो ये 122 क समूह एक रुक्न बन गया और रुक्न क बहुवचन अरकान होता है. इन्ही अरकनों के आधार पर फ़ारसी मे बहरें बनीं.और भाषाविदों ने सभी सम्भव नमूनों को लिखने के लिए अलग-अलग बहरों का इस्तेमाल किया और हर रुक्न का एक नाम रख दिया जैसे फ़ाइलातुन अब इस फ़ाइलातुन का कोई मतलब नही है यह एक निरर्थक शब्द है. सिर्फ़ वज़्न को याद रखने के लिए इनके नाम रखे गए.आप इस की जगह अपने शब्द इस्तेमाल कर सकते हैं जैसे फ़ाइलातुन की जगह "छमछमाछम" भी हो सकता है, इसका वज़्न (भार) इसका गुरु लघु की तरतीब.
ये आठ मूल अरकान हैं , जिनसे आगे चलकर बहरें बनीं.

फ़ा-इ-ला-तुन (2-1-2-2)

मु-त-फ़ा-इ-लुन(1-1-2-1-2)

मस-तफ़-इ-लुन(2-2-1-2)

मु-फ़ा-ई-लुन(1-2-2-2)

मु-फ़ा-इ-ल-तुन (1-2-1-1-2)

मफ़-ऊ-ला-त(2-2-2-1)

फ़ा-इ-लुन(2-1-2)

फ़-ऊ-लुन(1-2-2)

अब भाषाविदों ने यहाँ कुछ छूट भी दी है आप गुरु वर्णों को लघु में ले सकते हैं जैसे मेरा (22) को मिरा(12) के वज्न में, तेरा(22) को तिरा(12) भी को भ, से को स इत्यादि. और आप बहर के लिहाज से कुछ शब्दों की मात्राएँ गिरा भी सकते हैं और हर मिसरे के अंत मे एक लघु वज़्न में ज्यादा हो सकता है. अनुस्वर वर्णों को गुरु में गिना जाता है जैसे:बंद(21) छंद(21) और चंद्र बिंदु को तकतीअ में नहीं गिनते जैसे: चाँद (21)संयुक्त वर्ण से पहले लघु को गुरु मे गिना जाता है जैसे:

सच्चाई (222)

अब फ़ारसी मे 18 बहरों बनाई गईं जो इस प्रकार है:

1.**मुतकारिब**(122x4) चार फ़ऊलुन

2.**हज़ज**(1222x4) चार मुफ़ाईलुन

3.**रमल**(2122x4) चार फ़ाइलातुन

4.**रजज़**:(2212) चार मसतफ़इलुन

5.**कामिल**:(11212x4) चार मुतफ़ाइलुन

6 **बसीत:(**2212, 212, 2212, 212)मसतलुन फ़ाइलुनx2

7तवील:(122, 1222, 122, 1222) फ़ऊलुन मुफ़ाईलुन x2

8.**मुशाकिल**:(2122, 1222, 1222) फ़ाइलातुन मुफ़ाइलुन मुफ़ाइलुन

9. **मदीद** : (2122, 212, 2122, 212) फ़ाइलातुन फ़ाइलुनx2

10. **मजतस**:(2212, 2122, 2212, 2122) मसतफ़इलुन फ़ाइलातुनx2

11.**मजारे:(**1222, 2122, 1222, 2122) मुफ़ाइलुन फ़ाइलातुनx2 सिर्फ़ मुज़ाहिफ़ सूरत में.

12 **मुंसरेह** :(2212, 2221, 2212, 2221) मसतफ़इलुन मफ़ऊलात x2 सिर्फ़ मुज़ाहिफ़ सूरत में.

13 **वाफ़िर :** (12112 x4) मुफ़ाइलतुन x4 सिर्फ़ मुज़ाहिफ़ सूरत में.

14 **क़रीब** (1222 1222 2122) मुफ़ाइलुन मुफ़ाइलुन फ़ाइलातुन सिर्फ़ मुज़ाहिफ़ सूरत में.

15 **सरीअ** (2212 2212 2221) मसतफ़इलुन मसतफ़इलुन मफ़ऊलात सिर्फ़ मुज़ाहिफ़ सूरत में.

16 **ख़फ़ीफ़:(**2122 2212 2122) फ़ा

ख़फ़ीफ़:(2122 2212 2122) फ़ाइलातुन मसतफ़इलुन फ़ाइलातुन सिर्फ़ मुज़ाहिफ़ सूरत में .

17 जदीद: (2122 2122 2212) फ़ाइलातुन फ़ाइलातुन मसतफ़इलुन सिर्फ़ मुज़ाहिफ़ सूरत में.

18 मुक़ातज़ेब (2221 2212 2221 2212) मफ़ऊलात मसतफ़इलुनx2 सिर्फ़ मुज़ाहिफ़ सूरत में.

19. रुबाई

यहाँ पर रुककर थोड़ा ग़ज़ल की बनावट के बारे में भी समझ लेते हैं.

ग़ज़ले के पहले शे'र को मतला , अंतिम को मकता जिसमें शायर अपना उपनाम लिखता है. एक ग़ज़ल मे कई मतले हो सकते हैं और ग़ज़ल बिना मतले के भी हो सकती है. ग़ज़ल में कम से कम तीन शे'र तो होने ही चाहिए. ग़ज़ल का हर शे'र अलग विषय पर होता है एक विषय पर लिखी ग़ज़ल को ग़ज़ले-मुसल्सल कहते हैं. वह शब्द जो मतले मे दो बार रदीफ़ से पहले और हर शे'र के दूसरे मिसरे मे रदीफ़ से पहले आता है उसे क़ाफ़िया कहते हैं. ये अपने हमआवाज शब्द से बदलता रहता है.क़ाफ़िया ग़ज़ल की जान(रीढ़)होता है. एक या एकाधिक शब्द जो हर शे'र के दूसरे मिसरे मे अंत मे आते हैं, रदीफ़ कहलाते हैं. ये मतले में क़ाफ़िए के बाद दो बार आती है. बिना रदीफ़ के भी ग़ज़ल हो सकती है जिसे ग़ैर मरद्दफ़ ग़ज़ल कहते हैं.पुरी ग़ज़ल एक ही बहर में होती है. बहर को जानने के लिए हम उसके साकिन और मुतहर्रिक को अलग -अलग करते हैं और इसे तकतीअ करना कहते हैं.बहर के इल्म को अरुज़(छन्द शास्त्र) कहते हैं और इसका इल्म रखने वाले को अरुज़ी(छन्द शास्त्री).यहाँ पर एक बात याद आ गई द्विज जी अक्सर कहते हैं कि ज़्यादा अरूज़ी होने शायर शायर कम आलोचक ज़्यादा हो जाता है. बात भी सही है शायर को ज़्यादा अरुज़ी होने की ज़रुरत नहीं है उतना काफ़ी है जिससे ग़ज़ल बिना दोष के लिखी जा सके. बाकी ये काम तो आलोचकों का ज्यादा है. यह तो एक महासागर है अगर शायर इसमें डूब गया तो काम गड़बड़ हो जाएगा.

अब एक ग़ज़ल को उदाहरण के तौर पर लेते हैं और तमाम बातों को फ़िर से समझने की कोशिश करते हैं.द्विज जी
की एक ग़ज़ल है :

अँधेरे चंद लोगों का अगर मक़सद नहीं होते
यहाँ के लोग अपने आप में सरहद नहीं होते
न भूलो, तुमने ये ऊँचाईयाँ भी हमसे छीनी हैं
हमारा क़द नहीं लेते तो आदमक़द नहीं होते
फ़रेबों की कहानी है तुम्हारे मापदण्डों में
वगरना हर जगह बौने कभी अंगद नहीं होते
तुम्हारी यह इमारत रोक पाएगी हमें कब तक
वहाँ भी तो बसेरे हैं जहाँ गुम्बद नहीं होते

चले हैं घर से तो फिर धूप से भी जूझना होगा
सफ़र में हर जगह सुन्दर-घने बरगद नहीं होते.
अब इस ग़ज़ल में पाँच अशआर हैं.
यह शे'र मतला (पहला शे'र) है:
अँधेरे चन्द लोगों का अगर मक़सद नहीं होते
यहाँ के लोग अपने आप में सरहद नहीं होते
मक़सद, सरहद, बरगद इत्यादि ग़ज़ल के क़ाफ़िए हैं.
"नहीं होते" ग़ज़ल की रदीफ़ है
"मक़सद नहीं होते" "सरहद नहीं होते" ये ग़ज़ल की ज़मीन है.
चले हैं घर से तो फिर धूप से भी जूझना होगा
सफ़र में हर जगह सुन्दर-घने बरगद नही होते
ये ग़ज़ल का मक़ता (आख़िरी शे'र) है.
और बहर का नाम है "हजज़"
वज़्न है: 1222x4
अँधेरे चन्द लोगों का अगर मक़सद नहीं होते
यहाँ पर अ के उपर चंद्र बिंदू है सो उसे लघु के वज़न में लिया है, जैसा हमने उपर पढ़ा.
"न" हमेशा लघु के वज्न में लिया जाता है.
न भूलो, तुमने ये ऊँचाईयाँ भी हमसे छीनी हैं
1222 1222 1222 1222
यहाँ पर ने" को लघु के वज्न में लिया है.और हमसे को हमस के वज्न में लिया है.
हमारा क़द नहीं लेते तो आदमक़द नहीं होते
इस मिसरे में "तो" को लघु के वज्न में लिया है.
बहुत कुछ सीखने को है , ये इल्म तो एक साग़र है . आप उम्र भर सीखते हैं और शुरु में हमने चर्चा की थी कि शब्द परमात्मा है तो परमात्मा को पाने के लिए हम सब जानते हैं कि गुरु का क्या महत्व है. गुरु के बिना ये विधा सीखना मुश्किल है लेकिन असंभव नहीं. मैं ये इसलिए कह रहा हूँ कि गुरु मिलना भी सबके नसीब मे नहीं होता लेकिन गुरु नहीं है तो हताश होकर लिखना छोड़ देना भी ग़लत है.ये शायरी कोई

गणित नहीं है जो किसी को सिखाई जाए कोई भी इसे सीखकर अगर कहे मैं शायर बन जाऊँगा तो वो धोखे में है, ये तो एक तड़प है जो हर सीने मे नहीं होती. बहरें अपने आप आ जाती हैं जब ख़्याल बेचैन होता है. निरंतर अभ्यास लाज़िम है ,यह नहीं कि आज ग़ज़ल लिखो और सोचो कि कल हम शायर बन जाएंगे तो ग़लत होगा. कितने कच्चे चिट्ठे लिखे जाते हैं फाड़े जाते हैं फिर जाकर कहीं माँ सरस्वती मेहरबान होती हैं. आप इस फ़ाइलातुन से घबराए नहीं. बहरें बनने से पहले भी बहरें थीं वो तो एक ताल है जो शायर के अचेतन मे सोई होती है. जब बहर का पता नहीं था उस वक्त की ग़ज़लें निकाल कर देखता हूँ तो कई ग़ज़लें ऐसी हैं जो बहर मे लिखी गई थी . आज जब बह्र का पता है तो अब पता चल गया यार ये तो इस बहर मे है. कई शायर ऐसे भी हुए हैं जिन्हें इस का इल्म कम था लेकिन उनकी सारी शायरी वज्न मे है. जब ये बहरें सध जाती है तो सब आसान हो जाता है. बस दो चीजें बहुत महत्वपूर्ण हैं मश्क (अभ्यास) और सब्र (धैर्य)

हाय-कु एक परिचय

हाइकु को काव्य-विधा के रूप में प्रतिष्ठा प्रदान की मात्सुओ बाशो (१६४४-१६९४) ने। बाशो के हाथों सँवरकर हाइकु १७वीं शताब्दी में जीवन के दर्शन से अनुप्राणित होकर जापानी कविता की युग-धारा के रूप में प्रस्फुटित हुआ। आज हाइकु जापानी साहित्य की सीमाओं को लाँघकर विश्व-साहित्य की निधि बन चुका है। हाइकु साधना की कविता है। किसी क्षण विशेष की सघन अनुभूति कलात्मक प्रस्तुति हाइकु है। हिंदी साहित्य की अनेकानेक विधाओं में 'हाइकु' नव्यतम विधा है। हाइकु मूलत: जापानी साहित्य की प्रमुख विधा है।आज हिंदी साहित्य में हाइकु की भरपूर चर्चा हो रही है। हिंदी में हाइकु खूब लिखे जा रहे हैं और अनेक पत्र-पत्रिकाएँ इनका प्रकाशन कर रहे हैं। निरंतर हाइकु संग्रह प्रकाशित हो रहे हैं। यदि यह कहा जाए कि वर्तमान की सबसे चर्चित विधा के रूप में हाइकु स्थान लेता जा रहा है तो अत्युक्ति न होगी।

हाइकु सत्रह (१७) अक्षर में लिखी जाने वाली सबसे छोटी कविता है। इसमें तीन पंक्तियाँ रहती हैं। प्रथम पंक्ति में ५ अक्षर, दूसरी में ७ और तीसरी में ५ अक्षर रहते हैं। संयुक्त अक्षर को एक अक्षर गिना जाता है, जैसे 'सुगन्ध' में तीन अक्षर हैं - सु-१, ग-१, न्ध-१) तीनों वाक्य अलग-अलग होने चाहिए। अर्थात एक ही वाक्य को ५,७,५ के क्रम में तोड़कर नहीं लिखना है। बल्कि तीन पूर्ण पंक्तियाँ हों।

हाय कु लेखन एक विधा है, कहते है की कोई व्यक्ति जीवन काल में पांच हाय-कु भी लिख लेता है तो वह महान कवि है |

हाय-कु की हर पंक्ति अपने दूसरी पंक्ति से स्वछन्द होनी चाहिए, हर पंक्ति पूर्ण होनी चाहिए, जैसे किसी कविता का शीर्षक उस कविता का निचोड़ होता है, उसी तरह हाय-कु की हर पंक्ति भावों का निचोड़ है, एक शीर्षक की तरह |

====श्री जगदीश व्योम जी के एक लेख पर आधारित

हाइकू

==लेख उधृत

हिंदी साहित्य की अनेकानेक विधाओं में 'हाइकु' नव्यतम विधा है। हाइकु मूलत: जापानी साहित्य की प्रमुख विधा है। आज हिंदी साहित्य में हाइकु की भरपूर चर्चा हो रही है। हिंदी में हाइकु खूब लिखे जा रहे हैं और अनेक पत्र-पत्रिकाएँ इनका प्रकाशन कर रहे हैं। निरंतर हाइकु संग्रह प्रकाशित हो रहे हैं। यदि यह कहा जाए कि वर्तमान की सबसे चर्चित विधा के रूप में हाइकु स्थान लेता जा रहा है तो अत्युक्ति न होगी।

हाइकु को काव्य-विधा के रूप में प्रतिष्ठा प्रदान की **मात्सुओ बाशो** (१६४४-१६९४) ने। बाशो के हाथों सँवरकर हाइकु १७वीं शताब्दी में जीवन के दर्शन से अनुप्राणित होकर जापानी कविता की युग-धारा के रूप में प्रस्फुटित हुआ। आज हाइकु जापानी साहित्य की सीमाओं को लाँघकर विश्व-साहित्य की निधि बन चुका है।

हाइकु अनुभूति के चरम क्षण की कविता है। सौंदर्यानुभूति अथवा भावानुभूति के चरम क्षण की अवस्था में विचार, चिंतन और निष्कर्ष आदि प्रक्रियाओं का भेद मिट जाता है। यह अनुभूत क्षण प्रत्येक कला के लिए अनिवार्य है। अनुभूति का यह चरम क्षण प्रत्येक हाइकु कवि का लक्ष्य होता है। इस क्षण की जो अनुगूँज हमारी चेतना में उभरती है, उसे जिसने शब्दों में उतार दिया, वह एक सफल हाइकु की रचना में समर्थ हुआ। बाशो ने कहा है, "जिसने जीवन में तीन से पाँच हाइकु रच डाले, वह हाइकु कवि है। जिसने दस हाइकु की रचना कर डाली, वह महाकवि है।"

(प्रो. सत्यभूषण वर्मा, जापानी कविताएँ, पृष्ठ-२२)

हाइकु कविता को भारत में लाने का श्रेय कविवर रवींद्र नाथ ठाकुर को जाता है। "भारतीय भाषाओं में रवींद्रनाथ ठाकुर ने जापान-यात्रा से लौटने के पश्चात १९१९ में 'जापानी-यात्री' में हाइकु की चर्चा करते हुए बंगला में दो कविताओं के अनुवाद प्रस्तुत किए। वे कविताएँ थीं -

पुरोनो पुकुर		पचा डाल
ब्यांगेर लाफ	तथा	एकटा को
जलेर शब्द।		शरत्काल।

दोनों अनुवाद शब्दिक हैं और बाशो की प्रसिद्ध कविताओं के हैं।" (प्रो. सत्यनारायण वर्मा, जापानी कविताएँ, पृष्ठ-२९)

हाइकु कविता आज विश्व की अनेक भाषाओं में लिखी जा रही हैं तथा चर्चित हो रही हैं। प्रत्येक भाषा की अपनी सीमाएँ होती हैं, अपनी वर्ण व्यवस्था होती है और अपना छंद विधान होता है, इसी के अनुरूप उस भाषा के साहित्य की रचना होती है। हिंदी देवनागरी लिपि में लिखी जाती है। यह लिपि वैज्ञानिक लिपि है और (अपवाद को छोड़कर) जो कुछ लिखा जाता है वही पढ़ा जाता है। हाइकु के लिए हिंदी बहुत ही उपयुक्त भाषा है।

हाइकु सत्रह (१७) अक्षर में लिखी जाने वाली सबसे छोटी कविता है। इसमें तीन पंक्तियाँ रहती हैं। प्रथम पंक्ति में ५ अक्षर, दूसरी में ७ और तीसरी में ५ अक्षर रहते हैं। संयुक्त अक्षर को एक अक्षर गिना जाता है, जैसे 'सुगन्ध' में तीन अक्षर हैं - सु-१, ग-१, न्ध-१) तीनों वाक्य अलग-अलग होने चाहिए। अर्थात एक ही वाक्य को ५,७,५ के क्रम में तोड़कर नहीं लिखना है। बल्कि तीन पूर्ण पंक्तियाँ हों।

अनेक हाइकुकार एक ही वाक्य को ५-७-५ वर्ण क्रम में तोड़कर कुछ भी लिख देते हैं और उसे हाइकु कहने लगते हैं। यह सरासर ग़लत है, और हाइकु के नाम पर स्वयं को छलावे में रखना मात्र है। अनेक पत्रिकाएँ ऐसे हाइकुओं को प्रकाशित कर रही हैं। यह इसलिए कि इन पत्रिकाओं के संपादकों को हाइकु की समझ न होने के कारण ऐसा हो रहा है। इससे हाइकु कविता को तो हानि हो ही रही है साथ ही जो अच्छे हाइकु लिख सकते हैं, वे भी काफ़ी समय तक भ्रमित होते रहते हैं।

हाइकु कविता में ५-७-५ का अनुशासन तो रखना ही है, क्योंकि यह नियम शिथिल कर देने से छंद की दृष्टि से अराजकता की स्थिति आ जाएगी। कोई कुछ भी लिखेगा और उसे हाइकु कहने लगेगा। वैसे भी हिंदी में इतने छंद प्रचलित हैं, यदि ५-७-५ में नहीं लिख सकते तो फिर मुक्त छंद में अपनी बात कहिए, क्षणिका के रूप में कहिए

उसे 'हाइकु' ही क्यों कहना चाहते हैं? अर्थात हिंदी हाइकु में ५-७-५ वर्ण का पालन होता रहना चाहिए यही हाइकु के हित में हैं।

अब ५-७-५ वर्ण के अनुशासन का पूरी तरह से पालन किया और कर रहे हैं, परंतु मात्र ५-७-५ वर्णों में कुछ भी ऊल-जलूल कह देने को क्या हाइकु कहा जा सकता है? साहित्य की थोड़ी-सी भी समझ रखने वाला यह जानता है कि किसी भी विधा में लिखी गई कविता की पहली और अनिवार्य शर्त उसमें 'कविता' का होना है। यदि उसमें से कविता ग़ायब है और छंद पूरी तरह से सुरक्षित है तो भला वह छंद किस काम का!

हाइकु साधना की कविता है। किसी क्षण विशेष की सघन अनुभूति कलात्मक प्रस्तुति हाइकु है। प्रो. सत्यभूषण वर्मा के शब्दों में -"आकार की लघुता हाइकु का गुण भी है और यही इसकी सीमा भी। अनुभूति के क्षण की अवधि एक निमिष, एक पल अथवा एक प्रश्वास भी हो सकता है। अत: अभिव्यक्ति की सीमा उतने ही शब्दों तक है जो उस क्षण को उतार पाने के लिए आवश्यक है। हाइकु में एक भी शब्द व्यर्थ नहीं होना चाहिए। हाइकु का प्रत्येक शब्द अपने क्रम में विशिष्ट अर्थ का द्योतक होकर एक समन्वित प्रभाव की सृष्टि में समर्थ होता है। किसी शब्द को उसके स्थान से च्युत कर अन्यत्र रख देने से भाव-बोध नष्ट हो जाएगा। हाइकु का प्रत्येक शब्द एक साक्षात अनुभव है। कविता के अंतिम शब्द तक पहुँचते ही एक पूर्ण बिंब सजीव हो उठता है।" (प्रो. सत्यभूषण वर्मा, जापानी कविताएँ, पृष्ठ-२७)

थोड़े शब्दों में बहुत कुछ कहना आसान नहीं है। हाइकु लिखने के लिए बहुत धैर्य की आवश्यकता है। एक बैठक में थोक के भाव हाइकु नहीं लिखे जाते, हाइकु के नाम पर कबाड़ लिखा जा सकता है। यदि आप वास्तव में हाइकु लिखना चाहते हैं तो हाइकु को समझिए, विचार कीजिए फिर गंभीरता से हाइकु लिखिए। निश्चय ही आप अच्छा हाइकु लिख सकेंगे। यह चिंता न कीजिए कि जल्दी से जल्दी मेरे पास सौ-दो सौ हाइकु हो जाएँ और इन्हें पुस्तक के रूप में प्रकाशित करा लिया जाए। क्योंकि जो हाइकु संग्रह जल्दबाजी में प्रकाशित कराए गए हैं, वे कूड़े के अतिरिक्त भला और क्या है? इसलिए आप धैर्य के साथ लिखते रहिए जब उचित समय आएगा तो संग्रह छप ही जाएगा। यदि आप में इतना धैर्य है तो निश्चय ही आप अच्छे हाइकु लिख सकते हैं। प्राय: यह देखा गया है कि जो गंभीर साहित्यकार हैं वे किसी भी विधा में

लिखें, गंभीरता से ही लिखते हैं। हाइकु के लिए गंभीर चिंतन चाहिए, एकाग्रता चाहिए और अनुभूति को पचाकर उसे अभिव्यक्त करने के लिए पर्याप्त धैर्य चाहिए।

हिंदी साहित्य का एक दुर्भाग्य और है कि अनेक ऐसे लोग घुस आए हैं जिनका कविता या साहित्य से कुछ भी लेना-देना नहीं है। जब हाइकु का नाम ऐसे लोगों ने सुना तो इन्हें सबसे आसान यही लगा, क्योंकि ५-७-५ में कुछ भी कहकर हाइकु कह दिया। अपना पैसा लगाकर हाइकु संग्रह छपवा डाले। यहाँ तक तो ठीक है क्योंकि अपना पैसा लगाकर कोई कुछ भी छपवाए, भला उसे रोकने वाला कौन है। लेकिन जब पास-पड़ोस के नई पीढ़ी के नवोदित हाइकुकारों को उनका सानिध्य मिला तो उन्होंने उन्हें भी अपने साथ उसी कीचड़ में खींच लिया। उनसे भी रातों-रात हज़ारों हाइकु लिखवा डाले और भूमिकाएँ स्वयं लिखकर भूमिका लेखक की अपूर्ण अभिलाषा को तृप्त कर डाला। और हाइकु या अन्य विधा की एक बड़ी संभावना की भ्रूणहत्या कर डाली।

नए हाइकुकारों को ऐसे लोगों से बचने की आवश्यकता है। हाइकु लिखते समय यह देखें कि उसे सुनकर ऐसा लगे कि दृश्य उपस्थित हो गया है, प्रतीक पूरी तरह से खुल रहे हैं, बिंब स्पष्ट है। हाइकु लिखने के बाद आप स्वयं उसे कई बार पढ़िए, यदि आपको अच्छा लगता है तो निश्चय ही वह एक अच्छा हाइकु होगा ही।

हाइकु काव्य का प्रिय विषय प्रकृति रहा है। हाइकु प्रकृति को माध्यम बनाकर मनुष्य की भावनाओं को प्रकट करता है। हिंदी में इस प्रकार के हाइकु लिखे जा रहे हैं। परंतु अधिकांश हिंदी हाइकु में व्यंग्य दिखाई देता है। व्यंग्य हाइकु कविता का विषय नहीं है। परंतु जापान में भी व्यंग्य परक काव्य लिखा जाता है। क्योंकि व्यंग्य मनुष्य के दैनिक जीवन से अलग नहीं है। जापान में इसे हाइकु न कहकर 'सेन्र्यू' कहा जाता है। हिंदी कविता में व्यंग्य की उपस्थिति सदैव से रही है। इसलिए इसे हाइकु से अलग रखा जाना बहुत कठिन है। इस संदर्भ में कमलेश भट्ट 'कमल' का विचार उचित प्रतीत होता है "हिंदी में हाइकु और 'सेन्र्यू' के एकीकरण का मुद्दा भी बीच-बीच में बहस के केंद्र में आता रहता है। लेकिन वस्तुस्थिति यह है कि हिंदी में हाइकु और 'सेन्र्यू' दोनों विधाएँ हाइकु के रूप में ही एकाकार हो चुकी है और यह स्थिति बनी रहे यही हाइकु विधा के हित में होगा। क्योंकि जापानी 'सेन्र्यू' को हल्के-फुल्के अंदाज़ वाली रचना माना जाता है और हिंदी में ऐसी रचनाएँ हास्य-व्यंग्य के रूप में प्राय:

मान्यता प्राप्त कर चुकी हैं। अत: हिंदी में केवल शिल्प के आधार पर 'सेन्र्यू' को अलग से कोई पहचान मिल पाएगी, इसमें संदेह है। फिर वर्ण्य विषय के आधार पर हाइकु को वर्गीकृत/विभक्त करना हिंदी में संभव नहीं लग रहा है। क्योंकि जापानी हाइकु में प्रकृति के एक महत्वपूर्ण तत्व होते हुए भी हिंदी हाइकु में उसकी अनिवार्यता का बंधन सर्वस्वीकृत नहीं हो पाया है। हिंदी कविता में विषयों की इतनी विविधता है कि उसके चलते यहाँ हाइकु का वर्ण्य विषय बहुत-बहुत व्यापक है। जो कुछ भी हिंदी कविता में हैं, वह सबकुछ हाइकु में भी आ रहा है। संभवत: इसी प्रवृत्ति के चलते हिंदी की हाइकु कविता कहीं से विजातीय नहीं लगती।" (कमलेश भट्ट कमल, 'हिंदी हाइकु : इतिहास और उपलब्धि' - संपादक- डॉ. रामनारायण पटेल 'राम' पृष्ठ-४२)

हिंदी में हाइकु को गंभीरता के साथ लेने वालों और हाइकुकारों की लंबी सूची है। इनमें प्रोफेसर सत्यभूषण वर्मा का नाम अग्रणी हैं। डॉ. वर्मा ने हाइकु को हिंदी में विशेष पहचान दिलाई है। वे पूरी तत्परता के साथ इस अभियान में जुड़े हुए हैं। कमलेश भट्ट 'कमल' ने हाइकु-१९८९ तथा हाइकु-१९९९ का संपादन किया जो हाइकु के क्षेत्र में अति महत्वपूर्ण कार्य माना जाता है। डॉ. भगवत शरण अग्रवाल हाइकु भारती पत्रिका का संपादन कर रहे हैं और हाइकु पर गंभीर कार्य कर रहे हैं। प्रो. आदित्य प्रताप सिंह हाइकु को लेकर काफ़ी गंभीर हैं और हिंदी हाइकु की स्थिति को सुधारने की दिशा में चिंतित हैं। उनके अनेक लेख प्रकाशित हो चुके हैं। हाइकु दर्पण पत्रिका का संपादन डॉ. जगदीश व्योम कर रहे हैं, यह पत्रिका हाइकु की महत्वपूर्ण पत्रिका है। डॉ. रामनारायण पटेल 'राम' ने 'हिंदी हाइकु : इतिहास और उपलब्धियाँ' पुस्तक का संपादन किया है। इस पुस्तक में हाइकु पर अनेक गंभीर लेख हैं। लखनऊ विश्वविद्यालय से करुणेश भट्ट ने हाइकु पर शोधकार्य किया है। हाइकुकारों में इस समय लगभग २०० से भी अधिक हाइकुकार हैं जो गंभीरता के साथ हाइकु लिख रहे हैं। यह संख्या निरंतर बढ़ती जा रही है।

जिन हाइकुकारों के हाइकु प्राय: चर्चा में रहते हैं उनमें प्रमुख हैं - डॉ. सुधा गुप्ता, डॉ. शैल रस्तोगी, कमलेश भट्ट 'कमल', पारस दासोत, डॉ. रमाकांत श्रीवास्तव, डॉ. आदित्य प्रताप सिंह, डॉ. गोपाल बाबू शर्मा, डॉ. राजन जयपुरिया, डॉ. सुरेंद्र वर्मा, डॉ. जगदीश व्योम, नीलमेन्दु सागर, रामनिवास पंथी आदि हैं।

कुछ हाइकु जो काव्य की दृष्टि से अपने अंतस में बहुत कुछ समाहित किए हुए हैं, दृष्टव्य हैं। डॉ. सुधा गुप्ता हाइकु में पूरा दृश्य उपस्थित कर देती हैं -

माघ बेचारा
कोहरे की गठरी
उठाए फिरे।

शैतान बच्ची
मौलसिरी के पेड़
चढ़ी है धूप।

चिड़िया रानी
चार कनी बाजरा
दो घूँट पानी।

कमलेश भट्ट 'कमल' के हायकु पूरी तरह से खुलते हैं और अपना प्रभाव छोड़ते हैं-

फूल सी पली
ससुराल में बहू
फूस सी जली।

कौन मानेगा
सबसे कठिन है
सरल होना।

प्रकृति के किसी क्षण को देखकर उसका मानवीकरण डॉ. शैल रस्तोगी ने कितनी कुशलता से किया है -

कमर बंधी
मुंगे की करघनी
पारी है उषा

गौरैया ढूंढें
अपना नन्हा छौना
धुल धिठौना

मैया री मैया
पहुना मेघ आये
कहाँ बिठाऊं

रूप निहारे
मुग्धा नायिका झील
चाँद कंदील

निरंतर छीजती जा रही लोक संस्कृति और उजड़ते जा रहे ग्राम्य संस्कृति को लेकर भी हाइकुकार चिंतित हैं। डॉ. गोपालबाबू शर्मा के शब्दों में-

तपती छाँव
पनघट उदास
कहाँ वे गाँव?

अब तो भूले
फाग, राग, कजरी
मल्हार, झूले।

वर्तमान समय में धैर्य के साथ-साथ साहस की भी आवश्यकता है और एकाकीपन व्यक्ति को दार्शनिक चिंतन की ओर ले जाता है- इन भावों को व्यक्त करते हैं निम्नलिखित हाइकु

नभ की पर्त
चीर गई चिड़िया
देखा साहस। -मदनमोहन उपेंद्र

साँझ की बेला
पंछी ऋचा सुनाते
मैं हूँ अकेला! -रामेश्वर कांबोज 'हिमांशु'

युद्ध की विभीषिका कितनी भयावह होती है इसे भुक्तभोगी ही जानते हैं। प्रकृति के प्रकोप को भी व्यक्ति करना असंभव है। व्यक्ति को सँभलने का अवसर ही नहीं मिलता, चाहे वह गुजरात का भूकंप हो या त्सुनामी लहरों का कहर। लेकिन व्यक्ति को जीना तो होगा ही, और जीने का हौसला भी रखना होगा। भले ही सब कुछ उजड़ जाए मगर जब तक लोक हैं, लोकतत्व हैं तब तक आशा रखनी है। दूब (दूब घास) लोक जीवन का प्रतीक है। अकाल के समय जब सब कुछ मिट जाता है तब भी दूब रहती है। यह जीवन का संकेत है। इन्ही भावो को व्यक्त करते हैं डॉ. जगदीश व्योम के ये हाइकु-

छिड़ा जो युद्ध
रोएगी मनुजता
हँसेंगे गिद्ध।

निगल गई
सदियों का सृजन
पल में धरा।

क्यों तू उदास
दूब अभी है ज़िंदा
पिक कूकेगा।

कमल किशोर गोयनका के एक हाइकु में इन विचारों को बड़ी सुंदर अभिवयक्ति मिली है कि युद्ध के विनाशक वक्त गुज़रने के बाद भी भय और त्रासदी की छाया बहुत समय तक उस क्षेत्र पर छायी रहती है। भावी पीढ़ियाँ भी इससे प्रभावित होती हैं। वहीं दूसरी ओर कमलेश भट्ट कमल एक छोटे से हाइकु में कहते हैं कि झूठ कितना ही प्रबल क्यों न हो एक न एक दिन उसे सत्य के समक्ष पराजित होना ही होता है। यही सत्य है। यह भाव हमारे अंदर झूठ से संघर्ष करने की अपरिमित ऊर्जा का सृजन करता है। युवा वर्ग में बहुत कुछ करने का सामर्थ्य है आवश्यकता है तो उन्हें प्रेरित करने की, उन्हें उनकी शक्ति का आभास कराने की। इन्हीं भावों से भरी युवा वर्ग का आवाहन करती पंक्तियाँ है पारस दासोत की। ये तीनो हाइकु देखें-

कोपल जन्मी/ डरी डरी सहमी/ हिरोशिमा में -----कमल किशोर गोयनका

तोड़ देता है / झूठ के पहाड़ को/ राइ सा सच ----कमलेश भट्ट 'कमल'

है जवान तू / भागीरथ भी है तू / चल ला गंगा ---परस दासोत

५-७-५ विधा के विभिन्न रूप

=सुरेश चौधरी

उपरोक्त दो आलेखों से विस्तृत जानकारी मिल गयी होगी ५-७-५ विधा के बारे में, ५-७-५ अथार्थ तीन पंक्तियाँ प्रत्येक पंक्ति एक दुसरे से स्वतंत्र हर पंक्ति अपने में पूर्ण , मुख्यतः प्रकृति से सम्बंधित , शब्दों में भावों का प्रेषण ऐसा हो की सीधे गोली सा लगे, ज्यूँ किसी रचना का शीर्षक ही रचना के बारे में बता देता है वैसे ही ये १७ अक्षर ही पूरी कविता को चरितार्थ कर देते है.जापानी में इन ५-७-५ अक्षरों से कई प्रयोग किये गए जो बहुतायत से चलन में हैं उनके बारे में संक्षिप्त में कुछ जानकारी दे रहा हूँ :

हायगा: यह बिकुल हाइकू की तरह है बस किसी पूर्व में सोचे गए चित्र पर यह लिखा जाता है जैसे किसी पर्वत का चित्र है तो कवि के मन में क्या विचार आएंगे उसे चित्रित करते हुए इसे लिखा जाता है |

तांका : यह ५ पंक्तियों में लिखा जाता है पहली तीन पंक्तियाँ सामान्य हाइकू की तरह होती है चौथी-पांचवी पंक्ति ७-७ अक्षरों की होती है, कहते हैं की जापान में एक रचनाकार हाइकू लिख देता था फिर दूसरा रचनाकार चौथी पंक्ति लिख कर उस पर प्रश्न खड़ा करता था तब पहला रचनाकार पांचवी पंक्ति में उसका उत्तर देता था, इस प्रकार यह प्रचालन चला | उदहारण देखिये :

एकाग्र चित बदलती दिशाएं उड़ान ऊँची दे धोखा हर बार समग्र व्यवहार	कल्पना भारी आश्चर्य ही आश्चर्य मित्र बंधन कुछ कर न सके कुछ भर न सके	प्यारी जिंदगी सबको अच्छी लगे तुम हो पास संग संग हो नृत्य जीवन का है सत्य

सदोका : जब सामान्य हाइकू को पुनः विस्तार दिया जय और ६ पंक्तियों में लिखा जय तो सदोका कहलाता है , इसमें पंक्तियों में अक्षरों का गठन ५-७-७-५-७-७ होता है अथार्थ कुल ३८ वर्ण सदोका की खूबसूरती इसके वर्ण विन्यास में है भाव कहीं छूटने नहीं पाए इसका विशेष ध्यान रखा जाता है . उदहारण देखिये :

गाँधी सुभाष अमन का विश्वास नौजवानों की आस दीपक जले आलोक मय देश प्रगति हो विशेष	तिरंगा प्यारा राष्ट्र व्यथा भुला के अपनो को मिलाके हर्षित देश ऊँचा रहे मस्तक लो चलें नभ तक

चौका : यह ५-७-५ विधा में लिखी गयी लम्बी कविता होती है कविता में ध्यान रखना पड़ता है की प्रत्येक पंक्ति पूर्ण हो तोड़ तोड़ कर न लिखी गयी हो , इसमें वर्ण विन्यास कुछ इस तरह होता है , ५-७-५-७-५...............................७-७. अथार्थ अंत में दो पंक्तिया ७-७ वर्ण की होनी चाहिए, तुक की कोई बंदिश नहीं है पर तुक होने से कविता में निखार आया जाता है , उदहारण :

चांदनी रात
मेघ माला रचित
चपला घात
श्यामव्योम गहन
शम्पा निपात
पावस ऋतु आई
भीगा प्रभात
मयूरादि नर्तन
हरित पात
सुरभित अवनि
जल प्रपात
नदी ले अंगड़ाई
है अकस्मात
कृषक चले खेत
आनंद प्राप्त
प्रेम भी आत्मसात
प्रेयसी की भी बात

अंत में ....

प्रस्तुत पुस्तक में मैंने हिंदी कविताओं के विभिन्न आयामों को परिभाषित करने का प्रयत्न किया है, इसमें आज कल जो नवगीत, गद्यगीत, छंदमुक्त, अतुकांत कवितायेँ चल रही हैं उनके पहलुओं को संक्षिप्त में ही छुआ, इन कविताओं में कोई निश्चित विधा नहीं होती परन्तु भाव प्रमुख होते है ,पढ़ कर ऐसा नहीं लगाना चाहिए की सपाट बयानी हो रही है, बल्कि कहन में भी एक लयात्मक प्रतीति होनी चाहिए | कविता ह्रदय से निकली रचना है जो लय, यति, गति के अश्व पर सवार बुद्धि को धारण कर निकलती है, ...

मैं उन महान छंद विशेषज्ञों का आभार प्रकट करना चाहूँगा जिनके आलेख मैंने यहाँ उद्धृत किये हैं, श्री ॐ नीरव जी, श्री सौरभ पाण्डेय जी, आचार्य संजीव कृष्ण सलिल जी, श्री अम्बरीश श्रीवास्तव जी, इत्यादि और वे भी जिनकी रचनाएँ मैंने उदहारण के तौर पर प्रयुक्त की हैं. आलेख जो मेरे द्वारा लिखे हैं वे पुर्णतः गूगल से या विभिन्न पुस्तकों को पढ़ कर उनको आधार मान कर लिखा गया है, कोई त्रुटी हो तो अग्रिम क्षमा प्रति हूँ, एवं मार्ग दर्शन का अपेक्षित ताकि अगले अंक में सुधार संभव हो सके, मैं उन सभी मित्रों का धन्यवाद देना चाहूँगा जिन्होंने इस पुस्तक में मेरा संबल बढाया, आदरणीया रमा द्विवेदी जी, आदरणीया दीपिका द्विवेदी जी, कुमार अजीतेंदु, व् अन्य कई मित्र गण.

आपका

सुरेश चौधरी "इंदु"

सन्दर्भ सूचि :

८ मात्रा के वासव जातीय छंद :६४
अखंड छंद ६८
अगणात्मक ५० ५१
अनंग शेखर १७७,१७९
अनुनासिक एवं अनुस्वार उच्चार : ४१
अनुष्टप : ८,५३,
अपदान्त गीतिका १८०
अरविन्द ११०,१२२
अरुज २०१
अर्द्धसममात्रिकछंद:१८, ३७,१०३,१०४,१७९
अष्ट मात्रिक ६५
अष्टक छंद ६७
अष्टांग छंद ६७
अहिवर ७६
आनंद वर्धक ८४
आल्हा छंद ८११०३,१५५,
इंद्रवज्रा २१५५
उच्चार :३८,
उड़ियाना छंद ९७
उदर ७७
उपेंद्रवज्रा ५५

उल्लाल १७२
उल्लाला ५२,१७०,१७१,१७२,
कच्छप ७६
कबीर छंद ८१,१०१,
करभ ७५
करीब १९८,२०४
कविता या काव्य क्या है १३.
कविता या काव्य मुख्य रूप से तीन प्रकार के होते हैं :११,
कवित्त १४,१०८,१३१,१३५
क़ाफ़िया १८९-१९४,२०५
कामिल १९६,२०४
काव्य के भेद ५,१३,
कुंडल ९७
कुकुभ छंद, ८१, १०२१६४,
कुण्डलिनी १०६,१०७
कुण्डलिया ९३,१०५,१०६,१०७,१४९-५२
कृपाण १४१
कृष्ण यजुर्वेद ३४
खण्डकाव्य,११,१४,
खफीफ १९८,२०४
गंगोदक ११०,१२६,१२७

गगनांगना छंद ८१,१००,
गण: २०,४३,६४
गणात्मक ५०
गद्य,५,६,८,११,१५,१६,३४,३५,३७,२१९,
गयंद ७५
गीतका और उर्दू ग़ज़ल में भिन्नताएँ १८४
गीता ८८
गीतांजलि ३४
गीतिका ८८,१६८,१७०,
गीतिका काव्य १८०
गीतिकाव्य १२,
घनाक्षरी ५०,१०८,१३१,१३२,१३३,१३५-१४१
चकोर ११०,१२०
चम्पू , ११,१५,
चौकल ९२
चौका २१८
चौपई ८१,९४,१३०,१५३,१५४
चौपाई २३,५०,५३,५८,५९,६०,७८,७९,८०,८१,८२,९३,९४,१०१,१३०,१५३,
चौपाई आधारित छंद
चौपैया ६०

छंद 'कामरूप' १६१
छंद के अंग ४२
छंद के भेद:१७,
छंद लक्षण और उदाहरण २१
छंद शास्त्र : ८,८,४४,१७२
छंद की प्रेरणा कहां से मिली ?. १०,
छंद शास्त्र के आचार्य,१०
छन्न पकैया १६२,१६३,१६४
छवि ६९
जदीद १९८,२०४
जनहरण १३९
जयकरी छंद ९४
जलहरण १३२,१३९
जाति ६५
डमरू १४०
तवील १९८,२०४
तांका २१७
ताटंक छंद ८१,१०२,१५९,१६०
तुक: २०,२५,४३,५८,५९,६१,६२,६३,७८,१२१,१४४,१४६,१५०,१५७,१७४,१७९,१८४,१९१,२१८,
तोटक ६२
तोमर ६२

त्रिकल ७६
त्रिकल ९२
त्रिभङ्गी ६०,६१,१०३,१६२,१७३,१७४,१७५
दग्धाक्षर६५
दशाक्षर ६५
दिगपाल ८७
दीर्घ ४४
दुर्मिल २३,११०,११३,११७,१२२,१२४
दृश्य ,११,१३,१४,१५,३१,२१२,२१४,
दोहा १४,२४,३९,४०,४२,४३,५०,५२,५३,५८,५९,६०,७०,७१,७२,७३,७४,८०,९२,९३,९९,१०१,१०३,१०५,१०६,१४८,१४९,१५०,१५१,१७०,१७१,१७२
दोहा के प्रकार
द्रुतविलंबित २२
द्विकल ९२
धारावाही छंद ६८
नर ७५
निश्चल छंद ८१,९८,
पञ्च चामर १७७,१७८

पद ६४
पदपादाकुलक ८२,९४,९५,१२९,१३०
पद्य ११,१२,१५,२०,२२,२३,३४,३५,३७,४०,६५,१४७,१७६
पयोधर ७५
पर्यवरनी छंद ६७
पाद ४२
पान ७६
पिंगल :३,८, ९, १०,१६,३२,३७,१०१,१७४,२०१
पियूष वर्ष ८४
प्रत्यय ६५
प्रबंध काव्य १४,३२,७३
प्रमाणिका ५५.५६.१७७.
प्लुत ४४
फयलातुन १९७
फहल १९७
फैलुन १९७
बल ७५
बसित १९८,२०४
बहर १५९,१६१,१८४,१९४,१९८,१९९-२०१,२०३,२०५-२०७
बिहारी चाँद ८६

बीर छंद ८१,१०३
भाषा ३,५,१३,१६,२८,३१,३५,३७, ३८,४२,४४,४९,५४,५८,६४,७२,७४,१०८,१३५,१८४,१८५, १८९,१९३,१९५,१९९,२००,२०९,२१०
भुजंगप्रयाति": ८,९,५७
भ्रमर,७४
मंडूक ७४
मंदारमाला ११०,१२७
मक्ता १८४,१८७-१९०
मच्छ ७६
मजारे २०४
मतला १८४,१८७,१८८,१८९.१९०.२०५.२०६
'मत्त सवैया' १२९
मत्तगयंद २३,११२,११६,११९,
मत्सवैया ९५,९६
मदन ९९,१६५,१७९,
मदनावतारी १७९
मदिरा २३,११०, ११२,११४,१२०,
मदीद १९८,२०४
मधुभार ६९
मधुमालती ८३

मनहरण १३२,१३५,१३६,१३८,
मनोरम ८३
मन्दाक्रान्ता २२
मर्कट ७५
मलयज ६६
महाकाव्य,११,१२,१४,७३,
महाभुजंगप्रयात ११०.१२८.
मात्रा: १८,३९,४२,४५,
मात्रिक छंद १७,१८,१९,२३,२५,५०,५१,५९,६४,६५,८२,९३,१४८,१५३, १५६,१६२,१६८,१७२
मात्सुओ बाशो २०८,२०९
मानव छंद ९३
मालिनी ५६
मिश्र गीतिका ८९
मिसरा-ये-उला १८८,१९०
मिसरा-ये-सानी १८८
मुक़ातज़ेब १९८,२०४
मुक्तक ५,११,१२,१३,१४,३०,३१,३२ ,३३,७२,७३,१०८,१३८,१८७,
मुक्तक के प्रकार ३२
मुक्तजिब १९७
मुक्तहरा १२१
मुक्तामणि ९९

मुखड़ा १८०,१८३,१८४
मुजारिअ १९७
मुज्तास १९८,२०४
मुतकारिब १९६,२०३
मुतदारिक १९६
मुनसिरह १९७
मुफाईलु १९७
मुफाईलुन १९७
मुफाय लून १९७
मुफैलून ,१९७
मुशाकिल २०४
मुशालातुन १९८
मुस्त्ररेह २०४
मूल बहरें- १९५
मृदु गति ८७
यति और गति १९,४२,
यमाताराजभानसलगा' २०,४३,
रजज १९६,२०४,
रथोद्धता ५७,
रदीफ १८७,१८९,१९१-१९४
रमल २०४
'राधेश्यामी छंद' ८२,९५,९६,१२९
रायकृष्णदास ३४,
रास छंद ८१,९७
रास छंद ९७
रुक्न -१९५,१९७,२०३,

रुबाई २०५
रूप घनाक्षरी १३२,१३८
रूपमाला ९९,१६१,१६५,१६७,१६८,१७९,
रोला २४,५२,९३,९८,९९,१०५,१०६,१४८,१४९,१५०,१५१,१५२,१६५
लघु-गुरु,२०,२३,४४,४५,५०,५५,५९,६२,६५,६७,१३१,१३२,१३५,१३६,१६०,१६३,१६८,१७१
लय ६५
लावणी छंद ८१,१०२
वंशस्थ ५४
वर्ण ४२,६४
वसंत तिलिका ५४
वाचिक ८२,८३,८४,९२,९८,९९,१०३,१०४,१०५,१०६,१८२
वाफिर १९६,२०४
वाम ११०,११८,११९,
वार्णिक, १७,१८,२०,२१,४४,५०,५३,१७६,१७७,
वासव ६५,६६,

विजया १४०
विजात ८३
विडाल ७७
विधाता ८९
विशिष्ट (अन्तस्थ) स्वर व्यंजन :३९.
विषम मात्रिक छंद: १९.३७.७८,९३,१०५,१०६
विष्णुपद छंद ८१,१००
वृत ६५,११०,११७,१२१,१२२,१२७,१२८,१५०,१६९,
व्याल ७६
शंकर छंद, ८१,१००
शक्ति ८४
शक्ति छंद १६०,१६१
शब्द ६४
शरभ७४
शार्दुल ७६
शार्दूल्विक्रीड़ित २२,५३
शास्त्र छंद ८६
शुद्ध गीता ८८
शेर १८४,१८७-१९४,१९८,१९९
श्येन७४
श्रव्य, ११,१३,१४,
श्रीगीतिका ८९

श्रृंगार छंद ९६
श्वान ७७
संस्कृत से काव्य शास्त्र का निरूपण, ११,
सगुण ८५
सदोका २१८
सममात्रिक छंद १८,२३,२८,
समवार्णिक छंद १८,२१,
समुन्दर छंद १०१
सरसी ८१,१०१,
सरीअ १९७,२०४
सर्प ७७
सवैया २३,
सवैया के प्रकार
सार छंद, ८१,१०१
सारस ८७
सिन्धु छंद ८६
सुख ११०,१२३,१२४,१२५
सुन्दरी ११०,११७,१२२,
सुभ्रमर७४
सुमुखि ११०,११४,११५,१२१
सुमेरु ८५
सूर१४१
सोरठा २५, ५२, ५३, ५८,५९,६०,९३,९९.१०४,१०५,
स्त्रग्धरा ५६

स्वतंत्र छंद और मिश्रित छंद: ५२	हाइकू १८६,२०९,२१७,२१८,
हंस ७५	हाकलि छंद ९३
हज़ज़ १९५,१९८,२०४	हायगा २१७
हरिगीतिका२३,५३,५४,५९,६०, ९०,१५६,१५७,१५९,१६८	ह्रस्व ४४
हरिहरण १४१	